आश्चर्य-घटना

अर्थात्

श्रीरवीन्द्रनाथ ठाकुर-लिखित
"नौका डूबी" का हिन्दी-अनुवाद

सामाजिक उपन्यास

अनुवादक
श्रीजनार्दन झा

प्रकाशक
इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग

१९३८

४)

आश्चर्य-घटना

पहला परिच्छेद

रमेश इस दफ़े क़ानून के इम्तहान में पास होगा, इसमें किसी को रत्ती भर भी सन्देह न था। कलकत्ते के विश्वविद्यालय से वह बराबर स्वर्णपदक पाता आया है। स्कालर्शिप तो मानों उसी के हिस्से में पड़ा था।

इम्तहान के बाद वह घर जानेवाला था। परन्तु अब भी उसका कोई लक्षण घर जाने का दिखाई नहीं देता। पहले जब वह घर जाता था तब दो-चार दिन पहले ही से जाने की तैयारी करता था। इससे जान पड़ता है, अभी वह घर न जायगा। शायद अब उसका जी घर जाने को नहीं चाहता। पिता ने उसे शीघ्र घर आने के लिए चिट्ठी लिखी है। उसके उत्तर में रमेश ने लिखा है—परीक्षा का फल प्रकाशित होने पर घर आऊँगा।

घनानन्द बाबू का लड़का योगेन्द्र रमेश का सहपाठी था। उसके घर के पास ही रमेश रहता था। घनानन्द बाबू ब्राह्म थे। उनकी बेटी नलिनी ने इस साल एफ़० ए० की परीक्षा दी है। घनानन्द बाबू के यहाँ रमेश कार्यवश या यों भी कभी-कभी जाता था। जब नलिनी स्नान करके बाल सुखाने के लिए छत

पर जाती थी और घूम-फिरकर अपना सबक़ याद करतीं थी तब रमेश भी अपने कोठे की छत के ऊपरवाले कमरे में पुस्तक लेकर बैठता था। पढ़ने के लिए वह स्थान निःसन्देह एकान्त था, किन्तु ज़रा सोचकर देखने से मालूम हो सकता है कि वहाँ व्याघात भी कुछ कम न था।

उन दोनों के विवाह के सम्बन्ध में अभी तक किसी ओर से कुछ बात-चीत न हुई थी। घनानन्द बाबू की ओर से न होने का एक कारण था। वह यह कि एक लड़का बैरिस्टरी पास करने विलायत गया था। उसी पर घनानन्द बाबू का विशेष लक्ष्य था।

एक दिन घनानन्द बाबू की बैठक में चाय पीते समय आपस में ख़ूब बहस हुई। अक्षयकुमार ने यद्यपि कोई विशेष परीक्षा पास न की थी तथापि उस समय के परीक्षोत्तीर्ण विद्यार्थियों की अपेक्षा उसे चाय पीने की अथवा और ढँग की तृषा कुछ कम न थी। इसलिए नलिनी की चाय-टेबल के पास कभी-कभी वह भी दिखाई देता था। उसने यह विवाद उठाया था कि पुरुष की बुद्धि तलवार की तरह होती है। तेज़ धार न होने पर भी वह वज़न और झटके से बहुत काम कर सकती है। किन्तु स्त्री की बुद्धि क़लम-तराश छुरी के सदृश होती है, उस पर कितनी ही धार क्यों न चढ़ाई जाय, उससे कोई बड़ा काम नहीं हो सकता, इत्यादि। नलिनी अक्षयकुमार की इस प्रगल्भता को, इस स्वार्थ-वाद को, उपेक्षाबुद्धि से चुपचाप सुन रही थी। स्त्री क्षुद्रबुद्धि होती है, इस बात को सिद्ध करने

लिए उसके ज्येष्ठ भाई योगेन्द्र ने भी अनेक युक्तियाँ निकालीं। रमेश इतनी देर तक उन दोनों की बातें चुपचाप सुन रहा था। अब उससे न रहा गया। वह उत्तेजित होकर स्त्री-जाति की प्रशंसा करने लगा।

इस प्रकार रमेश जब स्त्री-जाति का गुण गाता हुआ उत्साह से और दिनों की अपेक्षा दो प्याले चाय अधिक पी गया तब वह शक्ति की उपासना में निमग्न होकर विशेष सुख का अनुभव करने लगा। इसी समय नौकर ने उसे एक पर्चा दिया। उस पर उसके पिता के हाथ का लिखा उसका नाम था। चिट्ठी पढ़ते ही वह वाद-विवाद करना छोड़ बड़ी घबराहट के साथ उठ खड़ा हुआ। सबने पूछा—क्या समाचार है?

रमेश ने कहा—"पिताजी आये हैं।" नलिनी ने योगेन्द्र से कहा—भाई! रमेश बाबू के पिता को यहीं क्यों नहीं बुला लेते? यहाँ चाय-पानी सब तैयार है।

रमेश ने कहा—नहीं, आज माफ़ करो। मैं जाता हूँ।

रमेश को जाते देख अक्षयकुमार यह सोचकर मन ही मन ख़ुश हुआ कि शायद उसके पिता को यहाँ का रहना या इनके यहाँ का खाना-पीना मञ्ज़ूर नहीं है।

रमेश के पिता व्रजमोहन बाबू ने रमेश से कहा—कल सबेरे की गाड़ी से देश चलना होगा।

रमेश ने सिर खुजलाकर पूछा—क्या कोई ज़रूरी काम है?

व्रजमोहन—इतना ज़रूरी तो नहीं है।

तो इतनी ताकीद क्यों? यह सुनने के लिए रमेश पिता का मुँह देखने लगा। पर उन्होंने उसके मानसिक प्रश्न का कुछ उत्तर देना आवश्यक न समझा। इससे उसके मन का कुतूहल ज्यों का त्यों बना रहा।

व्रजमोहन बाबू साँझ को जब अपने कलकत्ते के बन्धु-बान्धवों से मुलाक़ात करने गये तब रमेश उनको एक पत्र लिखने बैठा। "श्रीचरणकमलेषु" इतना लिखकर वह आगे कुछ न लिख सका। बड़ी देर तक सोच-विचारकर उसने मन में कहा—"मैं नलिनी के विषय में जो दृढ़ संकल्प कर चुका हूँ वह अब पिताजी से छिपाना किसी तरह उचित नहीं।" उसने इस भाव के अनेक पत्र अनेक प्रकार से लिखे। अन्त में उसने सभी को फाड़ डाला।

व्रजमोहन भोजन करके सो गये। रमेश कोठे की छत पर जाकर, पड़ोसी के घर की ओर देखता हुआ, निशाचर की भाँति जल्दी-जल्दी टहलने लगा।

रात के नौ बजे अक्षयकुमार घनानन्द बाबू के यहाँ से अपने घर को गया। साढ़े नौ बजे उनका फाटक बन्द हुआ। दस बजे घनानन्द बाबू के कमरे की रोशनी बुझ गई। ग्यारह बजते-बजते उनके घर के सब लोग गाढ़ निद्रा में निमग्न हो गये।

दूसरे दिन सबेरे की गाड़ी से रमेश को जाना ही पड़ा। व्रजमोहन बाबू की सावधानी से गाड़ी फ़ेल हो जाने का कोई सुअवसर उसके हाथ न आया।

दूसरा परिच्छेद

रमेश ने घर जाकर सुना कि उसके ब्याह की बातचीत पक्की हो गई है। लड़की का भी निबन्धन हो गया है और विवाह की तिथि भी नियत हो चुकी है। उसके पिता व्रजमोहन बाबू के बाल्यसखा ईशानचन्द्र जब वकालत करते थे तब व्रजमोहन की हालत अच्छी न थी। ईशानचन्द्र की सहायता से ही उनकी दशा सुधरी और वे अपनी उन्नति करने में समर्थ हुए। उनके सहायक ईशान बाबू जब अकाल में ही काल-कवलित हो गये तब देखा गया कि उनके पास कुछ जमा न था; बल्कि वे देनदार थे। उनकी विधवा स्त्री एक छोटी सी बालिका को लेकर दुःखसागर में निमग्न हुई। वह बालिका अब ब्याहने योग्य हुई है। व्रजमोहन ने उसी के साथ रमेश के ब्याह की बातचीत ठीक की है। रमेश के शुभचिन्तकों में किसी-किसी ने यह आपत्ति की कि लड़की देखने में वैसी ख़ूबसूरत नहीं है।

व्रजमोहन ने यही उत्तर दिया कि उन बातों पर हम विशेष ध्यान नहीं देते। मनुष्य फूल तो हई नहीं कि सबसे पहले उसकी ख़ूबसूरती ही का विचार किया जाय। लड़की की मा जैसी सुशीला और सती है, वैसी ही यदि लड़की भी हो तो रमेश का भाग्य समझना चाहिए।

लोगों के मुँह से अपना ब्याह होने की बात सुनकर रमेश का मुँह पीला पड़ गया। वह बड़ी उदासी के साथ जिधर-तिधर घूमने लगा। उसके चित्त से शान्ति का साम्राज्य उठ गया। उसने इस बन्धन से छुटकारा पाने के अनेक उपाय सोचे, पर एक भी ऐसा युक्तियुक्त न निकला जिससे वह अपना काम सिद्ध कर सकता। आख़िर उसने लज्जा को तिलाञ्जलि दे, बड़े कष्ट से, पिता के पास जाकर कहा—यह ब्याह मेरे लिए असाध्य है। मैं दूसरी जगह प्रतिज्ञा-बद्ध हो चुका हूँ।

ब्रजमोहन—क्या कहा? क्या दूसरी जगह सब बातें तय हो चुकी हैं?

रमेश—सब बातें तो नहीं, पर—

ब्रजमोहन—पर क्या?

रमेश—जिस तरह से ब्याह की बातचीत होती है उस तरह से तो अभी कुछ नहीं हुआ।

ब्रजमोहन—कुछ नहीं हुआ है? तुम जब इतने दिन से चुप बैठे रहे तब दो-चार दिन और सही।

रमेश कुछ देर तक चुप रहा। फिर उसने धीरे से कहा—अब दूसरी कुमारिका के साथ ब्याह करना मेरे पक्ष में अन्याय होगा।

ब्रजमोहन—यह विवाह न करोगे तो तुम्हारे लिए भारी अन्याय होगा। मा-बाप की बात न मानने से बढ़कर और क्या अन्याय हो सकता है?

रमेश इस पर कुछ न बोला। वह सोचने लगा, अभी समय बहुत है, देखा जायगा। परमेश्वर चाहेगा तो सब गड़बड़ हो जायगा।

रमेश के ब्याह का जो दिन नियत हुआ था उसके अगले साल विवाह का लगन न था। उसने सोचा, किसी तरह यह दिन टल जाय तो फिर मेरे ब्याह का समय एक साल आगे बढ़ जायगा।

आखिर रमेश के मन की सोची हुई एक बात भी न हुई। उसके ब्याह का मुहूर्त्त किसी तरह न टला।

शादी के लिए जल-पथ से जाने का विचार हुआ। श्यामपुर व्रजमोहन के गाँव से दूर था। छोटी-बड़ी कई नदियाँ पार करके जाने में कम से कम तीन दिन लगेंगे—यह सोचकर व्रजमोहन ने, आकस्मिक घटना के लिए पूरा अवकाश छोड़कर, एक सप्ताह पूर्व ही शुभ दिन में यात्रा की।

वायु अनुकूल था। इससे श्यामपुर पहुँचने में पूरे तीन दिन भी न लगे। ब्याह के अब भी चार दिन बाक़ी हैं।

व्रजमोहन बाबू की इच्छा दो-चार दिन पहले ही वहाँ आने की थी। श्यामपुर में उनकी भावी समधिन दुःख से समय बिता रही थी। बहुत दिनों से व्रजमोहन चाहते थे कि उसे अपने यहाँ लाकर सुखपूर्वक रक्खें और इस उपकार द्वारा अपने स्वर्गीय मित्र ईशान बाबू के ऋण का परिशोध करें। कोई विशेष सम्बन्ध न रहने के कारण उनकी स्त्री से व्रजमोहन को

यह प्रस्ताव करने का साहस न होता था। अब उन्होंने इस विवाह के उपलक्ष में अपनी समधिन को, समझा-बुझाकर, अपने घर ले जाने के लिए राज़ी कर लिया। उन्होंने कहा—"समधिन के एक लड़की के सिवा और कोई नहीं है। वे अपनी बेटी के पास रहकर अपने मातृहीन जामाता की माता का स्थान ग्रहण करेंगी। समधिन ने व्रजमोहन बाबू के इस प्रस्ताव का प्रतिवाद नहीं किया। उसने कहा—जो जिसके जी में आवे कहे, जहाँ मेरे बेटी-दामाद रहेंगे वहीं मैं रहूँगी।

व्रजमोहन बाबू प्रसन्न होकर अपनी समधिन को ले जाने की तैयारी करने लगे। विवाह होने के बाद उन्होंने श्यामपुर से सबको अपने घर ले आने की बात पहले ही सोच ली थी। इसी से वे अपने साथ दो-चार स्त्रियों को भी लाये थे।

विवाह के समय रमेश ने मनोयोगपूर्वक मन्त्र नहीं पढ़ा। परस्पर मुखावलोकन के समय उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं। कोहबर में स्त्रियों की ठठोली को उसने सिर नीचा करके चुपचाप सुन लिया। रात को वह चारपाई पर मुँह फेरकर पड़ा रहा और .खूब तड़के उठकर बाहर चला गया।

विवाह हो जाने के बाद यात्रा की धूम मची। स्त्रियाँ एक नाव पर, वृद्ध लोग एक नाव पर और वर तथा उसके साथी अलग एक नाव पर सवार होकर रवाना हुए। रोशन-चौकीवालों का दल अलग एक नाव पर था। वह जब-तब मधुर रागिनी गा-बजाकर लोगों के मन को आनन्दित करने लगा।

दिन भर बड़ी कड़ी गरमी रही। गरमी के मारे लोगों का मन आकुल-व्याकुल था। आकाश में कहीं बादल का नाम न था। चारों ओर धुँधलापन छाया हुआ था। किनारे के दरख़्त पीले से दिखाई देते थे। डाँड़ चलानेवाले मल्लाहों के बदन से पसीने चू रहे थे। सायंकाल का गाढ़ा अन्धकार होने के पहले ही नाविकों ने व्रजमोहन से कहा—बाबू, हुक्म हो तो नाव को किनारे ले जाकर बाँध दें। कल सबेरे खोल देंगे। आगे, बहुत दूर तक, नाव ठहरने के लायक़ कोई जगह नहीं है। व्रजमोहन बाबू रास्ते में विलम्ब करना न चाहते थे। उन्होंने कहा—अभी नाव बाँधने से काम न चलेगा। आज पहर रात तक चाँदनी रहेगी। रामपुर नावों को पहुँचा सको तो तुम लोग ज़रूर बख़शिश पाओगे।

इनाम के लोभ से मल्लाहों ने व्रजमोहन बाबू की बात मान ली। नावें बड़े वेग से आगे को बढ़ीं। एक ओर नदी की साधारण तरङ्ग और दूसरी ओर ऊँचे कछार के सिवा कुछ नज़र नहीं आता। धुँधले आकाश में चन्द्रोदय हुआ, किन्तु वह नशैल आदमी की आँख की तरह अस्पष्ट देख पड़ा।

रात पहर भर से ज़्यादा न बीती थी। सभी लोग आज रामपुर तक पहुँच जाने की आशा में थे।

ऐसे समय जब कि आकाश में न मेघ था, न कहीं कुछ था, एकाएक भयानक शब्द सुन पड़ा। सभी लोग भौंचक

से हो रहे। कुछ ही देर में एक ओर से हू, हू, करता और धूल तथा पत्तों को उड़ाता हुआ बड़े जोर का तूफ़ान आया। "रोको, रोको, सँभालो, सँभालो, हाय! हाय! यह क्या हुआ!" नौकारोहियों के इस तरह चिल्लाते ही चिल्लाते पल भर में क्या हुआ, यह कोई नहीं कह सका। आँधी ने प्रबल वेग से आकर सब नावों को उलट-पलट दिया। नौकारोहियों में कौन कहाँ गया, नावें क्या हुईं, कहाँ गईं, इसका कुछ पता नहीं।

तीसरा परिच्छेद

थोड़ी देर के बाद आकाश निर्मल हो गया। नदी किनारे की बालुकामयी भूमि चटकीली चाँदनी में जड़ाऊ वसन की भाँति चमचमाने लगी। नदी में न कहीं नाव है, न तरल तरङ्ग है। रोगयन्त्रणा के बाद मृत्यु जैसे सदा के लिए निर्विकार शान्ति स्थापित कर देती है वैसे ही क्या जल क्या स्थल सर्वत्र शान्ति विराज रही है।

चैतन्य पाकर रमेश ने देखा कि मैं नदी के किनारे की बालू पर पडा हूँ। मेरी यह दशा कैसे हुई, यह सोचने में उसे कुछ समय लगा। कुछ देर के बाद उसे दुःस्वप्न की भाँति सारी घटना याद हो आई। पिता की और अन्यान्य आत्मीय जनों की क्या दशा हुई, यह जानने के लिए वह उठ बैठा। उसने चारों ओर बड़े ग़ौर के साथ देखा, पर कहीं कुछ चिह्न दिखाई न दिया। अब वह उन सबकी खोज में किनारे-किनारे चला।

पद्मा नदी की दो शाखारूपी बाहों के बीच यह छोटा सा सफ़ेद टापू नङ्गे बालक की भाँति ऊपर को मुँह उठाये सोया सा जान पड़ता था। रमेश जब एक किनारे से घूमकर दूसरे तीर पर जा उपस्थित हुआ तब कुछ दूर पर उसे एक लाल कपड़े की तरह कोई चीज़ दिखाई दी। उसने दौड़कर नज़दीक जाकर देखा, लाल कपड़ा पहने एक नववधू निश्चेष्ट पड़ी है।

पानी में डूबे हुए लोगों की साँस किस उपाय से पलटाई जाती है, यह रमेश को मालूम था। वधू के दोनों हाथों को वह एक बार उसके सिर पर ले जाता और फिर एक साथ लाकर उसके पेट पर दबाकर रखता था। इस प्रकार करते रहने से उसका यत्न सफल हुआ। थोड़ी देर के बाद धीरे-धीरे वधू की साँस चलने लगी और उसने आँखें खोल दीं।

रमेश थककर कुछ देर चुपचाप बैठा रहा। उस बालिका से उसने कुछ न पूछा। वह इतना थक गया था कि कुछ बोलने की भी उसमें शक्ति न थी।

बालिका तब भी अच्छी तरह होश में न थी। एक बार उसने आँख खोलकर फिर बन्द कर ली। रमेश ने परीक्षा करके देखा, उसके श्वास-निःश्वास में कोई रुकावट न थी। तब जन-शून्य जल-स्थल की सीमा में, जीवन-मृत्यु के बीच, वह चन्द्रमा के प्रकाश में देर तक उस बालिका के मुँह की ओर देखता रहा।

कौन कहता था, सुशीला देखने में अच्छी नहीं है। यद्यपि उसकी आँखें झिपी थीं, तो भी उसका मुख-मण्डल मुकुलित कमल की भाँति उतने बड़े शून्य स्थान में, उस विस्तीर्ण चन्द्रिका में, एक मात्र देखने की वस्तु था।

रमेश सब बातें भूलकर सोचने लगा—मैंने जो इसे विवाह-मण्डप में उतने लोगों की भीड़ में नहीं देखा सो अच्छा ही हुआ। इसे इस तरह स्वच्छन्द भाव से वहाँ क्योंकर देख

सकता? विवाह के समय मन्त्र द्वारा जो सम्बन्ध जोड़ा जाता है उसकी अपेक्षा कहीं बढ़कर सम्बन्ध मैंने इसकी साँस पलटाकर इसके साथ जोड़ लिया है। मन्त्र पढ़कर इसके साथ एक कृत्रिम सम्बन्ध जोड़ना होता, किन्तु दैव की अनुकूलता से जो सम्बन्ध यहाँ जुड़ा है वह अकृत्रिम है।

कुछ देर में वधू चैतन्य होकर उठ बैठी। उसने ढीले कपड़े सँभालकर मुँह पर घूँघट डाला। रमेश ने पूछा—तुम्हें कुछ मालूम है, तुम्हारी नाव और तुम्हारे साथ की स्त्रियाँ कहाँ गईं?

उसने सिर हिलाकर जताया—नहीं।

रमेश ने कहा—तुम कुछ देर तक यहाँ अकेली बैठ सको तो मैं एक बार घूमकर उन सबकी खोज करूँ।

बालिका ने इसका कुछ उत्तर न दिया। किन्तु उसका सारा शरीर संकुचित होकर मानो बोल उठा—मुझे यहाँ अकेली मत छोड़ जाना।

वधू के मन के भाव को रमेश समझ गया। खड़े होकर उसने बड़े ध्यान से एक बार चारों ओर देखा, पर कहीं कुछ नज़र नहीं आया। तब वह ख़ूब ज़ोर से चिल्लाकर, आत्मीय जनों का नाम ले-लेकर, पुकारने लगा। पर कहीं किसी की कुछ टोह न मिली। आख़िर वह हताश होकर बैठ गया। देखा, वधू दोनों हाथों से मुँह बन्द कर रोने की आवाज़ को रोकना चाहती है। इससे उसका दम रह-रहकर फूल उठता है और उसके मुँह से रोने की धीमी आवाज़ निकल पड़ती है।

रमेश उसको बातों से समझाने के बदले, उसके पास बैठकर धीरे-धीरे उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगा। जब उसकी रुलाई रोके न रुकी तब वह फूट-फूटकर रोने लगी। रमेश की आँखों से भी आँसू टपक पड़े।

वधू भरपेट रोकर जब चुप हुई तब चन्द्रास्त होने के कारण सर्वत्र अन्धकार फैल गया था। अँधेरी रात में वह शून्य स्थान अद्भुत स्वप्न के समान प्रतीत होने लगा। वह बालू का बड़ा मैदान श्मशान सा भयानक दीखने लगा। तारों के मन्द प्रकाश से नदी का चञ्चल जल अजगर साँप के चिकने काले चमड़े की तरह चमचमा रहा था।

रमेश ने बालिका के नवपल्लव सदृश कोमल हाथ पकड़कर बड़े अनुराग से अपनी ओर धीरे-धीरे खींचा। बालिका डरी हुई थी इसलिए उसने रमेश के पास जाने में कोई आपत्ति नहीं की। वह आप ही मनुष्य के समीप रहने के लिए व्याकुल हो रही थी। उसने गहरे अन्धकार में रमेश की छाती से लगकर आराम पाया। वह समय उसके लज्जा करने का न था। वह उस निर्जन स्थान में भय से म्रियमाण हो रही थी। उसने रमेश की दोनों भुजाओं के भीतर आग्रह के साथ अपने आराम की जगह बना ली।

जब पिछली रात का शुक्र तारा अस्त होने पर हुआ और पूर्व ओर आसमान में सफ़ेदी छा गई तथा धीरे-धीरे लालिमा दिखाई देने लगी उस समय देखा कि निद्रा-विह्वल रमेश बालू

पर पड़ा सो रहा है और उसकी छाती के पास उसकी बाँह पर माथा रक्खे, नववधू भी गाढ़ निद्रा में निमग्न है। आखिर सबेरे की नरम धूप जब उनकी आँखों पर पड़ी तब दोनों हड़बड़ाकर उठ बैठे। कुछ देर तक दोनों आश्चर्य-भरी दृष्टि से चारों ओर देखते रहे। पश्चात् उन्हें एकाएक स्मरण हुआ कि हम घर पर नहीं हैं—नदी में डूबकर किसी तरह किनारे आ लगे हैं।

चौथा परिच्छेद

सबेरे सफ़ेद पालवाली नावों से नदी सुशोभित हुई। रमेश ने एक मल्लाह को बुलाकर एक छोटी सी नाव किराये पर ली और नाव पर डूबने की रिपोर्ट थाने में देकर, डूबे हुए आत्मीय जनों की खोज में पुलिस को तैनात करके, आप वधू को साथ ले घर को रवाना हुआ।

गाँव के समीपवर्ती घाट पर नाव के पहुँचते ही, रमेश ने सुना कि मेरे पिता, सास और कई एक आत्मीय जनों की लाशें पुलिस ने पानी में से निकाली हैं। डूबे हुए व्यक्तियों में कई एक मल्लाहों को छोड़ और कोई बचा है, यह आशा किसी को न हुई।

घर पर रमेश की बूढ़ी दादी थी। बहू के साथ अकेले रमेश को घर आते देख वह उच्च स्वर से रोने लगी। महल्ले के जो लोग बारात में गये थे उनके भी घर कुहराम मच गया। सारी बस्ती में उदासी छा गई। दूलह-दुलहिन के आते समय जो कुछ उत्सव मनाया जाता है, नेग-दस्तूर होते हैं, वह एक भी न हुआ। न बाजे बजे और न सधवाओं ने मङ्गल-गीत गाया। कोई स्त्री वधू को देखने भी न आई।

रमेश ने पिता का श्राद्ध आदि क्रिया-कर्म होने के बाद शीघ्र ही पत्नी को साथ लेकर अन्यत्र जाने का विचार किया, किन्तु पैतृक धन-सम्पत्ति की कोई व्यवस्था किये बिना शीघ्र चला

जाना असम्भव था। परिवार की शोकाकुल स्त्रियाँ, तीर्थ पर ले जाने के लिए, उसे पहले ही दिक़ कर रही थीं। उन सबको सन्तुष्ट रखना भी वह ज़रूरी समझता था।

इन कामों में उलझने पर भी रमेश, अवकाश पाकर, प्रणय की ओर से पराङ्मुख न था। वधू वैसी नितान्त बालिका न थी जैसा कि पहले सुना गया था। महल्ले की स्त्रियाँ तो उसे ज्यादा उम्र की बताकर हँसी उड़ाती थीं। तो भी उसके साथ किस तरह प्रेम हो सकता है, यह बी० ए० पास रमेश नहीं जानता था। उसे किसी पुस्तक में इस विषय का उपदेश न मिला था। बहुत दिनों से वह इस बात को असम्भव और असंगत जानता था। फिर भी पुस्तकों द्वारा प्राप्त अनेक विषयों की अभिज्ञता के साथ प्रेम की कुछ शिक्षा न मिलने पर भी आश्चर्य यही है कि उसका उच्च-शिक्षा-प्राप्त मन भीतर ही भीतर एक अपूर्व रस से परिपूर्ण होकर इस नवीन बालिका की ओर झुक गया था। वह उस बालिका में कल्पना के द्वारा अपनी भविष्यत् गृह-लक्ष्मी का ध्यान करने लगा। ध्यान के समय उसे वह नववधू, युगपत् तरुणी, प्रेयसी और सन्तान की प्रौढ़ माता के स्वरूप में दिखाई देने लगी। चितेरे अपने भावी चित्र को, और कवि अपने भावी काव्य को, कल्पना के द्वारा, जिस तरह सम्पूर्ण रूप से हृदय में संगठित करते हैं उसी तरह रमेश ने भी इस बालिका को उपलक्ष करके भावी प्रणयिनी की—कल्याणी की—मनोहर मूर्ति अपने हृदय में प्रतिष्ठित की।

———

का प्रकाश कुछ फीका सा दिखाई देने लगा। निकटवर्ती नदी के किनारे बँधी नौका की छत पर माँझियों ने गाना आरम्भ किया। उनका गान आकाश में गूँजने लगा। देर तक कुछ आहट न पाकर वधू बहुत धीरे-धीरे रमेश की देह पर हाथ रखकर बोली—क्या सो गये?

रमेश—नहीं।

इसके अनन्तर उन दोनों में कोई बात न हुई। तब वधू भी धीरे-धीरे सो रही। कुछ देर के बाद रमेश उठ बैठा और उस निद्रित बालिका का मुँह देखने लगा। विधाता ने इसके कपाल में जो गुप्त लेख लिख दिया है उसका कोई चिह्न नज़र नहीं आता। न मालूम इस सौन्दर्यराशि के भीतर कैसा भयङ्कर परिणाम छिपा हुआ है।

छठा परिच्छेद

रमेश को मालूम हो गया कि यह बालिका मेरी विवाहिता स्त्री नहीं है। किन्तु यह किसकी स्त्री है? यह जानना सहज न था। एक दिन रमेश ने युक्ति से पूछा—विवाह के समय जब तुमने पहले पहल मुझको देखा तब तुमने क्या समझा? तुम्हारे मन में कैसा भाव उत्पन्न हुआ?

बालिका—मैंने तो आपको देखा ही नहीं। मैं नीची नज़र किये थी।

रमेश—तो तुमने मेरा नाम भी नहीं सुना?

बालिका—जिस दिन सुना कि ब्याह होगा उसके दूसरे ही दिन ब्याह हो गया। इससे मैंने आपका नाम नहीं सुना। नानी ने मुझे झटपट आपके साथ बिदा करके अपनी जान बचा ली।

रमेश—अच्छा, तुम लिखना-पढ़ना तो जानती ही हो। अपने नाम के हिज्जे करके लिखो तो देखूँ तुम्हारा अक्षर कैसा होता है?—रमेश ने उसे एक काग़ज़ और पेंसिल दी।

"क्या आप समझते हैं कि मैं सही-सही अपना नाम न लिख सकूँगी?" यह कहकर वधू ने बड़े-बड़े अक्षरों में अपना नाम लिख दिया—श्रीमती कमला देवी।

रमेश—अच्छा, अब अपने मामा का नाम लिखो।

कमला ने लिखा—श्रीयुत तारिणीचरण।

उसने पूछा—कहिए, लिखने में कुछ भूल तो नहीं हुई ?

रमेश—नहीं। अच्छा, अपने गाँव का नाम लिखो।

उसने लिखा—धर्मपुष्कर।

इस प्रकार कई युक्तियों से बड़ी सावधानी के साथ रमेश ने इस बालिका का जहाँ तक जीवन-वृत्तान्त अवगत किया उससे उसका जी न भरा। उसे बहुत बातें जानने को रह गईं।

अब रमेश एकान्त में बैठकर सोचने लगा कि आगे क्या किया जाय। अधिकतर सम्भव है, इसका पति डूबकर मर गया हो। यदि इसकी ससुराल का पता लगे तो वहाँ इसे भेज देने से वे लोग इसको अपने यहाँ रक्खेंगे या नहीं, इसमें सन्देह है। मामा के घर भेज देने में भी इसका कुशल नहीं। इतने दिन वधू के रूप में दूसरे के घर रहकर यदि आज इसकी असली हालत प्रकट हो तो समाज में इसकी क्या गति होगी! कौन इसे रहने को जगह देगा? कदाचित् इसका स्वामी जीता ही हो तो क्या अब वह इसको ग्रहण करने की इच्छा या साहस करेगा? यह लड़की अब जहाँ जायगी वहीं इस पर आफ़त का पहाड़ टूट पड़ेगा।

रमेश इस बालिका को पत्नी के सिवा दूसरे भाव से अपने पास रख नहीं सकता। ऐसी कोई जगह भी नहीं जहाँ इसे भेजकर वह निश्चिन्त हो जाय। जब वह दूसरे की स्त्री है तब उसे अपने पास रखकर उसके साथ अपनी विवाहिता स्त्री का सा व्यवहार करना भी रमेश अयुक्त समझता था। उसने

इस बालिका को अपनी पत्नी जानकर जो उसे अपने हृदय-पट पर भविष्य गृह-लक्ष्मी की मूर्त्ति के रूप में अङ्कित किया था वह बिल्कुल व्यर्थ हुआ।

रमेश अब अपने गाँव में अधिक दिन न रह सका। वह यह सोचकर कि, कलकत्ते में लोगों की भीड़ में गुप्त रीति से रहकर कोई उपाय ढूँढ़ निकालूँगा, कमला को साथ लेकर कलकत्ते आया। जहाँ वह पहले रहता था वहाँ से दूर एक नया मकान किराये पर ले लिया।

कमला को कलकत्ता देखने की बड़ी उत्कण्ठा थी। पहले दिन मकान में प्रवेश कर वह झट झरोखे में जा बैठी। वहाँ से वह लोगों की भीड़ और कौतूहलवर्द्धक भाँति-भाँति के दृश्य देखकर चकित होने लगी। रास्ते में असंख्य लोगों को आते-जाते देख उसके आश्चर्य की सीमा न रही। घर में एक दासी थी। उसके लिए कलकत्ता बिलकुल पुराना था। वह बालिका के विस्मय को भारी मूर्खता समझ चिढ़कर बोली—कौन ऐसा अनोखा तमाशा है जो पहरों से देख रही हो? बैठी ही रहोगी या अपना कुछ काम भी देखोगी?

दासी रात को इनके घर रहने को राज़ी न हुई। वह दिन भर काम करके रात को अपने घर चली जाती थी। रमेश को तत्काल ऐसी कोई दासी न मिली जो रात में उनके यहाँ रहना मञ्ज़ूर कर ले। रमेश सोचने लगा—कमला के साथ अब पत्नी का सा भाव रखना उचित नहीं। वह रात में अकेली कैसे

सो सकेगी? उसके साथ पूर्ववत् प्रेम-सम्भाषण न करने से वह अपने मन में क्या समझेगी?

रात को ब्यालू हो चुकने पर दासी चली गई। रमेश ने कमला को सोने की जगह बताकर कहा—तुम यहाँ सो रहो। मैं इस पुस्तक को पढ़कर सोऊँगा।

यह कहकर रमेश हाथ में एक पोथी लेकर नाम मात्र को पढ़ने लगा। कमला दिन भर की थकी थी। उसे नींद आते देर न हुई।

वह रात इसी तरह कट गई। दूसरे दिन भी रमेश ने किसी बहाने कमला को अलग एक बिछौने पर सुला दिया। उस दिन बड़ी गरमी थी। जिस कमरे में कमला सोई थी उसके सामने खुली छत पर रमेश एक दरी बिछाकर सो रहा। अपने हाथ से पंखा झलते झलते और मन ही मन भाँति भाँति की चिन्ता करते-करते वह गाढ़ निद्रा में निमग्न हो गया।

रात के दो-ढाई बजे जब रमेश ने एक बार करवट ली तब उसे ऐसा जान पड़ा मानों कोई उसके पास बैठकर धीरे-धीरे पंखा झल रहा हो। रमेश ने नींद की ख़ुमारी में उसको समीप लाकर कहा—"सुशीला तुम सो रहो। पंखा झलने की कोई ज़रूरत नहीं।" यह कहकर वह सो गया। कुछ देर बाद अन्धकार-भीरु कमला भी रमेश के वक्षःस्थल के सहारे सो रही।

रमेश ख़ूब तड़के जागकर बड़ा विस्मित हुआ। देखा, कमला अपनी दहिनी बाँह उसके कण्ठ में डाले नींद में सोई है। उसने

झिझक छोड़कर रमेश पर अपना विश्वस्त अधिकार किया है—वह उसके कण्ठ से लगकर सोई है। सोई हुई बालिका के मुँह की ओर देखने से रमेश के नेत्रों में आँसू भर आये। हा! वह बेचारा उस संशय-हीन कोमल बाहुपाश को कैसे हटा सकता था? रात में वह बालिका उसके पास बैठकर, उसकी निद्रित अवस्था में, जो धीरे-धीरे पंखा झल रही थी यह भी उसे स्मरण हो आया। रमेश ने लम्बी साँस लेकर अपनी आँखें पोंछीं। धीरे-धीरे बालिका के बाहु-बन्धन को ढीला करके वह बिछौने से उठ गया।

आख़िर बहुत सोच-विचारकर रमेश ने कमला को कन्या-पाठशाला के बोर्डिंग में भर्ती करा देने का निश्चय किया। यह इसलिए कि ऐसा करने से कुछ काल के लिए चिन्ता से छुटकारा मिल सकेगा।

रमेश ने कमला से पूछा—तुम पढ़ोगी?

कमला रमेश के मुँह की ओर देखने लगी। उसका मतलब यही कि तुम जो कहो वही करूँगी।

रमेश ने विद्या की उपकारिता और पढ़ने से जो अलौकिक आनन्द मिलता है, उसका सविस्तर वर्णन किया। इसकी कुछ आवश्यकता न थी। कमला ने कहा—आपकी इच्छा है तो मुझे पढ़ाइए।

रमेश—पढ़ने के लिए तुमको स्कूल जाना होगा।

कमला ने अचम्भे के साथ कहा—स्कूल! मैं इतनी बड़ी हो गई, स्कूल कैसे जाऊँगी?

रमेश ने कमला की इस वयोमर्यादा के अभिमान पर ज़रा हँसकर कहा—उम्र में तुमसे भी बड़ी-बड़ी कितनी ही लड़कियाँ स्कूल जाती हैं।

कमला इस पर कुछ न बोली।

दूसरे दिन गाड़ी में बैठकर वह रमेश के साथ स्कूल गई। बहुत बड़ा मकान है। उसमें कितनी ही छोटी-बड़ी लड़कियाँ अपने-अपने क्लास में बैठी पढ़ रही हैं। कमला को विद्यालय की स्वामिनी के सुपुर्द कर जब रमेश लौटने लगा तब कमला भी उसके पीछे-पीछे आने लगी। रमेश ने कहा—तुम कहाँ आती हो? तुमको यहीं रहना होगा।

कमला ने भीत स्वर में पूछा—क्या आप यहाँ न रहेंगे?

रमेश—नहीं, मैं यहाँ नहीं रहूँगा।

तब रमेश का हाथ पकड़कर कमला बड़ी दीनता के साथ बोली—तो मैं भी यहाँ न रह सकूँगी। मुझको अपने साथ लेते चलिए।

रमेश ने हाथ छुड़ाकर कहा—हुश, डरने की कोई बात नहीं है।

दुतकारने से कमला ठिठककर खड़ी हो गई। उसका चेहरा एकदम उतर गया। रमेश अपने चित्त की चञ्चलता को छिपाकर झटपट वहाँ से चल दिया। किन्तु बालिका की वह डबडबाई हुई आँखें और सशङ्कित मुख उसके हृदय में अङ्कित हो गया।

सातवाँ परिच्छेद

रमेश का दृढ़ संकल्प था कि अब अलीपुर में वकालत
काम आरम्भ कर दूँगा, किन्तु अब उसका जी टूट
उसमें अब वह सामर्थ्य न रहा कि चित्त को स्थिर
वकालत कर सके। वह कभी गङ्गा के किनारे, और
पुष्पवाटिका आदि रमणीय स्थानों में जी बहलाने के
जाने लगा। एक दिन उसने कुछ दिन के लिए
में जाकर जल-वायु बदलने की बात सोची। ऐसे
उसे घनानन्द बाबू के हाथ की एक चिट्ठी मिली।
बाबू ने लिखा है—गज़ट देखने से मालूम हुआ,
पास हो गये। किन्तु यह ख़बर अब तक तुमने मेरे पास
भेजी, इसका खेद है। बहुत दिनों से तुम्हारा कुशल-समा-
भी नहीं मिला। तुम कैसे हो, कलकत्ते कब आओगे!
मुझे आनन्दित करो। जब तक तुम्हारी चिट्ठी न
मैं चिन्तित रहूँगा।

यहाँ पर इतना लिख देना असङ्गत न होगा कि घनानन्द
विलायत गये हुए लड़के के बाद रमेश पर ही दृष्टि जमाये
वह लड़का विलायत से बैरिस्टरी पास करके आ
और उसके ब्याह की बात-चीत एक ज़मींदार की लड़की
साथ पक्की हो गई।

इस बीच जो घटनाएँ हुई हैं उनके कारण रमेश के लिए नलिनी के साथ पहले की तरह मुलाक़ात करना उचित होगा या नहीं, इसका वह किसी प्रकार निश्चय न कर सका। इन दिनों कमला के साथ जो उसका एक नया सम्बन्ध जुड़ गया है उसे भी किसी से कहना वह उचित नहीं समझता। निर-पराधिनी कमला को वह समाज में तिरस्कृत करना नहीं चाहता। अन्यथा ये सब बातें स्पष्ट रूप से कहे बिना नलिनी के पास वह अपना पहले का अधिकार क्योंकर प्राप्त कर सकता है ?

जो हो, घनानन्द बाबू के पत्र का उत्तर देने में विलम्ब करना उचित न जान रमेश ने उनको लिखा—"मैं आवश्यक कार्यवश न आपकी सेवा में हाज़िर हो सका, न कोई पत्र भेज सका। क्षमा कीजिएगा।" पत्र में उसने अपना नया पता नहीं लिखा।

यह चिट्ठी डाक में छोड़कर उसके दूसरे ही दिन वह सिर पर शमला रखकर अलीपुर की अदालत में हाज़िरी देने गया।

एक दिन वह कचहरी से लौटते समय कुछ दूर आगे बढ़कर एक गाड़ीवान से किराया तय कर रहा था। इतने में उसे एक परिचित कण्ठस्वर सुन पड़ा—पिताजी, ये हैं रमेश बाबू।

"गाड़ीवान ! रोको, रोको।"

रमेश के पास गाड़ी आ खड़ी हुई। घनानन्द बाबू उस दिन अलीपुर की पशुशाला में एक पार्टी में शामिल होकर अपनी लड़की के साथ घर लौटे आ रहे थे। रास्ते में अकस्मात् रमेश से भेंट हो गई।

गाड़ी में नलिनी का वह प्रेमप्रफुल्लित मुख, उसका विशेष प्रकार का पहनावा, और उसके भूषण, वसन और शृङ्गार की वह विलक्षण शोभा देखकर रमेश के हृदय में एक प्रकार की तरङ्ग लहराने लगी। वह किंकर्तव्य-विमूढ़ होकर जहाँ का तहाँ खड़ा रह गया।

घनानन्द बाबू ने कहा—अहोभाग्य है, रमेश! आज रास्ते में तुमसे भेंट हो गई। आजकल तुमने चिट्ठी लिखना बन्द कर दिया है। कभी लिखते भी हो तो अपना पता-ठिकाना नहीं देते। कहाँ जा रहे हो? कोई ज़रूरी काम है?

रमेश—नहीं, अदालत से लौटा आ रहा हूँ।

घनानन्द—तो घर चलो, चाय तैयार होगी।

रमेश कुछ उज्र न करके गाड़ी में जा बैठा। उसने ज़ोर लगाकर अपने हृदय से संकोच के पर्दे को हटाकर नलिनी से पूछा—आप अच्छी तरह हैं?

नलिनी ने इस कुशल-प्रश्न का कुछ उत्तर न देकर कहा—"आपने वकालत पास करने की ख़बर हम लोगों को न दी! क्यों?" रमेश कुछ कारण न बता सका। उसने सिटपिटाकर कहा—ख़ुशी की बात है, आप पास हो गईं।

नलिनी ने हँसकर कहा—ख़ैर, आप हम लोगों की ख़बर तो रखते हैं!

घनानन्द—तुम कहाँ ठहरे हो?

रमेश—दर्ज़ी-टोले में।

घनानन्द——क्यों? कोलूटोले में तुम्हारा पहला मकान क्या बुरा था?

उत्तर की अपेक्षा से नलिनी विशेष कौतूहल के साथ रमेश का मुँह देखने लगी। वह दृष्टि रमेश के हृदय में गड़ गई। वह झट बोल उठा—हाँ, फिर उसी मकान में आने का इरादा है।

मकान बदलने के कारण नलिनी मुझे दोषी समझकर मन ही मन नाराज़ है, यह बात रमेश भली भाँति समझ गया। अपने को निर्दोष साबित करने का कोई उपाय न देख वह अनुतप्त होकर चुप हो रहा। उधर से फिर कोई प्रश्न न हुआ। नलिनी गाड़ी से मुँह निकालकर सड़क की ओर देखने लगी। रमेश अब चुप न रह सका। वह बोल उठा—मेरा एक नातेदार हेदुवा महल्ले में रहता है। वह बीमार है। उसी की देखभाल के लिए मैंने दर्ज़ी-टोले में मकान लिया है।

रमेश ने यह एकदम झूठ नहीं कहा था, पर बात कुछ असङ्गत सी जान पड़ी। क्योंकि बीच-बीच में नातेदार की ख़बर लेने के लिए हेदुवा से कोलूटोला कुछ बहुत दूर न था। नलिनी की आँखें गाड़ी के बाहर सड़क ही की ओर गड़ी रहीं। हतभाग्य रमेश अब और क्या कहे, यह उसकी समझ

में न आया। उसने एक बार केवल यही पूछा—योगेन्द्र का क्या हाल है?

घनानन्द बाबू ने कहा—वह क़ानून की परीक्षा में फ़ेल हो गया, पच्छिम में हवा खाने गया है।

गाड़ी घनानन्द बाबू के फाटक पर पहुँच गई। परिचित घर और उसकी सजावट ने रमेश के ऊपर मन्त्रजाल फैला दिया। वह दीर्घ निःश्वास लेकर चाय पीने लगा।

घनानन्द बाबू ने रमेश से पूछा—इस दफ़े तो तुम घर पर बहुत दिन तक रहे। क्या कोई विशेष कार्य था?

रमेश—पिता का देहान्त हो गया।

घनानन्द—अरे! यह क्या कहा? उनकी मृत्यु कैसे हुई?

रमेश—वे पद्मा नदी में नाव की सवारी से घर आ रहे थे। एकाएक तूफ़ान आने से नाव डूब गई। साथ ही वे भी डूबकर मर गये।

तेज़ हवा चलने से जैसे बादल दूर होकर आकाश निर्मल हो जाता है वैसे ही इस शोक-संवाद ने रमेश और नलिनी के बीच जो मनोमालिन्य छा गया था उसे एकदम दूर कर दिया। नलिनी ने मन ही मन पश्चात्ताप करके कहा—रमेश बाबू को मैंने व्यर्थ ही दोष दिया था। वे पितृ-वियोग के शोक में डूबे थे, इससे चित्त ठिकाने न था। अब भी इनके हृदय से प्रायः वह शोक दूर नहीं हुआ, इसी से इनका जी ठिकाने पर नहीं है। उन पर कैसी आपदा आई है, उनके मन में कैसी गहरी

चोट लगी है, यह सब बिना समझे-बूझे मैं उन्हें दोषी ठहराने लगी थी।

नलिनी अब पितृहीन रमेश की बड़ी खातिर करने लगी। रमेश को खाने की इच्छा न थी। नलिनी ने बड़ा आग्रह और हठ करके उसे खिलाया और मधुर स्वर में कहा—आप बहुत दुबले हो गये हैं। आप शरीर की ओर से इस तरह लापरवाह क्यों हो गये हैं? उसने घनानन्द बाबू से कहा—पिताजी! रमेश बाबू आज रात में भी यहीं भोजन करें तो अच्छा हो।

घनानन्द—अच्छी बात है।

इसी समय अक्षयकुमार वहाँ आया। घनानन्द बाबू की चाय की टेबल पर अक्षयकुमार का कुछ दिन से एकाधिपत्य सा हो गया था। आज सहसा रमेश को देखकर वह ठिठक गया। उसने मन का भाव छिपाकर मुस्कराकर कहा—कौन? रमेश बाबू! मैं समझता था, शायद आप हम लोगों को एकदम भूल गये।

रमेश ने कुछ जवाब न देकर केवल मुस्करा दिया। अक्षयकुमार ने कहा—आपके पिता इस बार जिस मुस्तैदी के साथ आपको यहाँ से पकड़कर ले गये थे उससे मैंने निश्चय किया था कि वे अबकी बार आपका बिना ब्याह कराये न रहेंगे। कहिए, सब बखेड़ों को तय कर आये?

नलिनी ने रिस-भरी चितवन से अक्षयकुमार की ओर देखा।

घनानन्द ने कहा—"अक्षय, तुम नहीं जानते, रमेश के पिता का देहान्त हो गया।" अक्षय कृत्रिम शोक प्रकाशित करने लगा।

रमेश उदासी के साथ सिर नीचा किये बैठा था। उसे दुःख पर दुःख दिया गया जानकर नलिनी मन ही मन अक्षय-कुमार पर बहुत रुष्ट हुई। उसने रमेश की ओर प्रफुल्ल दृष्टि से देखकर कहा—"हमारा नया अलबम् तो आपने देखा न होगा?" यह कहकर वह अलबम् लाई और रमेश को मेज़ के एक ओर ले जाकर चित्र दिखलाने लगी। उसकी आलोचना के साथ-साथ नलिनी ने एक बार धीरे से पूछा—तो नये मकान में आप अकेले रहते हैं?

रमेश—हाँ।

नलिनी—आप हमारे घर के पासवाले पहले मकान में आने में देरी न करें।

रमेश—बहुत अच्छा। मैं इसी सोमवार को उस मकान में आ जाऊँगा।

नलिनी—मैं समझती हूँ, यहाँ आपके आने से मुझे फ़ायदा होगा। बीच-बीच में बी० ए० की फ़िलासफ़ी आपसे समझ लिया करूँगी।

रमेश ने इस पर विशेष प्रसन्नता प्रकट की।

आठवाँ परिच्छेद

रमेश ने पुराने मकान में आने में सचमुच विलम्ब न किया। इसके पहले नलिनी के साथ रमेश के भाव का जो अन्तर था वह इस बार न रहा। रमेश उसके घर का सा आदमी हो गया। रमेश और नलिनी में बड़ी घनिष्ठता हुई। दोनों ओर से हँसी-खेल, आमोद-विनोद, एक साथ खाना-पीना आदि जैसा चाहिए, होने लगा।

इसके पूर्व पढ़ने में विशेष परिश्रम करने के कारण नलिनी की मुखश्री मलिन हो गई थी। उसका शरीर इतना दुर्बल हो गया था कि ज़रा ज़ोर से हवा लगते ही मालूम होता था कि उसकी कमर टूट जायगी। उसका स्वभाव बहुत गम्भीर था। वह कम बोलती थी। लोग उसके साथ बात करने में डरते थे कि शायद वह बात उसे न रुचे।

इधर कुछ ही दिन में उसमें बहुत परिवर्तन हो गया। उसके पीले कपोलों पर गुलाबी छटा दीखने लगी। उसके नेत्र बात-बात में मानों हँसते और ख़ुशी से नाचते थे। पहले वह वेश-विन्यास या शृङ्गार करने में मन देना अज्ञानता ही नहीं अनुचित भी समझती थी, किन्तु अब किसी के साथ इस विषय में कुछ तर्क न करके क्यों उसका मन बदलता जाता था, यह अन्तर्यामी महापुरुष के सिवा कौन कह सकता है?

कर्तव्य-ज्ञान के नीचे दबा हुआ रमेश भी कुछ कम गम्भीर न था। विचारशक्ति की प्रबलता से उसका शरीर और मन शिथिल हो गया था। आकाश के ज्योतिर्मय ग्रह-नक्षत्र अपनी नियत गति से चलते-फिरते हैं किन्तु मानमन्दिर अपने यन्त्र-तन्त्रों को लिये बड़ी सावधानी के साथ एक जगह स्थिर बैठा है। वैसे ही रमेश भी इस जङ्गमशील संसार में अपने काग़ज़-पत्र और युक्तितर्क की आयोजना के भार से स्थिर था। वह भी आज इतना चञ्चल—हलका क्यों हो गया? किसने उसे चञ्चल कर दिया? आजकल वह भी परिहास का समीचीन उत्तर न दे सकने के कारण बात-बात में ठठाकर हँस पड़ता है। यद्यपि वह अब भी बालों में कंघी नहीं करता तथापि उसका पहनावा-ओढ़ावा पहले की तरह अब मैला नहीं रहने पाता। उसके शरीर और मन में एक प्रकार की नई शक्ति उत्पन्न हुई सी जान पड़ती है।

नवाँ परिच्छेद

प्रेमियों के लिए काव्य में जिन चीज़ों की व्यवस्था लिखी है उन्हें कलकत्ते में कहाँ पाइएगा? न वहाँ कहीं फूले अशोक, पलाश और मौलसरी का उपवन है, न कहीं विकसित मालती और माधवी का प्रच्छन्न लतावितान है, और न कहीं नवमञ्जरी-रञ्जित रसाल-वाटिका में कोयलों की कुहुक है, तो भी इस उद्दीपक विभावविहीन आधुनिक नगरी में प्रेम की पिपासा विफल नहीं होती। इस लोहे की पटरी से बँधी हुई पक्की सड़क पर, इस घोड़ा-गाड़ियों की अपार भीड़ में, एक अदृश्य चिरकिशोर प्राचीन देवता, अपने धनुष को छिपाये, लाल साफ़ेवाले पहरे-दारों की आँखों के सामने से होकर दिन-रात में कितनी बार कहाँ-कहाँ आता-जाता है, यह कौन कह सकता है!

नलिनी और रमेश चमड़े की दूकान के सामने, हलवाई की दूकान के पास, कोलूटोला महल्ले में किराये के मकान में रहते थे। इससे कोई यह न समझे कि प्रेमविकाश के सम्बन्ध में ये दोनों कुञ्जकुटीर में रहनेवालों की अपेक्षा किसी तरह पीछे रहे हों। घनानन्द बाबू की चाय-रस-चिह्नित उस छोटी सी मैली टेबूल रूपी पद्मसरोवर में मधुप रूपी रमेश को कुछ भी अभाव न था। नलिनी की पालतू बिल्ली मृग-शावक न होने पर भी रमेश उसका कम आदर न करता था।

जब वह धीरे से उसका गला पकड़कर हिला देता और जब वह धनुष की तरह पीठ फुलाकर, आलस्य त्याग करके, बदन चाट-चाटकर अपना शृङ्गार करती थी तब रमेश की मुग्ध-दृष्टि में नलिनी का वह पालित जीव किसी दूसरे चौपाये की अपेक्षा कम गौरवास्पद नहीं जान पड़ता था।

नलिनी परीक्षा देने की उलझन में पड़कर सिलाई की शिक्षा में विशेष प्रवीणता प्राप्त न कर सकी थी। इसलिए वह कुछ दिन से जी लगाकर अपनी एक प्रवीण सखी से सिलाई सीखने लगी। सिलाई के काम को रमेश अनावश्यक और तुच्छ समझता था। साहित्य और दर्शन-शास्त्र में रमेश का नलिनी के साथ देन-लेन होता था, परन्तु सिलाई के विषय में रमेश को कुछ बोलने का अवसर न मिलता था। इस-लिए वह कभी-कभी कुढ़कर नलिनी से कहता था—"न मालूम आज-कल आप सिलाई के काम में क्यों इस तरह उलझ पड़ी हैं? जिन लोगों के पास समय बिताने का दूसरा उपाय नहीं वही इसे पसन्द करते हैं। जिन्हें कोई काम नहीं, वे बैठे-बैठे सिलाई न करें तो क्या करें।" नलिनी कुछ जवाब न देती, मुस्कराती हुई सुई में रेशम का डोरा पिरोने लगती। अक्षयकुमार इस मौक़े पर तीव्र स्वर में कह बैठता था—"जो काम प्रयोजनीय है, जिससे संसार का कुछ उपकार हो सकता है, वह रमेश बाबू के ऊँचे ख़याल में व्यर्थ और तुच्छ जँचता है! महाशय! आप चाहे जितने बड़े तत्त्वज्ञानी और कवि

क्यों न हों, बिना तुच्छ वस्तुओं के एक दिन भी संसार का काम नहीं चल सकता।" रमेश इसके ख़िलाफ़ बहस करने लगता था। तब उसे रोककर नलिनी कहती—रमेश बाबू! आप सब बातों का उत्तर देने के लिए क्यों इतने व्यग्र होते हैं? इससे संसार की अनावश्यक बातें बहुत बढ़ जाती हैं। यह कहकर वह सिर नीचा करके फिर बड़ी सावधानी के साथ सिलाई करने लगती थी।

एक दिन रमेश ने अपने पढ़ने के कमरे में जाकर देखा, मेज़ पर, रेशम के फूल निकाले हुए मख़मल से बँधी, एक ब्लाटिङ्ग-बुक बड़ी हिफ़ाज़त से रक्खी है। मख़मल के एक कोने में 'र' अक्षर लिखा है और एक कोने में सुनहले रेशम से एक कमल का फूल बनाया हुआ है। ब्लाटिङ्ग-बही का इतिहास और तात्पर्य समझने में रमेश को कुछ भी विलम्ब न हुआ। उसका हृदय आनन्द से नाचने लगा। सिलाई करना तुच्छ नहीं है, यह उसके अन्तरात्मा ने बिना वाद-विवाद के ही स्वीकार कर लिया। वह उस पुस्तक को छाती से लगाकर अक्षयकुमार के निकट हार मानने को भी राज़ी हुआ। उसने उसी ब्लाटिङ्ग-बुक को खोलकर उस पर एक चिट्ठी लिखने का काग़ज़ रखकर लिखा—"अगर मैं कवि होता तो कविता में ही इसका उत्तर लिखता। किन्तु मैं कवित्व-शक्ति से वञ्चित हूँ। ईश्वर ने मुझको वह योग्यता नहीं दी जो किसी को कुछ देकर प्रसन्न कर सकूँ। पर दान-ग्रहण

करने की क्षमता भी एक क्षमता है। इस आशातीत उपहार को मैंने किस .खुशी के साथ ग्रहण किया है, यह अन्तर्यामी भगवान् को छोड़ दूसरा नहीं जान सकता। दान आँखों से देखने की चीज़ है, परन्तु आदान—दान को ग्रहण करना—हृदय के भीतर छिपा रहता है। इति। चिरऋणी।"

रमेश की यह हस्तलिपि नलिनी के हाथ पड़ी। इसके बाद इस सम्बन्ध में उन दोनों में फिर कोई बात न हुई।

बरसात का मौसम आ गया। यह ऋतु मानवसमाज के लिए उतना सुखकर नहीं जितना कि अरण्यचरों के लिए है। वर्षा से बचने के लिए लोग घर के ऊपर छत-छप्पर बनाते हैं, पथिक छतरी के सहारे उसका निवारण करते हैं और ट्रामगाड़ी के सवार उसे पर्दे से रोकते हैं। किन्तु नदी, पहाड़, जङ्गल और मैदान बरसात को बन्धु समझकर उसे आदर-पूर्वक बुलाते हैं। यथार्थ में वर्षा की बहार वहीं के लिए है। वहाँ सावन-भादों महीने में भूलोक और स्वर्गलोक के आनन्द-सम्मिलन के बीच कोई व्यवधान नहीं रह जाता।

किन्तु नया प्रेम मनुष्य को जङ्गल-पहाड़ों का वह सुख घर बैठे देता है। लगातार पानी बरसने से घनानन्द बाबू का जी एकदम भिन्ना गया, उन्हें मन्दाग्नि हो गया, परन्तु नलिनी और रमेश की चित्तस्फूर्ति में किसी तरह का व्यतिक्रम न हुआ। बादलों की अँधियारी, बिजली की कड़क, मूसलधार पानी

बरसने के मधुर शब्द और बीच-बीच में मेघ की गम्भीर ध्वनि ने दोनों नये प्रेमियों के मानसिक सम्बन्ध को और भी सुदृढ़ कर दिया। वृष्टि के कारण रमेश को कचहरी जाने में प्रायः विघ्न होने लगा। किसी-किसी दिन सबेरे ऐसे ज़ोर की वर्षा होती कि नलिनी उद्विग्न होकर कहने लगती थी—"रमेश बाबू! इस वर्षा में आप घर कैसे जाइएगा?" रमेश शरमाता हुआ कहता—"दूर थोड़े है? किसी तरह चला जाऊँगा।" नलिनी कहती—"पानी में भीगने से सर्दी होगी। भोजन कर लीजिए तो जाइएगा।" रमेश को सर्दी का कुछ भय न था; थोड़ी देर पानी में भीगने से उसको सर्दी होते आज तक किसी ने नहीं देखा। किन्तु जिस दिन वर्षा होती थी उस दिन उसे नलिनी की शुश्रूषा को अङ्गीकार कर रहना पड़ता था। दो-चार डग पानी में चलकर अपने घर जाना अन्याय और दुःसाहस समझा जाता था। जिस दिन आकाश में घटा घिरने और पानी बरसने का लक्षण देख पड़ता था उस दिन सबेरे रमेश बाबू को नलिनी के यहाँ खिचड़ी खाने का न्योता मिलता था। रमेश को दिन भर में कई बार खिलाने से उसे अजीर्ण की बीमारी होगी, इसका भय नलिनी को उतना न था; उसे तो रमेश के पानी में भीगने से सर्दी होने का भय था।

इसी तरह दिन पर दिन बीतने लगा। इस परवशता का परिणाम क्या होगा, रमेश इसे न सोचता था; किन्तु घनानन्द

बाबू सोचते थे और उनके समाज के दस पाँच आदमी उसकी आलोचना करते थे। रमेश को जितना शास्त्रीय ज्ञान था उतना व्यावहारिक ज्ञान न था। और इस प्रेम-अवस्था में उसकी लौकिक समझ और भी मन्द हो गई थी। घनानन्द बाबू रोज़ ही उसके मुँह की ओर विशेष आशा से देखते थे, किन्तु उन्हें उसका कुछ उत्तर नहीं मिलता था।

दसवाँ परिच्छेद

अक्षयकुमार का स्वर उतना अच्छा न था, किन्तु जब वह सितार बजाकर गाता था तब विशेष मार्मिक को छोड़कर साधारण सुननेवाले कुछ भी न कहते थे, बल्कि कितने ही लोग तो उससे गाने का अनुरोध तक करते थे। घनानन्द बाबू को सङ्गीत में उतना अनुराग न था, परन्तु वे इस बात को क़बूल न करते थे। कहीं लोग यह न समझें कि उन्हें गाने-बजाने का शौक़ नहीं है, इसकी वे बराबर चेष्टा किया करते थे। जब कोई अक्षयकुमार से गाने-बजाने का अनुरोध करता तब वे कहते थे—तुम लोगों में यही भारी दोष है। वह बेचारा गाना जानता है तो क्या उस पर एकदम इतना अत्याचार करना चाहिए?

अक्षयकुमार हाथ जोड़कर कहता था—नहीं साहब, इसके लिए आप कोई चिन्ता न करें। अत्याचार की इसमें कौन सी बात है?

अनुरोधकर्ता उमँगकर कहता—तो कुछ सुनाइए।

उस दिन दोपहर के बाद आकाशमण्डल में बादल घिर आये। ख़ूब ज़ोर से पानी बरसने लगा। साँझ हो गई फिर भी पानी बरसता ही रहा। अक्षयकुमार का जाना रुक गया। नलिनी ने कहा—"अक्षय बाबू! कुछ गाइए।" यह कहकर नलिनी हारमोनियम लेकर बैठी और सुर भरने लगी।

अक्षयकुमार सितार का सुर मिलाकर गाने लगा—

"वायु बहे पुरवैया, नींद नहीं बिन सैंयाँ।"

अक्षयकुमार क्या गाता था, यह स्पष्ट रूप से कोई न समझ सकता था। समझने की वैसी आवश्यकता भी न थी। जब मन में विरह-वेदना का भाव भरा है तब उसका आभास मात्र यथेष्ट है। इतना अवश्य समझ पड़ा कि पानी बरसता है, मोर नाचता है, बिजली कड़कती है, और एक व्यक्ति से मिलने के लिए एक व्यक्ति का चित्त व्याकुल हो रहा है।

अक्षयकुमार सितार की ध्वनि में अपने मन का भाव व्यक्त करने की चेष्टा करता था, किन्तु उस ध्वनि का विशेष मर्म समझते थे और ही दो मनुष्य। उस ध्वनि की लहरें दो ही व्यक्तियों के हृदय में विशेष आघात पहुँचा रही थीं। जगत् में कुछ भी अकिञ्चित् न रह गया। सब कुछ मनोरम हो गया। भू-मण्डल पर अब तक मनुष्यों ने जितना प्रेम किया है वह सब मानों दो हृदयों में विभक्त होकर अनिर्वचनीय सुख-दुःख और आकांक्षा-आकुलता से कम्पित होने लगा।

उस दिन जैसे लगातार पानी बरस रहा था वैसे ही गान की भी झड़ी लग गई थी। नलिनी बार-बार अनुनयपूर्वक कहने लगी—अक्षय बाबू! आपको सौगन्द है, अभी गाना समाप्त न कीजिए। एक गीत और गाइए।

अक्षय का उत्साह दूना बढ़ गया। उसने गाने में और भी अलाप की मात्रा अधिक कर दी। गाते-गाते वह तन्मय

हो गया। बड़ी देर तक योंही गाने-बजाने का ठाठ जमा रहा। जब रात बहुत बीती और पानी बरसना बन्द हुआ तब अक्षय-कुमार अपने घर को गया। रमेश ने बिदा होते समय सतृष्ण नयन से मानों सङ्गीत के सुर में होकर एक बार नलिनी के मुँह की ओर देखा। नलिनी ने भी चकित दृष्टि से रमेश को एक बार देखा। उसकी दृष्टि में भी गान का असर था।

रमेश घर गया। वृष्टि कुछ देर के लिए बन्द थी। फिर टप-टप करके पानी बरसने लगा। रमेश को उस रात नींद न आई। नलिनी भी देर तक चुपचाप अकेली बैठकर गहरे अन्धकार में निरन्तर वर्षा होने का शब्द सुन रही थी। उसके कान में अक्षयकुमार का गान गूँज रहा था—

"वायु बहे पुरवैया, नींद नहीं बिन सैंयाँ।"

दूसरे दिन सबेरे रमेश बिछौने से उठकर सोचने लगा—यदि मैं केवल गाना जानता तो उसके बदले में अपनी अनेक विद्याएँ दे डालने में कुण्ठित न होता।

परन्तु किसी युक्ति से कभी कुछ गाना आवेगा, यह आशा रमेश को न थी। इसलिए उसने निश्चय किया कि गाना न आया तो न सही, परन्तु बजाना अवश्य सीखूँगा। इसके पूर्व एक दिन उसने घनानन्द बाबू के सूने घर में सितार लेकर ज्योंही ज़ोर से खूँटी ऐंठी त्योंही उसका एक तार टूट गया। बस, सितार बजाने का उसका उत्साह उसी दिन भङ्ग हो गया। आज वह एक छोटा सा हारमोनियम ख़रीदकर ले

आया। किवाड़ बन्द करके, घर के भीतर बैठकर, बड़ी सावधानी के साथ उस पर उँगली फेरकर देखा, तो सितार से उसने हारमोनियम बाजे को अच्छा समझा। सीखने से वह हारमोनियम बजा सकेगा, यह आशा कुछ-कुछ उसके हृदय में हुई।

दूसरे दिन रमेश के घनानन्द बाबू की बैठक में पैर रखते ही नलिनी ने पूछा—कहिए, कल आपके घर से हारमोनियम का शब्द कैसा सुना जाता था ?

रमेश ने सोचा था, द्वार बन्द करके हारमोनियम बजाने से कोई न जान सकेगा। परन्तु वह यह न जानता था कि कोई कान ऐसे भी हैं जो उसके बन्द घर की भी ख़बर रखते हैं। रमेश को कुछ लज्जित होकर क़बूल करना पड़ा कि मैं एक हार-मोनियम लाया हूँ, और बजाना सीखूँगा। यह मेरी एकान्त् इच्छा है।

नलिनी ने कहा—घर में किवाड़ बन्द करके क्यों स्वयं मिथ्या चेष्टा कीजिएगा। बेहतर तो यह होगा, कि आप यहीं आकर अभ्यास किया करें। मैं जहाँ तक जानती हूँ, आपके बजाने में सहायता दूँगी।

रमेश ने कहा—मैं इस विषय में एकदम कोरा हूँ। मेरे साथ आप क्यों वृथा कष्ट उठावेंगी ?

नलिनी—मैं जो कुछ जानती हूँ, उसे आप जैसे अनभिज्ञ को शिक्षा देने ही में सफल समझूँगी !

रमेश ने जो अपने को इस विषय में बिलकुल अनभिज्ञ बतलाया था, यह एकदम झूठ न था। इसका प्रमाण नलिनी को क्रम-क्रम से मिलने लगा। नलिनी जैसी उस्तादिन की इतनी अयाचित सहायता पाकर भी रमेश के मस्तिष्क में स्वर का कुछ ज्ञान न हुआ। नलिनी सिखलाते-सिखलाते थक गई, पर रमेश की समझ में कुछ न आया। जिसे तैरना नहीं आता वह जैसे पानी में गिरकर पागल की भाँति उलटे-सीधे हाथ-पैर फेंकने लगता है, वैसे ही रमेश भी सङ्गीत की सरिता में धँसकर व्यवहार करने लगा। उसकी कौन उँगली कब कहाँ जा पड़ती थी, इसका कुछ भी ख़याल उसे न रहता था। कोई स्वर शुद्ध न निकलता था, किन्तु स्वर की यह भूल रमेश के कान में ज़रा भी न खटकती थी। सुर-बेसुर का कुछ भी ख़याल न करके वह मज़े में राग-रागिनियों को सर्वत्र उल्लंघन करता जाता था। उसका बेसुरा बजाना सुनकर नलिनी हँसकर ज्योंही कहती थी—"यह क्या कर रहे हैं, भूल हुई। फिर बजाइए," त्योंही वह दूसरी भूल के द्वारा पहली भूल को सुधारता था। नलिनी के बार-बार कहने पर भी रमेश का हाथ अपना अल्हड़पन न छोड़ता था। किन्तु धीरस्वभाव अध्यवसायी रमेश सहसा विरक्त होनेवाला न था। वह हारमोनियम बजाने की थोड़ी-बहुत शिक्षा हासिल किये बिना न छोड़ेगा। सड़क पीटने का स्टीमरोल (बेलन) जिस तरह मन्द गति से चलता है, और उसके नीचे कौन

दबता है, कौन पिसा जाता है, उस पर वह जिस तरह ध्यान नहीं देता, उसी तरह अभागे सुर और ताल आदि के ऊपर भी रमेश अनिवार्य गति से निःशङ्कतापूर्वक यातायात करने लगा।

रमेश की इस मूर्खता पर नलिनी हँसती थी, रमेश भी हँसता था। रमेश के भूल करने की असाधारण शक्ति से नलिनी को अत्यन्त हर्ष होता था। भूल होने से, बेसुरा बजाने से या और किसी तरह की अयोग्यता से आनन्द पाने का गुण एक प्रेम में ही है। छोटा बच्चा चलना सीखते समय उलटे-सीधे पैर रखकर बार-बार गिरता है, उससे मा-बाप का स्नेह बच्चे पर और भी बढ़ता है। बजाने में रमेश जो विचित्र भूलें करता था, यह नलिनी के लिए बड़े कुतूहल का विषय था।

रमेश कभी-कभी नलिनी से कहता था—अच्छा, तुम जो इतना हँसती हो सो पहले-पहल जब तुम बजाना सीखती रही होगी तब क्या तुम कभी कुछ भूल न करती रही होगी?

नलिनी—ज़रूर करती थी, पर सच कहती हूँ रमेश बाबू! आपकी भूल के साथ उसकी तुलना नहीं हो सकती।

रमेश इससे झेंपता न था बल्कि हँसकर फिर बजाने लगता था। घनानन्द बाबू सङ्गीत का भला-बुरा कुछ न समझते थे। वे जब-तब कान खड़े करके गम्भीरतापूर्वक कहते थे—देखता हूँ, रमेश का हाथ अब धीरे-धीरे जमता जाता है।

नलिनी—हाँ, बेसुरा बजाने में इनका हाथ बेशक जमता जाता है।

घनानन्द—नहीं, नहीं, पहले की अपेक्षा अब इसने बहुत कुछ तरक्क़ी कर ली है। मेरी समझ में तो रमेश यदि मन देकर सीखेगा तो ज़रूर ही इसे बजाना आ जायगा। गाने-बजाने में क्या है, सिर्फ़ अभ्यास चाहिए। एक बार सरिगम का जहाँ अच्छी तरह ज्ञान हुआ तहाँ फिर गाने का सब विषय आप ही मालूम हो जाता है।

इन बातों का कोई प्रतिवाद न करता था। सब लोग चुप-चाप उन बातों को सुन लेते थे।

ग्यारहवाँ परिच्छेद

घनानन्द बाबू प्राय: प्रतिवर्ष शारदी पूजा के समय कन्सेशन टिकट लेकर नलिनी के साथ जल-वायु बदलने की इच्छा से अपने बहनोई के यहाँ जबलपुर चले जाते थे। विशेष-कर परिपाक-शक्ति बढ़ाने के लिए उनका यह वार्षिक स्थानान्तर गमन का नियम था।

आधा भादों बीत गया। दशहरे की छुट्टी में अब अधिक विलम्ब नहीं। घनानन्द बाबू अभी से जाने की तैयारी करने लगे।

नलिनी से शीघ्र वियोग होने की सम्भावना देखकर रमेश आजकल ख़ूब जी लगाकर हारमोनियम सीखने लगा। एक दिन बातों ही बातों में नलिनी ने उससे कहा—रमेश बाबू, मेरी राय है कि कुछ दिन के लिए आप हवा-पानी बदल डालिए। इस विषय में आप पिताजी से राय ले सकते हैं।

घनानन्द बाबू ने सोचा, बात ठीक जँचती है, क्योंकि इस दर्मियान रमेश पर शोक और दुःख कृपा कर चुके हैं। इससे उन्होंने कहा—कम से कम कुछ दिन के लिए कहीं घूम आना अच्छा है। समझे रमेश, पश्चिम हो या और कोई प्रदेश, मैंने देखा है कि कुछ दिन के लिए थोड़ा बहुत लाभ हो जाता है। पहले कई दिन तक खुलकर भूख लगती है,

आहार अधिक होने लगता है, इसके बाद ज्यों के त्यों! वही पेट भारी रहने लगता है, हृदय में जलन होती है, जो कुछ खाओ वही—

नलिनी ने कहा—रमेश बाबू, आपने कभी नर्म्मदा नदी का प्रपात देखा है?

रमेश—नहीं, कभी नहीं देखा।

नलिनी—आपको एक बार देखना चाहिए। क्यों पिताजी, ठीक है न?

घनानन्द—अच्छा तो रमेश हम लोगों के साथ ही क्यों नहीं चलते? हवा की तबदीली भी होगी, सङ्गमर्मर का पहाड़ भी देखेंगे।

हवा बदलना और सङ्गमर्मर का पहाड़ देखना, ये दोनों बातें रमेश को विशेष प्रयोजनीय जान पड़ीं। इसलिए वह जाने को राज़ी हो गया।

उस दिन रमेश हवा के ऊपर महल तैयार करने लगा। अशान्त चित्त का वेग रोकने के लिए वह अपने घर का द्वार बन्द करके हारमोनियम बजाने लगा। आज सुर-बेसुर का और भी विचार न रहा। उसकी उन्मत्त उँगलियाँ बाजे पर ताल-बेताल का नाच करने लगीं। नलिनी के दूर देश जाने की सम्भावना से कई दिन से उसका हृदय व्याकुल हो रहा था। आज मारे ख़ुशी के सङ्गीत-विद्या के सम्बन्ध में उसने सब प्रकार के न्याय-अन्याय को एकदम तिलाञ्जलि दे दी।

इसी समय बाहर से किसी ने दर्वाजे पर धक्का देकर कहा—रमेश बाबू! आप यह क्या कर रहे हैं? ठहरिए, ठहरिए।

रमेश ने अत्यन्त लज्जित होकर दर्वाजा खोल दिया। अक्षय-कुमार ने घर के भीतर आकर कहा—आप जो छिपकर राग-रागिनी पर इस तरह अत्याचार कर रहे हैं, क्या उसके लिए आपके क्रिमिनल कोड में कोई दण्ड-विधान नहीं है?

रमेश ने हँसकर कहा—मैं अपराध स्वीकार करता हूँ।

अक्षय—यदि आप बुरा न मानें तो आपके साथ मुझे एक बात की आलोचना करनी है।

रमेश उत्कण्ठित होकर चुपचाप आलोच्य विषय की प्रतीक्षा करने लगा।

अक्षय—आपको इतने दिनों में यह मालूम हो गया होगा कि नलिनी के भले-बुरे के साथ मेरा भी कुछ सम्बन्ध है।

रमेश हाँ या ना, कुछ न कहकर चुपचाप अक्षय की बात सुनने लगा।

अक्षय—उसके सम्बन्ध में आपका क्या अभिप्राय है? यह पूछने का मुझे अधिकार है—क्योंकि घनानन्द बाबू के आत्मीयों में एक मैं भी हूँ।

यह बात रमेश को बहुत बुरी लगी। किन्तु उसको कठोर उत्तर देने का अभ्यास न था। उसने बड़ी मुलायमियत के साथ कहा—उसके सम्बन्ध में मेरा कोई बुरा अभिप्राय रहने की आशङ्का आपको क्योंकर हुई? कुछ कारण है?

अक्षय—देखिए, आप हिन्दूकुल में उत्पन्न हुए हैं, आपके पिता सनातन-धर्मावलम्बी थे। आप कहीं ब्राह्ममत वाले के घर विवाह न कर लें, इस भय से वे आपको हिन्दू की लड़की के साथ व्याह देने ही के लिए देश ले गये थे।

अक्षय को यह बात मालूम होने का एक विशेष कारण था। वह यही कि स्वयं अक्षयकुमार ही ने रमेश के पिता के मन में यह आशङ्का उत्पन्न करा दी थी। रमेश कुछ देर तक अक्षय-कुमार के मुँह की ओर न देख सका।

अक्षयकुमार ने कहा—अकस्मात् पिता की मृत्यु हो जाने से क्या आप अपने को स्वतन्त्र स्वेच्छाचारी बना डालेंगे? उनकी क्या इच्छा थी यह भी—

रमेश अब चुप न रह सका। उसने कहा—देखिए, अक्षय बाबू, यदि आप मुझको उपदेश देने का अधिकार रखते हैं तो दीजिए, मैं सुन लूँगा; किन्तु मेरे पिता के साथ मेरा जो सम्बन्ध है उसमें कोई बात आप न कहें।

अक्षय—बहुत अच्छा। उस बात को जाने दीजिए। पर यह तो कहिए कि नलिनी से ब्याह करने का आपका अभिप्राय है या नहीं?

बार-बार आघात लगने से रमेश ने उत्तेजित होकर कहा—सुनिए अक्षय बाबू! आप घनानन्द बाबू के आत्मीय हो सकते हैं, किन्तु मेरे साथ आपकी उतनी घनिष्ठता नहीं है। कृपा करके आप इस प्रसङ्ग को यहीं तक रहने दीजिए।

अक्षय—यदि मेरे ही रोक देने से बात रुक जाती और आप अभी जिस तरह फलाफल पर दृष्टि न देकर बड़े आराम से दिन बिता रहे हैं ऐसे ही बराबर बिता सकते तब तो कोई बात ही न थी। किन्तु आप जैसे निश्चिन्त प्रकृति के मनुष्य के लिए समाज कुछ सुख का विषय नहीं है। यद्यपि आप अत्यन्त उच्च प्रकृति के हैं, और व्यावहारिक विषयों पर उतना ध्यान नहीं रखते, तो भी ज़रा सोचने ही से आप समझ सकते हैं कि भद्र पुरुष की लड़की के साथ आप जैसा व्यवहार कर रहे हैं, उसको देखते हुए आप बाहरी लोगों के आगे जवाबदेही से अपने को नहीं बचा सकते। जिन लोगों पर आपकी अभी श्रद्धा है उन्हें जन-समाज में अश्रद्धा-भाजन बनाने का यही उपाय है।

रमेश—आपके उपदेश को मैंने कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार किया। मैं अपने कर्त्तव्य का शीघ्र ही निश्चय कर उसका पालन करूँगा। इसके लिए आप कोई चिन्ता न करें। इस सम्बन्ध में अब अधिक आलोचना करने की ज़रूरत नहीं।

अक्षय—यही सही। इतने दिनों के बाद आप अपना कर्त्तव्य स्थिर करेंगे और उसका पालन करेंगे, इसी से मैं अब निश्चिन्त हुआ। मुझे आपके साथ किसी बात की आलोचना करने का शौक़ नहीं। मैं आपके गाने-बजाने में वाधा देकर अपराधी बना हूँ—क्षमा कीजिएगा। आप फिर बजावें, मैं जाता हूँ।

अक्षय बड़ी शीघ्रता के साथ चला गया।

रमेश फिर हार्मोनियम बजाने लगा। पर बेसुरा बजाने में उसका जी न लगा। वह हार्मोनियम को एक तरफ़ हटाकर और सिर पर दोनों हाथ रखकर चारपाई पर चित लेट रहा। देर तक वह योंही पड़ा रहा। एकाएक घड़ी में टन्-टन् कर पाँच बज गये। सुनकर वह झट उठ बैठा। उसने क्या कर्तव्य स्थिर किया यह भगवान् जानें, किन्तु पड़ोसी के घर जाकर जो शीघ्र दो प्याले चाय पीना कर्तव्य है, इस विषय में उसके मन मे किसी तरह की दुविधा न रही।

नलिनी ने चकित होकर रमेश से पूछा—क्या आज आपकी तबीयत कुछ सुस्त है ?

रमेश—नहीं तो।

घनानन्द—शायद खाना अच्छी तरह हज़म न हुआ होगा। पित्त का प्रकोप अधिक हो तो जो गोली मैं रोज़ खाता हूँ वही तुम भी खाकर देखो। वह ज़रूर कुछ फ़ायदा—

नलिनी ने हँसकर कहा—गोली मत खिलाइए, इतने दिन से आप गोलियों का सेवन कर रहे हैं, मैं उससे कुछ भी तो फ़ायदा होते नहीं देखती।

घनानन्द—विशेष उपकार नहीं है तो कुछ अपकार तो नहीं हुआ। मैंने ख़ुद परीक्षा करके देखा है—अब तक जितने क़िस्म की गोलियाँ खाई हैं उनमें यह सबसे विशेष गुणदायक है।

नलिनी—जब आप कोई नई गोली खाना आरम्भ करते हैं तब कुछ दिन तक वह आपको बहुत ही गुणप्रद जान पड़ती—

घनानन्द—तुम किसी दवा पर विश्वास नहीं करतीं। अच्छा अक्षय से पूछ लेना, मेरी दवा से उसे कुछ फ़ायदा हुआ है या नहीं।

उक्त गवाह की तलबी के डर से वह चुप हो रही। किन्तु साक्षी बिना बुलाये आप ही उपस्थित हो गया। आते ही उसने घनानन्द बाबू से कहा—आपने जो गोली दी थी उससे बड़ा फ़ायदा हुआ है। एक और मुझको चाहिए। आज कुछ ताक़त मालूम होती है, बदन .फुर्तीला जान पड़ता है।

घनानन्द बाबू सगर्व दृष्टि से अपनी कन्या के मुँह की ओर देखने लगे।

बारहवाँ परिच्छेद

घनानन्द बाबू ने अक्षय को गोली देकर भी उसे शीघ्र छोड़ना न चाहा। वह भी जाने की ज्यादह ख्वाहिश जाहिर न करके बीच-बीच में रमेश के मुँह की ओर कटाक्षपात करने लगा। रमेश की नजर सहज ही सब ओर नहीं पड़ती, किन्तु अक्षयकुमार का यह कटाक्ष आज उसने देख लिया। इससे वह बार-बार उद्विग्न होने लगा।

पश्चिम जाने का समय समीप आया जान, मन में उसकी आलोचना करने से, नलिनी का मन आज बहुत प्रसन्न था। उसके हृदय में उत्साह रखने को जगह न थी। उसने मन में सोचा था कि आज रमेश बाबू के आने पर मैं उनसे छुट्टी के दिन बिताने के विषय में कुछ विशेष सलाह करूँगी। वहाँ एकान्त में कौन-कौन पुस्तकें पढ़ने के लिए साथ ले जाना होगा, उसकी एक तालिका दोनों जने मिलकर बनावेंगे। तय हो गया था कि रमेश आज कुछ पहले ही आवेगा, क्योंकि चाय पीने के समय अक्षय या और किसी के आ जाने से उसे रमेश के साथ सलाह करने का मौक़ा नहीं मिलता था।

किन्तु रमेश आज और दिन की अपेक्षा विलम्ब करके आया। उसके चेहरे पर चिन्ता का चिह्न झलक रहा था। यह देखकर नलिनी का उत्साह बहुत कुछ मन्द हो गया। उसने सुयोग पाकर रमेश से पूछा—आज इतनी देर क्यों हुई ?

रमेश ने उदासी के साथ ज़रा ठहरकर कहा—हाँ, आज देरी हो गई।

नलिनी ने आज नियमित समय से पहले ही वेणी बाँध ली थी। जो नित्य का मामूली सिंगार था वह सब करके बार-बार घड़ी की ओर देख रही थी। किसी काम में आज उसका जी नहीं लगता था। कई बार उसके मन में हुआ कि आज मेरी घड़ी तेज़ चलती है। अभी बहुत समय है। जब इस आशा की रक्षा करना एकदम कठिन हो गया तब वह झरोखे में बैठकर सिलाई के बहाने जी बहलाने की चेष्टा करने लगी। इसके कुछ ही देर बाद रमेश मुँह फुलाये आया। उसके आने में क्यों विलम्ब हुआ, इसकी कैफ़ियत उसने न दी। जैसे आज जल्द आने का कोई क़ौल ही न रहा हो।

नलिनी ने बड़ी अधीरता के साथ चाय-पान की लीला समाप्त की। घर के कोने में एक तिपाई पर कुछ पुस्तकें रक्खी थीं। नलिनी कुछ विशेष उद्योग के साथ रमेश के चित्त को अपनी ओर खींचती हुई उन पुस्तकों को लेकर घर से बाहर जाने लगी तब रमेश को चेत हुआ। उसने झट उसके पास जाकर कहा—इन पुस्तकों को कहाँ लिये जाती हो? जो पुस्तकें साथ ले जानी हों उन्हें छाँट लेती तो ठीक होता।

नलिनी के होंठ काँपने लगे। वह उमड़े हुए क्रोध के आँसुओं को बड़े कष्ट से रोककर कम्पित स्वर से बोली—जाने दीजिए, पुस्तकें छाँट करके क्या होगा?

यह कहकर वह बड़ी तेज़ी के साथ चली गई। ऊपर सोने के कमरे में जाकर उसने किताबें फ़र्श पर पटक दीं।

रमेश का मन और भी खट्टा हो गया। अक्षयकुमार ने मुस्कुराकर कहा—रमेश बाबू! मालूम होता है, आज आपकी तबीयत अच्छी नहीं है।

रमेश ने इसके उत्तर में टूटे स्वर में क्या कहा, यह स्पष्ट न सुना गया। तबीयत अच्छी न होने की बात सुनकर घनानन्द बाबू ने उत्साहपूर्वक कहा—यह तो मैंने रमेश का चेहरा देखकर पहले ही कह दिया था।

अक्षयकुमार ने मुँह बनाकर हँसते-हँसते कहा—जान पड़ता है, रमेश बाबू के सदृश ज्ञानी लोग शरीर पर ध्यान रखना तुच्छ समझते हैं। वे भाव-राज्य के मनुष्य हैं। आहार न पचने पर उसकी चिकित्सा करना वे एक प्रकार की असभ्यता समझते हैं।

घनानन्द बाबू अनेक प्रमाण देकर गम्भीरतापूर्वक इस बात को सिद्ध करने लगे कि ज्ञानी विज्ञानी भावुक सबको भोजन न पचने की शिकायत को दूर करना चाहिए।

रमेश चुपचाप इन बातों को सुनकर मन ही मन जल रहा था।

अक्षय ने कहा—रमेश बाबू! आप मेरी बात मानिए, घनानन्द बाबू की गोली खाकर ज़रा जल्दी जाकर सो रहिए।

रमेश—घनानन्द बाबू से आज मेरा एक विशेष प्रयोजन है, मैं उसी की अपेक्षा में बैठा हूँ।

अक्षयकुमार ने कुर्सी से उठकर कहा—यह बात आपको पहले कह देनी थी। आप सब बातें पेट में रक्खे रहते हैं, जब समय बीत जाता है तब घबरा उठते हैं।

अक्षय के चले जाने पर रमेश सिर नीचा करके कहने लगा—घनानन्द बाबू! आपने जो मुझे कुछ दिन से आत्मीय की तरह अपने घर में जाने-आने का अधिकार दे रक्खा है उसे मैं कितना बड़ा सौभाग्य समझता हूँ, कह नहीं सकता।

घनानन्द—वाह! तुम हमारे योगेन्द्र के बराबर हो। मैं तुमको अपने घर का लड़का न समझूँ तो क्या समझूँ?

भूमिका तो हुई। इसके बाद रमेश उनसे क्या कहे, यह उसकी समझ में न आया। घनानन्द बाबू ने रमेश का पथ सुगम कर देने की इच्छा से कहा—तुम्हारे जैसे लड़के को घरेलू बनाने में मेरा ही क्या कम सौभाग्य है?

इस पर भी रमेश अपने मन की बात न कह सका।

घनानन्द ने कहा—देखो रमेश! तुम सबके बारे में कितने ही आदमी कितनी ही तरह की बातें कहते हैं। वे कहते हैं, नलिनी के विवाह की उम्र हो गई, अब वह ऐसे-वैसे पुरुष की सङ्गति में न रहे। इस पर विशेष ध्यान रखना उचित है। मैं उनसे कहता हूँ—रमेश पर मेरा पूरा विश्वास है, वह कभी हम लोगों के साथ अनुचित व्यवहार नहीं कर सकता।

रमेश—आपसे मेरी कोई बात छिपी नहीं है। यदि आप मुझको योग्य समझें तो—

घनानन्द बाबू—यह कहने की आवश्यकता नहीं। हम सब बातों का निश्चय कर चुके हैं। केवल तुम्हारी दैवी दुर्घटना के कारण अब तक दिन स्थिर नहीं कर सके। किन्तु अब विलम्ब करना उचित नहीं है। समाज में इस विषय को लेकर तरह-तरह की बातें चल रही हैं। इसलिए जहाँ तक हो शीघ्र इसका निवारण कर देना चाहिए। तुम क्या कहते हो ?

रमेश—आप जो आज्ञा देंगे वही होगा। किन्तु सबसे पहले आपको कन्या का मत जानना आवश्यक है।

घनानन्द—हाँ, यह ठीक है। किन्तु उसका मत एक प्रकार से जाना ही हुआ है। तो भी कल सबेरे उसका निश्चय कर लेंगे।

रमेश—आपके सोने में विलम्ब हो रहा है। मैं जाता हूँ।

घनानन्द—ज़रा ठहर जाओ। हम चाहते हैं, जबलपुर जाने के पहले ही तुम दोनों का ब्याह हो जाय तो अच्छा हो।

रमेश—वहाँ जाने में तो अब विलम्ब नहीं है।

घनानन्द—नहीं, अब भी दस दिन की देरी है। आगामी रविवार को यदि तुम्हारा ब्याह हो जायगा तो उसके बाद दो-तीन दिन यात्रा की तैयारी के लिए मिल जायँगे। समझे रमेश ! हम इतनी जल्दी नहीं करते—किन्तु इस शरीर की चिन्ता है।

रमेश घनानन्द बाबू के प्रस्ताव पर राज़ी हो गया। वह एक और गोली खाकर चलता हुआ।

तेरहवाँ परिच्छेद

दशहरे की छुट्टी का दिन क़रीब आया। छुट्टी के दिनों में कमला को स्त्री-विद्यालय में रखने के लिए रमेश ने विद्यालय की स्वामिनी से सब बात पहले ही ठीक कर ली थी।

रमेश ख़ूब तड़के उठकर अकेले मैदान की सूनी सड़क पर टहलते-टहलते मन में सोचने लगा, विवाह होने के बाद मैं कमला के सम्बन्ध की सब बातें नलिनी से कहूँगा। पीछे कमला से भी सब बात खोलकर कहने का अवकाश मिलेगा। इस प्रकार सब वृत्तान्त जान लेने पर कमला सखी की भाँति नलिनी के साथ रह सकेगी। किन्तु देश में यह बात ज़ाहिर होने से भारी बखेड़ा मचेगा। इससे बेहतर है कि हज़ारीबाग़ में जाकर रहूँ और वहीं वकालत करूँ।

रमेश इस तरह मन ही मन सोच-विचारकर मैदान से लौटा और घनानन्द बाबू के घर गया। एकाएक कमरे की सीढ़ी पर नलिनी से भेंट हुई। और दिन इस तरह भेंट होने पर दोनों में कुछ न कुछ बात ज़रूर होती थी। किन्तु आज रमेश को देखते ही नलिनी का मुँह लाल हो गया। उस लालिमा के भीतर से एक हँसी की झलक उषःकाल की प्रभा की भाँति दीप्त हो उठी। वह मुँह घुमाकर नीचे की ओर देखती हुई बड़ी फुर्ती से भीतर चली गई।

रमेश ने नलिनी से हार्मोनियम में जो गत बजानी सीखी थी, वही गत घर आकर बड़े ध्यान से बजाने लगा। किन्तु एक ही गत कोई दिन भर तो बजा नहीं सकता। बाजा छोड़कर वह एक काव्य की पुस्तक लेकर पढ़ने लगा। उसे ऐसा जँचा मानो मेरे प्रेम का सुर बहुत ऊँचा पहुँच गया है, उसके सामीप्य तक पहुँचनेवाली एक भी कविता पुस्तक में नहीं है।

इधर नलिनी बेहद ख़ुशी के साथ अपने घर का सारा काम-काज करके दोपहर के समय शयनगृह का द्वार बन्द किये सिलाई का सब सामान लेकर बैठी। उसके चेहरे पर अपूर्व प्रसन्नता का भाव झलक रहा है। एक सर्वाङ्गीण सार्थकता उससे लिपटी हुई है।

चाय पीने के समय से पहले ही रमेश कवितावली और हार्मोनियम को अलग रखकर घनानन्द बाबू की बैठक में आ गया। और दिन नलिनी के साथ भेंट होने में कुछ भी देर न होती थी मानों वह आप ही रमेश के आने की बाट जोह रही हो। किन्तु आज रमेश ने देखा, चाय पीने का स्थान सूना है। ऊपर जाकर देखा, वहाँ की बैठक में भी नलिनी नहीं है। वह अभी अपने शयनागार से बाहर नहीं आई।

घनानन्द बाबू यथासमय मेज़ के पास कुर्सी पर आकर बैठ गये। रमेश रह-रहकर चकित दृष्टि से दर्वाज़े की ओर देखने लगा।

इतने में पैरों की आहट हुई। रमेश ने चौंककर देखा, अक्षयकुमार ने घर में प्रवेश कर बड़ी मित्रता दिखलाते हुए

रमेश से कहा—मैं आपके घर गया था। अफ़सोस! वहाँ आपसे भेंट नहीं हुई!

यह सुनकर रमेश के मुँह पर कुछ उदासी का भाव छा गया।

अक्षयकुमार ने हँसकर कहा—रमेश बाबू! आप डरते क्यों हैं? मैं आपका कुछ अनिष्ट करने नहीं गया था। किसी शुभावसर पर हर्ष प्रकट करना बन्धु-बान्धवों का कर्तव्य है। उसी के रक्षार्थ मैं भी गया था।

इस बात से घनानन्द बाबू को स्मरण हुआ, यहाँ नलिनी नहीं है। उन्होंने नलिनी को पुकारा। उत्तर न पाकर वे ऊपर गये और नलिनी से कहा—यह क्या! अब भी सिलाई से फ़ुरसत नहीं हुई? चाय तैयार है। रमेश और अक्षय बड़ी देर से बैठे हैं।

नीची दृष्टि किये नलिनी बोली—मेरे लिए चाय ऊपर ही भेज दीजिए। आज बिना सिलाई ख़तम किये न उठूँगी।

घनानन्द—यही तुममें बड़ा दोष है। तुम्हारे हाथ जब जो आता है तब तुम उसी में जी-जान से लग पड़ती हो। जब तुम पढ़ती थीं तब तुम्हारे हाथ से पुस्तक नहीं छूटती थी, अब सिलाई करने बैठी हो तो इसी के पीछे सब काम बन्द है! नहीं, नहीं, यह न होगा। चलो, नीचे चलकर चाय पीओ।

यह कहकर घनानन्द बाबू ज़बर्दस्ती नलिनी को नीचे ले आये। वह आई तो, पर किसी की ओर दृष्टि न करके झटपट चाय देने के काम में लग पड़ी।

घनानन्द बाबू ने घबराकर कहा—नलिनी ! यह क्या कर रही हो ? मेरे प्याले में चीनी क्यों डाल रही हो ? मैं तो चीनी डालकर चाय नहीं पीता।

अक्षय ने मुसकुराकर कहा—आज वे उदारता के आवेग को नहीं रोक सकतीं। आज वे सबको मीठा परोसेंगी।

नलिनी के प्रति अक्षय की यह प्रच्छन्न व्यङ्गोक्ति रमेश को बहुत बुरी लगी। उसने मन ही मन निश्चय किया—विवाह के बाद अक्षयकुमार के साथ कोई सम्पर्क न रक्खूँगा।

अक्षय ने कहा—रमेश बाबू ! आप अपने नाम को बदल डालिए।

रमेश ने इस दिल्लगी से बहुत चिढ़कर कहा—क्यों ?

अक्षय ने अख़बार खोलकर कहा—देखिए, आपके नाम का एक विद्यार्थी दूसरे के द्वारा अपने नाम से परीक्षा दिलाकर पास हुआ था—वह एकाएक पकड़ा गया है।

नलिनी जानती थी कि रमेश किसी को मुँह-तोड़ उत्तर नहीं दे सकता। इसलिए इतने दिन अक्षय ने रमेश पर जितने वाक्य-बाणों के प्रहार किये हैं उनका मुँह-तोड़ जवाब नलिनी ही देती आई है। आज भी वह चुप न रह सकी। गूढ़ क्रोध को छिपाकर मुसकुराकर बोली—आपके नाम के कितने ही आदमी जेलख़ाने की हवा खाते होंगे।

अक्षय—खेद है, मैं बन्धुभाव से अच्छी सलाह देता हूँ तो आप लोग बुरा मानते हैं। अच्छा, अब सारा वृत्तान्त ही

कह सुनाता हूँ। आप तो जानती हैं, मेरी छोटी बहन शारदा गर्ल्स स्कूल में पढ़ने जाती है। उसने कल साँझ को आकर कहा—"भैया ! तुम्हारे रमेश बाबू की स्त्री स्कूल में पढ़ती है।"

मैंने कहा—दुर पगली ! हमारे रमेश बाबू को छोड़कर क्या संसार में दूसरा रमेश बाबू नहीं है। शारदा ने कहा—कोई भी हों, वे अपनी स्त्री पर भारी अन्याय कर रहे हैं। तातील में प्रायः सब लड़कियाँ अपने-अपने घर जाती हैं, उन्होंने अपनी स्त्री को बोर्डिङ्गहाउस में ही रखने का प्रबन्ध कर दिया है। वह बेचारी रोती है। तब मैंने मन में कहा—यह तो अच्छी बात नहीं है। शारदा ने एक बार जैसी भूल की है वैसी और लोग भी तो कर सकते हैं !

घनानन्द बाबू ने हँसकर कहा—अक्षय ! तुम पागल की तरह बात कर रहे हो। किसी रमेश की स्त्री स्कूल में पढ़कर रोती हो तो इससे हमारा रमेश अपना नाम क्यों बदलेगा ?

इसी समय रमेश उदास मुँह किये घर से उठकर चला गया। उसको जाते देख अक्षय बोल उठा—रमेश बाबू ! यह क्या ? आप नाराज़ होकर तो नहीं जाते ? क्या आप यह तो नहीं समझ बैठे कि मैं आप पर सन्देह करता हूँ ?—यह कहकर वह भी रमेश के पीछे-पीछे चल पड़ा।

घनानन्द—यह क्या मामला है ?

नलिनी रोने लगी। घनानन्द बाबू घबराकर बोले—अरी ! तुम क्यों रोती हो ?

वह रोती ही रोती रुँधे स्वर में बोली—अक्षय बाबू ने बड़ा अन्याय किया है। वे हमारे घर आकर भले आदमियों का इस तरह अपमान क्यों करते हैं?

घनानन्द—उसने तो ठट्ठा किया था। इतना रुष्ट होने की क्या आवश्यकता थी?

"ऐसा ठट्ठा किस काम का?" कहकर नलिनी बड़ी तेज़ी के साथ ऊपर चली गई।

कलकत्ते आने पर रमेश यत्नपूर्वक कमला के पति का पता लगा रहा था। धर्मपुष्कर कहाँ है, इसका पता बहुत छान-बीन करने पर लगा। तब उसने कमला के मामा तारिणी-चरण के नाम पर एक पत्र लिखा।

रमेश को आज सबेरे ही उस पत्र का जवाब मिला है। तारिणीचरण लिखते हैं—दुर्घटना के अनन्तर हमारे जामाता श्रीकमलनयन की कोई ख़बर नहीं मिली। वे रङ्गपुर में डाक्टरी करते थे। वहाँ चिट्ठी लिखने से मालूम हुआ कि यहाँ भी आज तक किसी को उनकी कुछ ख़बर नहीं मिली। उनका जन्मस्थान कहाँ है, हमें मालूम नहीं।

कमला का स्वामी कमलनयन जीता है, यह आशा रमेश के मन से एकदम दूर हो गई।

सबेरे और भी कितनी ही चिट्ठियाँ रमेश के पास आई थीं। विवाह की ख़बर पाकर उसके अन्तरङ्ग मित्रों ने उसे पत्र द्वारा बधाई दी है। किसी ने दावत देने की बात जताई

है। किसी ने इतने दिन तक इस बात को छिपा रखने के कारण मीठे तिरस्कार की बातों से उसे उलहना दिया है।

इसी समय घनानन्द बाबू के नौकर ने एक लिफ़ाफ़ा रमेश को दिया। अक्षर पहचानकर रमेश का हृदय आनन्द से ताथेई-ताथेई करने लगा।

पत्र नलिनी के हाथ का लिखा था। रमेश ने समझा, अक्षय की बात सुनकर शायद उसके मन में सन्देह उत्पन्न हुआ है और उसी सन्देह के निवारणार्थ उसने मुझको पत्र लिखा है।

रमेश ने चिट्ठी खोलकर देखा। उसमें यही कुछ बातें थीं।—

"कल अक्षय बाबू ने आपके साथ बड़ा अन्याय किया। मैंने सोचा था, आप सबेरे ही आवेंगे; तो क्यों नहीं आये? अक्षय बाबू की बात से आप इतने उदास न हों। मैं तो कभी उनकी बात पर ध्यान नहीं देती। आज आप ज़रा जल्दी आने की कृपा करें। मैं आज सिलाई बन्द कर रक्खूँगी।"

इन्हीं इने-गिने शब्दों में नलिनी के सान्त्वना-सुधा-पूर्ण कोमल हृदल की व्यथा का अनुभव करने से रमेश की आँखों में आँसू भर आये। उसके मन में विश्वास हुआ कि नलिनी कल ही से मेरा मनोदुःख शान्त करने के लिए बड़ी व्यग्रता के साथ प्रतीक्षा कर रही है। मालूम होता है, उसने सारी रात जागकर बिता दी है। किसी तरह उसने सबेरे पहर को भी बेताया; आख़िर जब उससे न रहा गया तब हारकर उसने यह पत्र लिखा है।

रमेश ने कल ही इस बात को सोच रक्खा था कि नलिनी से कमला के सम्बन्ध की बातें खोलकर कह देना आवश्यक है। किन्तु कल की घटना से अब वह बात कहनी कठिन हो गई। अब नलिनी यही समझेगी, कि अपराध प्रकट होने पर उसे छिपाने की चेष्टा हो रही है। सिर्फ़ यही नहीं, इस बात से अक्षय की बहुत कुछ जीत होगी, यह और भी दुःसह होगा।

रमेश सोचने लगा—कमला का स्वामी कोई दूसरा रमेश है—यही धारणा अक्षय के मन में है; नहीं तो वह अब तक इस तरह बैठा न रहता। महल्ले भर में वह इस बात को फैला देता। इसलिए अभी इसका कोई उपाय करना अच्छा है।

रमेश इस तरह सोच ही रहा था कि इतने में डाक से एक और चिट्ठी आई। रमेश ने खोलकर देखा, वह चिट्ठी स्त्री-विद्यालय की स्वामिनी ने भेजी है। उन्होंने लिखा है—कमला बहुत अधीर हो रही है। इस अवस्था में तातील में उसका यहाँ रहना मैं अच्छा नहीं समझती। आगामी शनिवार को स्कूल होकर तातील होगी। उस दिन आपको उसे विद्यालय से घर ले जाने का प्रबन्ध कर देना बहुत ज़रूरी है।

आगामी शनिवार को कमला को विद्यालय से लाना है और उसके अगले दिन, रविवार को, रमेश का विवाह है—यह विषम घटना एक साथ उपस्थित हुई!

"रमेश बाबू! मुझे माफ़ कीजिएगा" कहता हुआ अक्षय घर के भीतर आया और बोला—अगर मैं पहले से जानता

होता कि साधारण हँसी की बात से आप इतना क्रोध करेंगे, तो कभी आपसे ऐसी बात न कहता! हँसी-दिल्लगी की बात में कुछ सत्य का अंश रहने ही से लोग चिढ़ते हैं, किन्तु जो बात एकदम अमूलक है, उसके कारण आपने सबके सामने क्यों इतना क्रोध किया? घनानन्द बाबू कल से मेरे ऊपर नाराज़ हैं। नलिनी ने मुझसे बोलना ही छोड़ दिया है। आज सबेरे मैं उनके यहाँ गया था। मुझको आते देख वे उठकर चली गईं। आप ही कहिए, मैंने ऐसा क्या अपराध किया है?

रमेश—इन बातों का विचार फिर कभी होगा। अभी आप मुझको क्षमा करें। मुझे एक भारी काम है।

अक्षय—मालूम होता है, आप रोशनचौकी की साई देने जा रहे हैं। अब समय बहुत कम है। मैं आपके शुभ कार्य में बाधा न दूँगा। लीजिए, मैं चला।

अक्षय के चले जाने पर रमेश घनानन्द बाबू के यहाँ गया। घर में पाँव रखते ही नलिनी से उसकी भेंट हुई। आज रमेश ज़रूर सबेरे ही आवेंगे, यह नलिनी को पूरा विश्वास था। इससे वह पहले ही से तैयार बैठी थी। उसने सिलाई के सामान को रूमाल में बाँधकर मेज़ पर रख दिया था। पास ही हारमोनियम बाजा रक्खा था। उसकी इच्छा थी कि रमेश बाबू आवें तो कुछ गाना-बजाना हो।

घर में रमेश के आते ही नलिनी के मुँह पर प्रसन्नता की झलक दिखाई दी, किन्तु वह तुरन्त ही छिप गई। तब

रमेश ने और कुछ न कहकर पहले यही पूछा—बाबूजी कहाँ हैं ?

नलिनी—ऊपर के कमरे में। क्यों ? क्या उनसे कोई काम है ? चाय पीने के समय पर ही वे यहाँ आवेंगे।

रमेश—नहीं, मुझे एक ज़रूरी काम है। विलम्ब करना ठीक न होगा।

नलिनी—तो जाइए! वे उसी कमरे में हैं।

रमेश वहाँ से चला गया। कार्य के आगे आज प्रेम को किनारे रहना पड़ा। आवश्यकता प्रतीक्षा नहीं करती, प्रेम को ही समय की प्रतीक्षा करनी पड़ती है।

शरद् के निर्मल समय ने ठण्डी साँस छोड़कर मानो आज अपने आनन्द-भाण्डार का स्वर्णमय सिंह-द्वार बन्द कर दिया। नलिनी हारमोनियम के पास से अपनी चौकी खिसका-कर मेज़ के पास ले गई और मन को स्थिर करके सिलाई करने लगी। सूई छिदने लगी, सिर्फ़ बाहर ही नहीं बल्कि भीतर भी! रमेश का कार्य भी शीघ्र समाप्त न हुआ। कार्य ने राजा की भाँति अपना पूरा समय लिया। और प्रेम, वह तो बेचारा कङ्गाल है।

चौदहवाँ परिच्छेद

रमेश घनानन्द बाबू के शयनगृह में गया। उस समय घनानन्द बाबू मुँह पर समाचार-पत्र रक्खे आरामकुर्सी पर लेटे सुख की नींद ले रहे थे। रमेश के खाँसने का शब्द सुनकर वे चौंककर जाग उठे। अख़बार को मोड़कर बोले—क्या तुमने समाचार-पत्र में देखा है कि इस साल हैज़े से कितने लोग मरे हैं?

रमेश ने उनके प्रश्न का कुछ उत्तर न देकर कहा—विवाह को कुछ दिन के लिए रोकना होगा। मुझे एक बहुत ज़रूरी काम है।

घनानन्द बाबू के दिमाग़ से शहर की मृत्यु-संख्या का हिसाब एकदम उड़ गया। वे कुछ देर तक क्षुब्ध हो रमेश के मुँह की ओर देखकर बोले—यह क्या? विवाह का निमन्त्रण लोगों को दिया जा चुका है!

रमेश—विवाह का दिन इस रविवार के बदले अगले रविवार को बदल दिया जाय, और इसकी सूचना आज ही लोगों को दे दी जाय।

घनानन्द बाबू—रमेश, तुमने तो मुझे निरुत्तर कर दिया यह क्या मुक़द्दमा है, जो तुम अपनी सुविधा के अनुसार

नलिनी का चेहरा उतर गया। उसने एक बार रमेश के मुँह की ओर देखा। रमेश अपराधी की भाँति चुपचाप बैठा रहा।

रमेश को यह आशा न थी कि नलिनी को यह ख़बर इस तरह दी जायगी! और न वह उसे इस तरह ख़बर देना चाहता था। एकाएक इस तरह यह अप्रिय वार्ता सुनने से नलिनी के हृदय में जो मर्मान्तिक वेदना हुई वह रमेश समझ गया। किन्तु जो तीर हाथ से एक बार छोड़ दिया गया वह क्या फिर लौट सकता है? रमेश ने देखा, यह तीक्ष्ण बाण नलिनी के हृदय में घुस गया!

अब उसके इस नये घाव पर मरहम-पट्टी चढ़ाने का समय न रहा। जो बात मुँह से निकल गई वह अवश्य ही होगी। विवाह को रोक रखना होगा। रमेश को कोई ज़रूरी काम है। क्या काम है, सो भी वह किसी से कहना नहीं चाहता। जब मूल का पता नहीं तब उस विषय पर और टीका-टिप्पणी हो ही क्या सकती है?

घनानन्द ने नलिनी की ओर देखकर कहा—सब काम तुम सबके हाथ है। अब तुम सोच-समझकर जैसा उचित समझो, करो।

नलिनी ने सिर नीचा करके कहा—"मैं इस विषय में कुछ नहीं जानती।" यह कहकर वह कमरे से बाहर हो गई।

घनानन्द मुँह पर फिर अख़बार रखकर सो रहने का बहाना करके सोचने लगे। रमेश चुपचाप बैठा रहा।

रमेश कुछ देर तक उसी तरह मन मारे बैठा रहा। फिर एकाएक उठकर चला गया। बड़े कमरे में जाकर देखा, नलिनी खिड़की के पास चुपचाप खड़ी है। उसकी दृष्टि के आगे निकटवर्त्ती दशहरे की छुट्टा का मनोहर दृश्य मौजूद है। दशहरे के उपलक्ष में ख़रीदारों का चारों ओर कोलाहल हो रहा है।

रमेश को एकाएक उसके पास जाने का साहस न हुआ। पीछे से कुछ देर तक वह उसके मुँह की ओर स्थिर दृष्टि से देखता रहा। शरद् ऋतु के अपराह्न की विशद प्रभा में इस वातायनवर्तिनी स्तब्ध मूर्ति ने रमेश के हृदय में एक चिर-स्थायी चित्र अङ्कित कर दिया। उस कोमल कपोल की वह स्निग्धता, पीठ पर लटकती हुई वह सयत्न-रचित काली नागिन सी कुटिल चोटी, गले में सोने के चन्द्रहार का सुन्दर आभास, बाँये कन्धे के नीचे लटकते हुए आँचल का टेढ़ा छोर—ये सब फ़ोटो की तरह उसके पीड़ित हृदय-पट पर ज्यों के त्यों अङ्कित हो गये।

रमेश धीरे-धीरे नलिनी के पास आकर खड़ा हुआ। नलिनी रमेश की अपेक्षा मानों सड़क पर जाते हुए लोगों की ओर विशेष उत्सुकता से देखने लगी। रमेश ने रुँधे कण्ठस्वर से कहा—आपसे मेरी एक प्रार्थना है।

रमेश के कोमल कण्ठ-स्वर ने नलिनी के व्यथित हृदय को और भी मसोस डाला। वह बेचारी तीव्र वेदना के आघात

का अनुभव कर रमेश की ओर मुँह करके खड़ी हुई। रमेश ने कहा—"तुम मुझ पर अविश्वास न करना।" रमेश ने इसके पहले कभी नलिनी को 'तुम' न कहा था। "तुम मुझसे सच-सच कहो, कभी मुझ पर अविश्वास तो न करोगी! मैं भी अन्तर्यामी भगवान् को साक्षी करके कहता हूँ, कि मैं कभी तुम्हारे निकट अविश्वासी न बनूँगा।"

इससे अधिक रमेश के मुँह से और कोई बात न निकली। उसका गला रुँध गया। आँखों में आँसू भर आये। नलिनी स्नेह और करुणा-भरी दृष्टि से रमेश का मुँह देखने लगी। इसके अनन्तर नलिनी की आँखों से आँसू की धारा बहकर उसके दोनों गालों को भिगोती हुई नीचे गिरने लगी। देखते ही देखते एकान्त में उस खिड़की के पास दोनों के बीच वाक्य-विहीन स्वर्गीय शान्ति छा गई।

कुछ देर तक दोनों की यही दशा रही। पश्चात् धीरज धरकर रमेश ने बड़े साहस से कहा—मैंने एक सप्ताह के लिए क्यों विवाह रोक रखने का प्रस्ताव किया है, क्या इसका कारण तुम जानना चाहती हो ?

नलिनी ने सिर हिलाकर जतलाया कि मैं नहीं जानना चाहती।

रमेश ने कहा—विवाह हो जाने पर मैं सब बात तुमसे खोलकर कहूँगा।

इस बात से नलिनी का मुँह कुछ लाल हो गया।

आज भोजन के उपरान्त जब नलिनी रमेश से मिलने की आशा से उल्लासपूर्वक शृङ्गार कर रही थी तब उसके मन में भाँति-भाँति के भाव उत्पन्न हो रहे थे। वह मन ही मन कल्पना के द्वारा अनेक हास्य-विनोद, अनेक गुप्त परामर्श और अनेक सुखों की आशा कर रही थी। किन्तु यह जो थोड़े ही समय में दोनों के हृदय के बीच विश्वास की माला का फेर-बदल हो गया, यह जो आँखों से आँसू की धार बह चली, दोनों जो एक अपूर्व भाव-भरी दृष्टि से परस्पर मुखावलोकन करने लगे, दोनों जो कुछ देर तक कुछ न बोले और चित्रवत् खड़े रहे, इस अवस्था के विशेष सुख, गम्भीर शान्ति और धैर्य्य का उसने कभी स्वप्न में भी अनुभव न किया था,—इस दशा का चित्र वह कभी कल्पना के द्वारा अपने हृदय-पट पर न खींच सकी थी।

नलिनी ने कहा—आप एक बार पिताजी के पास जाइए, वे कुछ चिढ़ गये हैं।

रमेश बड़ी ख़ुशी के साथ संसार के सभी आघात-सङ्घात सहने के लिए, छाती मज़बूत करके, घनानन्द बाबू की बैठक की ओर गया।

पन्द्रहवाँ परिच्छेद

घनानन्द बाबू ने रमेश को फिर कमरे में आते देख क्षुभित चित्त से उसके मुँह की ओर निहारा। रमेश ने कहा—यदि आप निमन्त्रण की फ़िहरिस्त मुझको दें तो मैं आज ही सबको ब्याह की तारीख़ बदलने की सूचना पत्र द्वारा दे दूँ।

घनानन्द बाबू—तो क्या तारीख़ बदलने की ही बात स्थिर रही?

रमेश—हाँ! और तो कोई उपाय ही नहीं।

घनानन्द—अच्छा, तो देखो बाबू! मैं इस झंझट से अलग होता हूँ। जो कुछ प्रबन्ध करना हो सो तुम आपही करो। मैं लोगों में अपनी हँसी न कराऊँगा। यदि विवाह को अपनी मर्ज़ी के मुताबिक़ तुम बच्चों का खेल कर लोगे तो मेरे सदृश बूढ़े व्यक्ति का इसके बीच न पड़ना ही अच्छा है। यह लो अपने निमन्त्रण की सूची। अभी इन कामों में मैंने कितने ही रुपये ख़र्च कर डाले हैं, वे बहुधा व्यर्थ ही होंगे। मेरे पास इतना धन नहीं है कि इस तरह बार-बार मैं पानी में रुपया फेंकूँ।

रमेश सब ख़र्च और प्रबन्ध का भार अपने ऊपर लेने को तैयार हुआ। हाथ में सूची लेकर जब वह जाने लगा तब घनानन्द ने उससे पूछा—कहो रमेश! विवाह होने के बाद

तुम कहाँ रहोगे ? यहाँ रहकर प्रैक्टिस करोगे या कहीं अन्यत्र ? कुछ निश्चय किया है ?

रमेश –यहाँ रहने का तो विचार नहीं है। पश्चिम में एक अच्छी सी जगह पसन्द करके रहूँगा।

घनानन्द—ठीक है, पच्छिम में रहना ही अच्छा है। इटावा तो ख़राब जगह नहीं है। वहाँ की आब-हवा बहुत अच्छी है। खाना जल्द हज़म होता है। मैं वहाँ एक महीने तक था। उसी एक महीने में मेरे भोजन का परिमाण दुगना बढ़ गया था। देखो रमेश ! संसार मे मेरे यही एक मात्र लड़की है—मैं उसके पास न रहूँगा तो वह सुखी न रहेगी। मैं भी निश्चिन्त न रह सकूँगा। इसी से मेरी इच्छा है कि तुम अपने लिए एक स्वास्थ्यकर जगह ढूँढ़ो।

घनानन्द बाबू रमेश का एक अपराध पाकर उस पर बड़ी-बड़ी हुकूमतें चढ़ाने लगे। उस समय यदि वे इटावा न कह-कर सूरत या चेरापूँजी का नाम लेते तो भी वह उसी को निर्विवाद स्वीकार कर लेता। उसने कहा—"जो आपकी आज्ञा, मैं इटावे में रहकर ही प्रैक्टिस करूँगा।" यह कह-कर वह निमन्त्रण की तिथि बदलने का काम अपने हाथ में लेकर वहाँ से बिदा हुआ।

रमेश के जाने के कुछ देर बाद अक्षय को घर के भीतर पैर रखते देख घनानन्द ने कहा—रमेश ने अपने ब्याह का दिन एक सप्ताह आगे बढ़ा दिया है !

अक्षय—नहीं, नहीं, यह आप क्या कहते हैं ! ऐसा कभी हो सकता है ? परसों विवाह होगा ही।

घनानन्द—हो जाना ही ठीक था। साधारण लोग भी ऐसा नहीं करते। किन्तु आजकल तुम लोगों की जैसी कुछ रीति-नीति देखता हूँ, उससे सब कुछ होना सम्भव है।

अक्षयकुमार अत्यन्त गम्भीर बनकर बड़े आडम्बर के साथ चिन्ता करने लगा। कुछ देर के बाद उसने कहा—जिसे आप सत्पात्र ठहरा चुके हैं उसके सम्बन्ध में अभी तक आपने कुछ जाँच नहीं की। दोनों आँखें मूँदे बैठे हैं। कहिए तो, जिसको आप लड़की सदा के लिए देना चाहते हैं उसके सम्बन्ध की सब बातों की खोज-ख़बर रखना आपको उचित है या नहीं ? क्या जानें, क्या करते क्या हो जाय। वे स्वर्ग ही के देवता क्यों न हों, पर अपनी ओर से सावधान रहने में क्या हर्ज है ?

"सहसा करि पाछे पछताहीं। कहैं वेद बुध ते बुध नाहीं।"

घनानन्द—यदि रमेश के सदृश सुशील लड़के पर भी सन्देह किया जाय तो फिर संसार में विश्वास किसका किया जाय ?

अक्षय—अच्छा, रमेश बाबू ने जो ब्याह का दिन हटाया है, इसका उन्होंने कुछ कारण भी बताया ?

घनानन्द बाबू सिर पर हाथ फेरते हुए बोले—नहीं, कारण तो कुछ नहीं बताया। पूछने पर कहा, एक आवश्यक कार्य है।

अक्षय मुँह फेरकर हँसा और बोला—शायद उसने आपकी लड़की से इसका कारण कहा होगा।

घनानन्द—सम्भव है।

अक्षय—नलिनी को एक बार बुलाकर पूछ लेने में क्या हर्ज है?

घनानन्द—कोई हर्ज नहीं। उन्होंने उच्च स्वर से नलिनी को पुकारा।

कमरे में अक्षयकुमार को देखकर नलिनी अपने पिता के पास आकर इस तरह खड़ी हुई जिसमें अक्षयकुमार की दृष्टि उसके मुँह पर न पड़े।

घनानन्द ने नलिनी से पूछा—विवाह का दिन जो एकाएक इस तरह हटाया गया, उसका कुछ कारण रमेश ने तुमको नहीं बतलाया?

नलिनी ने सिर हिलाकर जताया—नहीं।

घनानन्द—तुमने उससे कुछ पूछा भी नहीं?

नलिनी—नहीं।

घनानन्द—बड़े आश्चर्य का विषय है। जैसा रमेश है, वैसी ही तुम भी भोली-भाली हो। उसने कहा—"मुझे ब्याह करने की .फ़ुरसत नहीं है।" तुमने कहा—"अच्छा, क्या हर्ज है! अब न सही, आगे ही होगा।" अभी क्यों नहीं होगा, इसका कारण किसी को मालूम नहीं।

अक्षयकुमार ने नलिनी का पक्ष लेकर कहा—एक व्यक्ति जब जान-बूझकर कारण छिपा रहा है तब उस विषय में उससे कुछ पूछना क्या उचित है? अगर वह बात कहने योग्य होती तो रमेश बाबू आप ही न कहते?

नलिनी का मुँह लाल हो गया। उसने कहा—मैं इस विषय में बाहरी लोगों से कुछ कहना-सुनना नहीं चाहती। जो कुछ हुआ है उससे मेरे मन में कोई क्षोभ नहीं।

यह कहकर नलिनी वहाँ से चली गई।

अक्षयकुमार ने सूखी हँसी हँसकर कहा—संसार में सबसे अधिक कलङ्क का भय मित्रता के कार्य ही में है। इसी लिए बन्धुत्व के गौरव का मैं विशेष अनुभव कर रहा हूँ। आप लोग भले ही मुझसे घृणा कीजिए, गाली दीजिए, किन्तु मैं रमेश पर सन्देह करना ही मित्र का कर्तव्य समझता हूँ। जहाँ आप लोगों की विपत्ति की सम्भावना है वहाँ मैं स्थिर नहीं रह सकता। यही एक मुझमें भारी दोष है। इसे मैं ख़ुद क़बूल करता हूँ। जो हो, योगेन्द्र तो कल आवेंहीगे। यदि वे भी सब बात समझ-बूझकर चुप हो रहेंगे तो फिर इस विषय में कुछ बोलने का साहस मैं न करूँगा।

रमेश के शील-स्वभाव के सम्बन्ध में प्रश्न करने का समय उपस्थित है—यह घनानन्द बाबू न जानते हों सो नहीं; किन्तु जो बात परदे के भीतर छिपी है उसे बल-पूर्वक बाहर निकालने के हेतु माथा-पच्ची करना वे व्यर्थ

समझते थे। अतएव इसके लिए उन्होंने कुछ आग्रह नहीं किया।

अक्षयकुमार पर उन्हें क्रोध हुआ। उन्होंने कहा—अक्षय! तुम्हारा चित्त बड़ा ही संशयालु है; तुम हमेशा सन्देह किया करते हो। बिना प्रमाण पाये तुम क्यों—

अक्षय अपने को दबाना जानता था। किन्तु बार-बार धक्के खाते-खाते आज उसका धैर्य लुप्त हो गया। उसने बड़ी उत्तेजना के साथ कहा—देखिए बाबूजी! मैं न जाने कितने दोषों का भाण्डार हूँ। मैं अच्छे-अच्छे लोगों से ईर्ष्या करता हूँ, साधु-सच्चरित्र लोगों पर सन्देह करता हूँ। भले घर की लड़कियों को फ़िलासफ़ी पढ़ाने योग्य विद्या मेरे पास नहीं। दूसरे, मैं उन सबों के साथ काव्य की आलोचना करने की स्पर्धा भी नहीं रखता। मैं साधारण लोगों में ही परिचित तथा गण्य समझा जाता हूँ। परन्तु मैं बहुत दिनों से आपका अनुरागी और अनुगत हूँ। रमेश बाबू के साथ मेरी किसी विषय में बराबरी नहीं हो सकती। किन्तु एक बात मैं गौरव के साथ कहता हूँ। वह यह कि आपके पास किसी दिन मुझे मुँह न छिपाना पड़ेगा—आपके आगे मैं अपनी सारी दीनता प्रकट कर कुछ माँग ले सकता हूँ, किन्तु सेंध काटकर चोरी करने का स्वभाव मेरा नहीं है। इस बात का मतलब कल ही आप लोगों को मालूम हो जायगा।

सोलहवाँ परिच्छेद

निमन्त्रित व्यक्तियों के पास चिट्ठी रवाना करते-करते रमेश को रात हो गई। वह सोने गया पर नींद न आई। उसके हृदय में गङ्गा-यमुना की भाँति उजले और काले रङ्ग की चिन्ता-नदी बड़े वेग से प्रवाहित हो रही थी। दोनों नदियों की तरङ्ग एक साथ मिलकर तट के धैर्य्य-रूपी वृक्ष की जड़ पर आघात पहुँचा रही थी।

बार-बार बड़ी बेचैनी के साथ करवटें बदलकर वह उठ बैठा। खिड़की के पास खड़े होकर उसने देखा—सामने जन-शून्य गली में एक ओर घरों की छाँह और एक ओर स्वच्छ चाँदनी की छटा शोभित है।

रमेश चुपचाप खड़ा रहा। जो नित्य है, जो शान्त है, जो विश्वव्यापी है, जो एक है, जिसके भीतर द्विविधा का गन्ध नहीं, उसमें रमेश की समस्त अन्तःप्रकृति विगलित होकर मिल गई। जिस शब्दविहीन सीमा-विहीन महालोक के नेपथ्य से अनादिकाल से जन्म और मृत्यु, कर्म और विश्राम, आरम्भ और अवसान, किसी अश्रुत सङ्गीत के विचित्र ताल के साथ-साथ संसार-रूपी रङ्गभूमि में प्रवेश कर रहा है—उसी प्रकाश और अन्धकार-रहित स्थान से रमेश ने स्त्री-पुरुष के युगल

प्रेम को नक्षत्र-दीपों से आलोकित इस ब्रह्माण्ड के भीतर आविर्भूत होते देखा।

तब रमेश धीरे-धीरे छत के ऊपर गया। घनानन्द बाबू के घर की ओर देखा। सर्वत्र सन्नाटा छाया है। घर की दीवार पर, कार्निश के नीचे, जँगले और दर्वाजों की साँस में, और बे-मरम्मत दीवार पर केवल छाया और चन्द्रमा के प्रकाश का सम्मिलनमात्र दिखाई देता है।

अहा! यह कैसा आश्चर्य है! इस जनपूर्ण नगर के भीतर इस साधारण घर में मानवी के वेश में यह कैसा विस्मय है। इस राजधानी में कितने ही छात्र हैं, कितने ही वकील हैं, कितने ही विदेशी और कितने ही नगर-निवासी हैं। उन सबों में रमेश के सदृश एक साधारण व्यक्ति ने एक दिन आश्विन के पिछले पहर की धूप में खिड़की के पास एक बालिका के समीप चुपचाप खड़े होकर जीवन को और जगत् को एक अपरिसीम आनन्दमय रहस्य के भीतर भासमान देखा। अहा! वह कैसा अद्भुत दृश्य था! हृदय के भीतर आज यह क्या आश्चर्य है! हृदय के बाहर आज यह क्या अद्भुत चमत्कार है!

बहुत रात तक रमेश छत ही पर घूमता रहा। धीरे-धीरे चन्द्र सामनेवाली दीवार की ओट में न जाने कब छिप गया। पृथ्वी-तल पर रात्रि की कालिमा सघन हो गई—आकाश उस समय भी, बिदाई के लिए तैयार, प्रकाश के आलिङ्गन से धूसर रंग का था।

रमेश का थका हुआ शरीर शरद् के शीत से काँपने लगा। हठात् रह-रहकर एक आशङ्का उसके हृदय को मसोसने लगी। उसे स्मरण हो आया, कल जीवन के रणक्षेत्र में फिर संग्राम करने के लिए बाहर होना पड़ेगा। यद्यपि इस आकाश में चिन्ता का चिह्न नहीं, यद्यपि रात निःस्तब्ध और शान्त थी, और विश्व की प्रकृति इस अगणित नक्षत्रलोक के चिर-कर्म के भीतर चिर-विश्राम में लीन थी, तो भी मनुष्यों के आवागमन और कलह-विवाद का बाज़ार गर्म था। समस्त जनसमाज सुख-दुःख और बाधा-विघ्न के झोंके खा रहे हैं। एक ओर अनन्त ब्रह्माण्ड की वह शाश्वतिक शान्ति और एक ओर संसार का यह रोज़-रोज का झमेला। दोनों एक ही समय में एक साथ कैसे रह सकते हैं? ऐसी चिन्तित अवस्था में भी रमेश के मन में इस प्रश्न का उदय हुआ। कुछ देर पहले रमेश ने जो विश्वलोक के रङ्गालय में प्रेम की एक अखण्ड शान्त मूर्ति देखी थी उसको क्षणभर के बाद संसार के संघर्ष और जीवन की जटिलता से पग-पग में क्षुब्ध और क्षीण होते देखा! इसमें कौन सत्य और कौन मिथ्या है!

सत्रहवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन सबेरे की गाड़ी से योगेन्द्र पश्चिम से लौट आया। आज शनिवार है। कल रविवार को नलिनी का ब्याह होने की बात थी। किन्तु योगेन्द्र ने अपने मकान के फाटक के पास आकर उत्सव का कोई भी चिह्न नहीं देखा। वह मन ही मन सोचता आता था कि अब मेरे घर में मङ्गलाचार आरम्भ हो गया होगा। तोरण बन्दनवार से दर्वाज़ा अलङ्कृत हुआ होगा। नज़दीक आकर देखा तो पास के उत्सव-विहीन घरों के साथ उसके घर में कोई प्रभेद नहीं है।

उसे भय हुआ, शायद दो में कोई एक बीमार होगा। कमरे में प्रवेश करके देखा, चाय की टेबल पर उसके लिए कलेऊ की सामग्री प्रस्तुत है, और घनानन्द बाबू आधा प्याला चाय पीकर, सामने प्याला रक्खे, अख़बार पढ़ रहे हैं।

योगेन्द्र ने आते ही पूछा—नलिनी अच्छी है?

घनानन्द—हाँ, अच्छी है।

योगेन्द्र—ब्याह का क्या हुआ?

घनानन्द—अगले रविवार को होगा।

योगेन्द्र—यह क्यों?

घनानन्द—यह तुम अपने मित्र से जाकर पूछो। रमेश ने सिर्फ़ हम लोगों से इतना ही कहा है कि एक विशेष कार्य है। इस रविवार को ब्याह न होगा।

योगेन्द्र ने अपने दुर्बल-हृदय पिता पर मन ही मन रुष्ट होकर कहा—बाबूजी, मेरे न रहने से आप लोगों के कामों में बड़ी गड़बड़ होती है। रमेश को ऐसा काम ही क्या होगा? वह तो स्वाधीन है। उसका ऐसा कोई आत्मीय भी नहीं। यदि उसके घर पर कोई ज़रूरी काम रहता तो उसे प्रकट करने में बाधा ही क्या थी? आपने रमेश को क्यों इस तरह लापरवाही के साथ छोड़ दिया?

घनानन्द—अच्छा, अभी तो वह कहीं गया नहीं है। तुम्हीं जाकर उससे क्यों नहीं पूछ लेते?

योगेन्द्र तुरन्त प्याले भर गरम चाय पीकर घर से बाहर हुआ।

घनानन्द बाबू ने कहा—योगेन्द्र! इतनी जल्दी क्या है? तुमने कुछ खाया-पिया नहीं?

यह बात योगेन्द्र के कान तक नहीं पहुँची। वह रमेश के घर में घुसकर सीढ़ियों पर खटाखट पैर रखता हुआ एकदम ऊपर चला गया। वहाँ जाकर उसने "रमेश, रमेश" कहकर कई बार पुकारा, पर कहीं से कोई उत्तर न आया। ख़ूब खोजकर देखा। रमेश सोने के कमरे में नहीं, बैठक में नहीं, छत पर नहीं, नीचे की कोठरी में नहीं, तब वह गया ही कहाँ? जब रमेश का कुछ पता न लगा तब उसने नौकर को बुलाकर पूछा—बाबू कहाँ हैं?

नौकर—बाबू आज सबेरे से कहीं बाहर गये हैं।

योगेन्द्र—कब आवेंगे?

नौकर—वे अपना कुछ ज़रूरी सामान लेते गये हैं। कह गये हैं, चार-पाँच दिन में लौटेंगे। कहाँ गये हैं, मुझे मालूम नहीं।

योगेन्द्र गम्भीर चिन्ता में निमग्न होकर वहाँ से वापस आया और चाय की टेबुल के पास बैठा। घनानन्द बाबू ने पूछा—क्यों, क्या हुआ?

योगेन्द्र ने क्रुद्ध होकर कहा—होगा क्या? जिसके साथ दूसरे ही दिन लड़की के ब्याह देने की बात है उसे कौन काम ज़रूरी हो पड़ा है? वह कब कहाँ रहता है,—आप लोग इसकी कुछ भी खोज-ख़बर नहीं रखते, यद्यपि उसका घर आपके घर के पास ही है।

घनानन्द—क्यों, कल रात को तो रमेश यहीं था।

योगेन्द्र ने उत्तेजित होकर कहा—आप लोग नहीं जानते कि वह कहाँ जायगा। नौकर को भी मालूम नहीं कि वह कहाँ गया। यह कैसा लुका-चोरी का व्यवहार है? यह मुझे अच्छा नहीं लगता। आप इस तरह निश्चिन्त होकर क्यों बैठ रहे?

घनानन्द बाबू इस भर्त्सना से अत्यन्त चिन्तित होने का भाव दिखाकर बोले—वही तो कहते हैं, यह क्या हो रहा है?

व्यवहार-ज्ञान-विहीन रमेश चाहता तो कल रात को अनायास ही घनानन्द बाबू से कहकर बिदा माँग लेता। किन्तु यह बात उसे नहीं सूझी। उसने जो कहा कि "एक बहुत ज़रूरी काम है" इसी के भीतर मानों उसने सब बातें कह दीं। रमेश की यही धारणा थी। एक ही बात कहकर उसने, हर तरह से छुटकारा पाकर, अपने कर्तव्य-साधन में चित्त लगाया।

योगेन्द्र ने पूछा—नलिनी कहाँ है ?

घनानन्द—वह सबेरे चाय पीकर ऊपर गई है।

योगेन्द्र—रमेश के इस विचित्र आचरण से जान पड़ता है वह बेचारी बहुत लज्जित है, इसी कारण वह मुझसे भेंट न करके ऊपर चली गई है।

संकुचित और व्यथित नलिनी को आश्वासन देने के लिए योगेन्द्र ऊपर गया। नलिनी कमरे के भीतर चौकी पर अकेली चुपचाप बैठी थी। योगेन्द्र के आने की आहट पाकर वह झटपट हाथ में एक पुस्तक लेकर पढ़ने लगी। भीतर योगेन्द्र के आते ही वह हाथ से पुस्तक रखकर झट उठ खड़ी हुई और मुस्कुराती हुई बोली—भैया, कब आये ? आप कुछ प्रसन्न नहीं हैं !

योगेन्द्र ने चौकी पर बैठकर कहा—उदास दीखने की बात ही है। मैंने सब हाल सुना है। तुम कुछ चिन्ता न करो। मैं नहीं था, इसी से यह गोलमाल हुआ। मैं सब ठीक कर दूँगा। अच्छा, यह तो बताओ, रमेश ने तुमको कोई कारण भी बतलाया ?

नलिनी बड़ी मुश्किल में पड़ी। रमेश के सम्बन्ध की यह सन्देह-भरी बात उसे असह्य हो उठी थी। "रमेश ने मुझसे विवाह का दिन हटाने का कोई कारण नहीं कहा।"—यह बात वह योगेन्द्र से कहना नहीं चाहती और झूठ बोलना भी उसके लेए असम्भव है। उसने योगेन्द्र से यही कहा—वे कहने को तैयार थे, पर मैंने सुनने की कोई आवश्यकता नहीं समझी।

योगेन्द्र ने समझा, यह रूठने का विषय है, और इस तरह का अभिमान होना स्वाभाविक है। उसने कहा—अच्छा, तुम कुछ खेद मत करो, मैं आज ही कारण का पता लगा लूँगा।

नलिनी किताब के पत्रों को व्यर्थ उलटते-उलटते हुए बोली—भैया, मैं खेद क्यों करूँगी। मैं नहीं चाहती कि आप कारण जानने के लिए उन्हें तकलीफ़ दें।

योगेन्द्र ने सोचा, यह भी रूठ जाने ही की बात है। कहा—अच्छा, तुम इसके लिए कुछ अन्देशा मत करो। यह कहकर वह जाने को उद्यत हुआ।

नलिनी ने चौकी से उठकर कहा—नहीं भैया! आप इस विषय में उनसे कुछ पूछ-ताछ न करें। आप लोग भले ही उन पर सन्देह करें, परन्तु मैं उन पर रत्ती भर भी सन्देह नहीं करती।

योगेन्द्र के कान खड़े हुए। उसने मन ही मन सोचा, यह अभिमान की सी बात नहीं जान पड़ती। यह सोचकर वह स्नेह-सहित दया के कारण मन ही मन हँसा। उसने सोचा, इसको अभी संसार का कुछ भी ज्ञान नहीं है। यद्यपि यह बहुत कुछ लिखना-पढ़ना सीख गई है और घर-बाहर की भली भाँति खोज-ख़बर भी रखती है तो भी यह अभिज्ञता अभी इसे नहीं हुई कि किस जगह सन्देह करना चाहिए। इस निःसंशय और पूर्ण विश्वास के साथ रमेश के कपट-व्यवहार की तुलना करके योगेन्द्र मन ही मन रमेश पर और भी क्रुद्ध हो उठा। कारण

जानने की प्रतिज्ञा उसके मन में और भी दृढ़ हुई। योगेन्द्र जब दूसरी बार जाने को उद्यत हुआ तब नलिनी ने उसका हाथ पकड़-कर कहा—भैया, आप प्रतिज्ञा कीजिए कि उनके पास इन बातों का कुछ भी ज़िक्र न करेंगे।

योगेन्द्र—देखा जायगा।

नलिनी—नहीं भैया, यह बात नहीं। आप मुझको वचन देकर जाइए। मैं सच कहती हूँ, आप लोग किसी तरह की आशङ्का न करें। आप मेरी यह बात मान लीजिए।

नलिनी की ऐसी दृढ़ता देखकर योगेन्द्र ने सोचा—अवश्य ही रमेश ने इससे सब बात कही है। किन्तु नलिनी को कुछ कहकर भुलाना कठिन नहीं। अतएव उसने कहा—देखो बहन, अविश्वास की इसमें कोई बात नहीं। कन्यापक्ष के अभिभावकों का जो कर्तव्य है वह तो करना ही होगा। उसके साथ तुम्हारा कुछ समझौता हो गया हो तो तुम जानो। किन्तु इतने ही से काम न चलेगा। हमको भी तो उसकी बातें जान लेनी चाहिएँ। सच बात कहने में क्या हानि है? तुमसे भी अधिक अभी हमीं उसके परिचय के विशेष जिज्ञासु हैं। ब्याह हो जाने पर फिर हम लोगों को कुछ कहने-सुनने का अधि-कार नहीं रहेगा।

इतना कहकर योगेन्द्र चला गया। प्रेम जो ओट खोजता था वह न मिली। नलिनी और रमेश का जो प्रेम-सम्बन्ध क्रम-क्रम से घनिष्ठ होकर दोनों को विवाह-सूत्र में बाँधकर

सदा के लिए एक कर देना चाहता था, उसी पर आज बार-बार सन्देह-कुठार का आघात हो रहा है। सब लोग उसके विरुद्ध भाषण कर रहे हैं। चारों ओर इस नये आन्दोलन की बात से नलिनी के हृदय में बड़ी चोट लगी। वह अब किसी से हुलसकर भेंट करना तक नहीं चाहती। योगेन्द्र के चले जाने पर नलिनी बड़ी उदासी से चौकी पर बैठ गई।

योगेन्द्र को बाहर आते देख अक्षय ने कहा—अच्छा, तुम आ गये! सब बातें तो सुनी ही होंगी। अब तुम क्या समझते हो?

योगेन्द्र—हाँ भाई! सब बातें सुन लीं। मन में अनेक भावनाएँ उठती हैं। उन्हें लेकर व्यर्थ वाद-विवाद करने से क्या होगा? अब क्या चाय की टेबल के पास बैठकर मनस्तत्त्व की सूक्ष्म आलोचना करने का समय है?

अक्षय—तुम तो जानते ही हो, सूक्ष्म आलोचना करने की मुझमें योग्यता नहीं। मैं सिर्फ़ काम की बात करना जानता हूँ। वही तुमसे कहने आया हूँ।

योगेन्द्र अधीर होकर बोला—अच्छा, वह पीछे कहना। बतलाओ, रमेश कहाँ गया है।

अक्षय—हाँ, बतला सकता हूँ।

योगेन्द्र—कहाँ है?

अक्षय—अभी मैं तुम्हें बतलाऊँगा नहीं। आज तीन बजे रमेश से मैं तुम्हारी भेंट ही करा दूँगा।

योगेन्द्र—बात क्या है, समझाकर कहो। तुम सब तो साक्षात् पहेली बन गये हो। मैं यही कुछ दिन घूमने को चला गया, इतने ही में यह पृथ्वी ऐसी भयानक रहस्यमय हो गई। अक्षय! तुम मुझसे सब बात खोलकर कहो। इस तरह छिपाने से कैसे बनेगा?

अक्षय—मैं आपकी बात से ख़ुश हुआ। बात न छिपाने ही के कारण तो मैं बदनाम हूँ। तुम्हारी बहन तो मेरा मुँह तक नहीं देखती। तुम्हारे पिताजी मुझे संशयालु कहकर गाली देते हैं। रमेश बाबू अब मुझे देखकर आँख चुराते हैं। अब केवल तुम्हीं एक बच रहे हो। तुमसे मैं बहुत डरता हूँ क्योंकि तुम सूक्ष्म विचार करनेवाले पुरुष नहीं, तुमको सिर्फ़ मोटा-मोटा काम करना आता है। मैं आलसी आदमी हूँ। मैं तुम्हारे किसी काम के लायक़ नहीं।

योगेन्द्र—तुम्हारी यह पेचीली चाल मुझे अच्छी नहीं लगती। मैं समझ गया हूँ, तुम मुझसे कुछ कहना चाहते हो, उत्सुकता बढ़ाने के लिए इतनी बात बनाने की ज़रूरत क्या? निष्कपट भाव से जो कहना हो कह डालो। बात ख़तम हो जाय।

अक्षय—अच्छी बात है, तो मैं शुरू से सब कह सुनाता हूँ। तुम्हें बहुतेरी बातें मालूम नहीं हैं।

अठारहवाँ परिच्छेद

रमेश ने दर्जीपाड़े में जो मकान लिया था उसकी मियाद अभी पूरी नहीं हुई। उसे और किसी को भाड़े पर देने के विषय में सोचने का रमेश को अब तक अवसर नहीं मिला। इधर कई महीनों से वह अपने को संसार से बाहर समझता था, लाभ-हानि का कुछ ख़याल ही न करता था।

आज उसने ख़ूब सबेरे उस मकान में जाकर उसे झाड़-बुहारकर साफ़ करवाया, चौकी के ऊपर जाजिम बिछवाई और खाने-पीने की चीज़ें मँगवा रक्खीं। आज स्कूल बन्द होने के बाद कमला को लाना होगा।

उसके आने में भी विलम्ब समझकर रमेश चौकी पर लेटकर भविष्यत् की बात सोचने लगा। इटावा उसने कभी नहीं देखा, किन्तु वहाँ के दृश्य की कल्पना करना कठिन नहीं। वह मन ही मन कल्पना करने लगा। शहर के एक महल्ले में उसका घर है। घर के पास से बहुत चौड़ी सड़क चली गई है, जिसके दोनों ओर क़तारबन्दी के साथ बड़े-बड़े पेड़ खड़े हैं। रास्ते के उस पार बहुत बड़ा मैदान है। उसमें बीच-बीच में कुएँ हैं। खेत सींचने के लिए मोट के द्वारा पानी निकाला जाता है। उसका करुण शब्द दिन भर सुनाई देता है। खेत के बीच में पशु-पक्षियों को भगाने के लिए जहाँ-

तहाँ मचान बँधे हैं। रास्ते में धूल उड़ाते हुए इक्के आते-जाते हैं। उनकी खड़खड़ाहट से धूप से तपा हुआ आकाश मुखरित होता है। इस सुदूर प्रवास के प्रखर ताप और निर्जनता के बीच वह अपने घर का द्वार बन्द करके दिन भर नलिनी के अकेले रहने का ध्यान कर क्लेश का अनुभव करता है और उसके पास कमला को चिरसखी के रूप में देखकर सुख पाता है।

रमेश ने मन में निश्चय किया है—अभी कमला से कुछ न कहूँगा। विवाह होने के बाद नलिनी, मौक़ा देखकर, उसे अपने हृदय से लगाकर करुणा और स्नेह के साथ धीरे-धीरे उससे उसका प्रकृत इतिहास कहेगी—वेदना जितनी स्वल्प हो सके उसी ढङ्ग से कमला को उसके जीवन का रहस्य सुनाया जायगा। इसके बाद उस दूर परदेश में, अपने परिचित समाज के बाहर, बिना ही किसी प्रकार का आघात लगे, कमला सहज ही हिल-मिलकर आत्मीय हो जायगी।

दोपहर का समय है। गली में सन्नाटा छाया है। जिनको आफ़िस जाना था वे आफ़िस चले गये। जिनको कहीं न जाना था वे सोने की चेष्टा कर रहे हैं। न बहुत गरमी है न बहुत ठण्डक। आश्विन का मध्याह्नकाल मधुर हो उठा है। शीघ्र होनेवाली तातील की ख़ुशी मानों सारे आकाश-मण्डल में छा गई है। रमेश अपने सूने घर में चुपचाप भावी सुख का चित्र खींचने लगा।

इसी समय बोझ से लदी हुई घोड़ागाड़ी का शब्द सुना गया। वह गाड़ी रमेश के घर के पास आकर ठहर गई। रमेश समझ गया कि स्कूल की गाड़ी कमला को पहुँचाने आई है। उसका हृदय चञ्चल हो उठा। वह कमला को कैसे देखेगा, उसके साथ किस ढङ्ग से बातचीत करेगा किंवा रमेश को वही किस भाव से देखेगी—हठात् इस चिन्ता ने उसके मन को डावाँडोल कर दिया।

नीचे उसके दो नौकर थे। उन्होंने कमला के असबाब को गाड़ी से उतारकर बरामदे में रक्खा। पश्चात् कमला कमरे के द्वार तक आकर खड़ी हो गई। भीतर न जा सकी।

- रमेश ने कहा—कमला ! भीतर आओ।

कमला ने सङ्कोच के आक्रमण को हटाकर धीरे-धीरे भीतर प्रवेश किया। रमेश ने तातील के दिनों में उसे बोर्डिङ्ग-हाउस में ही रखना चाहा था, किन्तु वह स्कूल की स्वामिनी से कह-सुनकर चली आई है। उसे वहाँ रहना पसन्द नहीं आया। इस घटना से, और इधर कई महीनों की जुदाई से रमेश के साथ उसके मन का भाव कुछ बदल गया था। इसी से वह भीतर प्रवेश करके रमेश के मुँह की ओर न देखकर ज़रा गर्दन टेढ़ी करके खिड़की के बाहर का दृश्य देखने लगी।

कमला को देखकर रमेश बड़े आश्चर्य में आ गया। उसने कमला के स्वरूप में बहुत कुछ परिवर्तन देखा। इन कई महीनों में वह और की और हो गई। स्वल्प पल्लववाली

लता की तरह वह बहुत कुछ बढ़ गई है। उसे अब सहसा कोई नहीं पहचान सकता कि यह वही कमला है। उसके जो अङ्ग कृश थे वे पुष्ट हो गये थे। उसके प्रत्येक अङ्ग से शोभा टपकी पड़ती थी। अब उसकी समझ-बूझ और भाव-भङ्गी में किसी तरह की कसर न थी। जब वह रमेश की ओर से नज़र फेरकर खिड़की के पास खड़ी हुई तब उसके मुँह पर शरत् का मध्याह्न-कालिक प्रकाश आ पड़ा। उसके सिर पर ओढ़निया न थी। उसकी गुँधी हुई चोटी, जिसका अग्रभाग लाल फ़ीते से बँधा था, पीठ पर पड़ी थी। गुलाबी रङ्ग की रेशमी साड़ी के भीतर से उसके उभरे हुए शरीर की ज्योति चारों ओर फैल रही थी।

उसका अपूर्व सौन्दर्य देखकर रमेश कुछ देर तक लुब्ध हो रहा।

कमला की सुन्दरता, इधर कई महीनों से न-देखने के कारण, रमेश को भूल सी गई थी। आज उसी सुन्दरता ने अपूर्व रूप धारण कर हठात् उसकी आँखों में चकाचौंध पैदा कर दी।

रमेश ने कहा—कमला! बैठो।

कमला एक कुरसी पर बैठ गई। रमेश ने पूछा—स्कूल में तुम्हारा लिखना-पढ़ना कैसा होता है?

कमला ने बहुत संक्षेप में कहा—अच्छा होता है!

रमेश सोचने लगा, अब क्या पूछना चाहिए। एकाएक उसके मन में एक बात का स्मरण हो आया। उसने कहा—

मालूम होता है, तुमने बहुत देर से कुछ खाया नहीं। तुम्हारे भोजन की सब सामग्री रक्खी है। तो यहीं मँगा दूँ ?

कमला--मैं खाकर आई हूँ, अभी न खाऊँगी।

रमेश—कुछ भी न खाओगी ? मिठाई न खाओ तो कुछ फल ही खा लो। सेब, नाशपाती और अनार मौजूद हैं।

कमला ने मुँह से कुछ न कहकर सिर हिला दिया।

रमेश ने फिर कमला के मुँह की ओर एक बार ध्यान से देखा। वह सिर नीचा किये अपनी अँगरेज़ी शिक्षा की पुस्तक में तसवीर देख रही थी। सुन्दर मुखड़ा, सोने की छड़ी की तरह, अपने चारों ओर के सुप्त सौन्दर्य को जगा देता है। शरद् ऋतु के प्रकाश को मानों एकाएक प्राण मिल गये। आश्विन के दिन ने मानों आकार धारण किया। केन्द्र जिस तरह अपनी परिधि को नियमित करता है उसी तरह इस लड़की ने आकाश, वायु और प्रकाश को मानों विशेष रूप से अपने चारों ओर खींच लिया। और वह स्वयं इसका कुछ हाल नहीं जानती, वह तो चुपचाप पुस्तक के चित्र देख रही है।

रमेश झट आप ही उठकर एक थाली में कितने ही फल ले आया। कमला से कहा—तुम कुछ नहीं खातीं तो मुझी को खिलाओ। मैं भूखा हूँ।

कमला मुस्कुराई। इस मुस्कुराहट से दोनों के मन का मालिन्य मिट गया।

रमेश छुरी लेकर सेब काटने लगा। किन्तु इन कामों में वह अल्हड़ था। उसकी एक ओर भूख की तेज़ी और दूसरी ओर बेढङ्गे तौर से सेब छीलते और उसके छोटे-बड़े टुकड़े काटते देख बालिका हँसी को रोक न सकी। वह खिलखिला उठी।

इस मीठी हँसी से ख़ुश होकर रमेश ने कहा—मैं अच्छी तरह सेब नहीं काट सकता, इसी से शायद तुम हँसती हो। अच्छा, तुम्हीं काटो। देखें, तुम कैसी कुशल हो।

कमला—हँसिया होता तो मैं काट देती। इस छुरी से नहीं काट सकती।

रमेश—तुम समझती हो, यहाँ हँसिया न होगा।—नौकर को बुलाकर उसने पूछा—"हँसिया है ?" नौकर ने कहा—है। कल सब चीज़ें बाज़ार से मँगा ली गई हैं।

रमेश—अच्छा, उसे अच्छी तरह पानी से धोकर ले आओ।

नौकर तुरन्त हँसिया ले आया।

कमला ने जूते उतार डाले। वह हँसिया लेकर बैठी और बड़ी प्रसन्नता से सेब और नाशपाती को छीलकर उनके बराबर-बराबर टुकड़े करने लगी। रमेश उसके सामने बैठकर फल के टुकड़ों को तश्तरी में रखने लगा।

रमेश ने कहा—तुमको भी खाना होगा।

कमला—नहीं।

रमेश—तो मैं भी न खाऊँगा।

कमला ने रमेश के मुँह की ओर दोनों आँखें उठाकर कहा—अच्छा! पहले आप खाइए, फिर मैं खाऊँगी।

रमेश—देखना, पीछे कहीं धोखा न देना।

कमला ने सिर हिलाकर गम्भीरतापूर्वक कहा—नहीं, मैं सच कहती हूँ, धोखा न दूँगी।

बालिका की इस सत्य प्रतिज्ञा से सन्तुष्ट होकर रमेश ने तश्तरी से फल का एक टुकड़ा उठाकर मुँह में रख लिया। दूसरा लेना ही चाहता था कि इतने में एकाएक देखा सामने ही, द्वार के बाहर, योगेन्द्र और अक्षय खड़े हैं।

अक्षय ने कहा—रमेश बाबू! माफ़ कीजिएगा। मैंने समझा कि आप यहाँ अकेले होंगे। फिर योगेन्द्र से कहा—देखो योगेन्द्र! बिना ख़बर दिये एकाएक यहाँ चले आये, यह अच्छा नहीं किया। ख़ैर, चलो नीचे जाकर बैठें।

कमला हँसिये को हटाकर झट उठ खड़ी हुई। घर से निकलने के द्वार पर ही वे दोनों खड़े थे। योगेन्द्र ज़रा हट गया। उसने घर से निकलने का मार्ग तो छोड़ दिया किन्तु कमला के मुँह पर से अपनी दृष्टि को न फिराया। उसे भली भाँति देख लिया। कमला सकुचकर दूसरे घर में चली गई।

उन्नीसवाँ परिच्छेद

योगेन्द्र ने कहा—रमेश ! यह स्त्री कौन है ?

रमेश—मेरी आत्मीया।

योगेन्द्र—कैसी आत्मीया ? गुरुजन तो जान नहीं पड़ती। प्रेम के सम्बन्ध की भी न होगी। तुम्हारे जितने आत्मीय हैं उनका नाम तो मैं प्राय: तुमसे सुन चुका हूँ। पर इस आत्मीया के विषय में तो तुमसे कभी कुछ नहीं सुना।

अक्षय—योगेन्द्र ! यह तुम्हारा अन्याय है। क्या मनुष्य के मन में कोई ऐसी बात नहीं रह सकती जो मित्र के निकट भी गोपनीय हो ?

योगेन्द्र—रमेश ! क्या सचमुच बात बहुत गोपनीय है ?

रमेश का मुँह लाल हो गया। उसने कहा—हाँ, गोपनीय है। मैं इस स्त्री के सम्बन्ध में तुम लोगों से कुछ कहना नहीं चाहता।

योगेन्द्र—किन्तु दौर्भाग्य-दोष से मुझे तुम्हारे साथ उसकी आलोचना करने की विशेष इच्छा है। यदि नलिनी के साथ तुम्हारे ब्याह की बात स्थिर न होती तो मुझे यह जानने की कोई आवश्यकता न थी कि किसके साथ तुम्हारी कैसी आत्मीयता है; जो गोपनीय है, वह गोप्य ही रहता।

रमेश ने कहा—मैं इतना ही कह सकता हूँ कि संसार में किसी के साथ मेरा ऐसा सम्पर्क नहीं जिससे नलिनी के साथ पवित्र सम्बन्ध में आबद्ध होने में मुझे किसी तरह की बाधा हो।

योगेन्द्र—हो सकता है कि तुम्हें किसी भी तरह की बाधा न हो। किन्तु नलिनी के आत्मीय जनों को बाधा हो सकती है। मैं तुमसे एक बात पूछता हूँ। किसी के साथ तुम्हारी किसी भी तरह की आत्मीयता क्यों न हो, उसे छिपा रखने का क्या कारण है?

रमेश—यदि छिपाने का कोई विशेष कारण न होता तो मैं अवश्य कह देता। जहाँ कारण प्रकट हुआ कि फिर गोप्य भाव नहीं रह सकता। तुम मुझको बचपन से ही जानते हो। कोई कारण न पूछकर केवल मेरी बात पर ही तुम लोगों को विश्वास करना होगा।

योगेन्द्र—इस स्त्री का नाम कमला है न?

रमेश—हाँ।

योगेन्द्र—तुमने इसको अपनी पत्नी बतलाया है न?

रमेश—हाँ।

योगेन्द्र—क्या तब भी तुम पर विश्वास करना होगा? तुम हम लोगों को यह जताना चाहते हो कि यह युवती तुम्हारी स्त्री नहीं है; और अन्य लोगों पर तुम प्रकट कर चुके हो कि यह तुम्हारी स्त्री है। इससे बढ़कर तुम्हारी सत्यपरायणता का और क्या प्रमाण हो सकता है?

अक्षय—अर्थात् विद्यालय की नीति के अनुसार यह दृष्टान्त ठीक नहीं,—किन्तु भाई योगेन्द्र! किसी विशेष अवस्था में दो पक्ष के लोगों से दो तरह की बात कहने की आवश्यकता हो पड़ती है। उसमें सच एक ही बात होगी। हो सकता है, रमेश बाबू तुमसे जो कह रहे हैं वही सच हो।

रमेश—मैं तुम लोगों से और कुछ भी नहीं कहता; इतना ही कहता हूँ कि नलिनी के साथ मेरा विवाह कर्तव्य-विरुद्ध न होगा। तुम लोगों से कमला के सम्बन्ध की बातें खोलकर कहने में भारी बाधा है। तुम लोग भले ही मुझ पर सन्देह कर सकते हो, परन्तु मैं कमला का भेद प्रकट करने में अभी सर्वथा असमर्थ हूँ। मेरे सुख-दुःख, मान-अपमान की बात होती तो मैं तुमसे न छिपाता। किन्तु दूसरे व्यक्ति के प्रति मैं अन्याय नहीं कर सकता।

योगेन्द्र—नलिनी से इस विषय में कुछ कहा है?

रमेश—नहीं। विवाह होने पर कहूँगा। बात ऐसी ही है। यदि वे सुनना चाहें तो मैं उनसे कह सकता हूँ।

योगेन्द्र—अच्छा, मैं कमला से दो एक बातें पूछ सकता हूँ?

रमेश—नहीं, हर्गिज़ नहीं। यदि मुझे अपराधी समझो तो जो चाहो मुझे दण्ड दे सकते हो, किन्तु तुम्हारे सामने प्रश्नोत्तर करने के लिए निरपराधिनी कमला को मैं खड़ी नहीं कर सकता।

योगेन्द्र—किसी से कुछ सवाल-जवाब करने की ज़रूरत नहीं। जो बात जानने की थी वह जान ली। प्रमाण भी यथेष्ट मिल गये। अब मैं तुमसे स्पष्ट कहे देता हूँ कि अब से यदि तुम मेरे घर में प्रवेश करने की चेष्टा करोगे तो तुम्हें अपमानित होना पड़ेगा।

रमेश मुँह उदास किये चुप बैठा रहा।

योगेन्द्र—तुमसे एक बात और कहना है। तुम अब नलिनी को चिट्ठी भी न लिख सकोगे। उसके साथ तुम्हारा गुप्त या प्रकाश्य कोई सम्पर्क न रहेगा। अगर उसे चिट्ठी लिखोगे तो जो बात तुम गुप्त रखना चाहते हो वह मैं सर्वसाधारण में सप्रमाण प्रकट कर दूँगा। अगर अब मुझसे कोई पूछेगा कि रमेश के साथ नलिनी का ब्याह क्यों रोक दिया गया तो मैं यही कहूँगा कि इस विवाह में मेरी सम्मति न थी इसी से रुक गया। इसका असली कारण किसी से न कहूँगा। किन्तु तुम मेरी बात पर क़ायम न रहोगे तो भण्डा फूटेगा। तुमने मेरे साथ पाखण्डी की भाँति व्यवहार किया, तब भी मैंने सह लिया। तुम्हारे ऊपर दया करके मैंने ऐसा नहीं किया; मैं तो यह इसलिए कर रहा हूँ कि इस विषय में मेरी बहन नलिनी का भी सम्बन्ध है, इसी से तुम सहज ही निष्कृति पा गये। अब तुमसे मेरा यही आख़िरी कहना है कि, इतने दिन से नलिनी के साथ तुम्हारा जो कुछ भाव था उसका कोई प्रमाण तुम्हारी बातचीत या व्यवहार से न पाया

जाय—अब तुमको ऐसा ही बर्ताव रखना होगा जिसमें लोग यह न समझें कि नलिनी के साथ तुम्हारी कभी जान-पहचान थी। मैं इस विषय में तुमसे प्रतिज्ञा कराना व्यर्थ समझता हूँ। कारण यह कि इतनी प्रपञ्च-रचना के बाद तुम सत्य का पालन कहाँ तक कर सकोगे। तो भी मैं तुमसे कह देता हूँ कि यदि तुमको अब भी कुछ लज्जा हो, अपमान का भय हो, तो भूलकर भी मेरी बात का तिरस्कार न करना।

अक्षय—अरे! योगेन्द्र, इतनी निष्ठुरता क्यों? रमेश बाबू चुप हैं तो भी तुम्हें कुछ दया नहीं आती। अब यहाँ से चलो। रमेश बाबू! आप कुछ बुरा न मानिएगा। हम लोग जाते हैं।

योगेन्द्र और अक्षय चले गये। रमेश पत्थर की मूर्ति की तरह जहाँ का तहाँ बैठा रहा। बहुत देर में जब उसका जी ठिकाने आया तब उसने चाहा कि घर से बाहर ज़रा टहल-फिरकर मन के बोझ को हलका करे और टहलते ही टहलते सब बातों को भी सोच ले। परन्तु उसे याद आ गई, कमला है—उसे अकेली छोड़ बाहर नहीं जा सकता।

रमेश ने पासवाले कमरे में जाकर देखा, कमला रास्ते की तरफ़ की झिलमिली खोले चुपचाप बैठी है। रमेश के पैरों की आहट सुनकर उसने झिलमिली बन्द करके मुँह फिराया। रमेश नीचे बैठ गया।

कमला ने पूछा—वे दोनों कौन हैं? आज सबेरे हमारे स्कूल गये थे।

रमेश ने आश्चर्य-युक्त होकर कहा—स्कूल गये थे ?

कमला—हाँ ! वे अभी आपसे क्या कहते थे ?

रमेश—वे मुझसे पूछते थे, तुम मेरी कौन होती हो ?

यद्यपि कमला ने सास-ननँद की अधीनता में न रहने के कारण लज्जा करना नहीं सीखा था तो भी रमेश की इस बात से स्त्री के स्वाभाविक धर्मवशत: उसने लज्जा से सिर नीचा कर लिया।

रमेश—मैंने उनसे कह दिया है, तुम मेरी कोई नहीं हो।

कमला ने सोचा, रमेश मुझे व्यर्थ लज्जित करने को छेड़ रहा है। उसने मुँह फेरकर ज़रा तुर्शी से कहा—चलो जाओ।

रमेश को यह चिन्ता हुई—कमला से सब बातें खोलकर कैसे कहूँगा।

कमला एकाएक चञ्चल होकर बोली—"अरे! आपके फलों को कौवा खा रहा है।" यह कहकर वह झट दौड़कर उस कमरे में गई और कौवे को भगाकर फलों की तश्तरी उठा ले आई। रमेश के आगे तश्तरी रखकर बोली—क्या आप न खायँगे ?

रमेश को अब कुछ खाने की इच्छा न थी। किन्तु कमला के आग्रह ने उसके हृदय को द्रवित कर दिया। उसने कहा—कमला, तुम न खाओगी ?

कमला—पहले आप तो खाइए।

बस, इतना ही मामला है, और कुछ नहीं। किन्तु रमेश की वर्तमान अवस्था में हृदय के इस कोमल आभास ने उसके

वक्षःस्थल के भीतर अश्रु-भाण्डार में धक्का मारा। रमेश बिना कुछ कहे-सुने फल खाने लगा।

खा चुकने पर रमेश ने कहा—आज रात को हम देश को चलेंगे।

कमला नीची दृष्टि कर उदासी के साथ बोली—वहाँ मुझे अच्छा न लगेगा।

रमेश—तो स्कूल में रहना तुम पसन्द करती हो?

कमला—नहीं, मुझे अब स्कूल में मत भेजो। मुझे शरम मालूम होती है। वहाँ लड़कियाँ बराबर आपकी बातें पूछा करती हैं।

रमेश—तुम क्या कहती हो?

कमला—मैं कुछ नहीं कहती। वे पूछती थीं, आपने तातील के समय क्यों मुझको स्कूल में रखना चाहा था। मैं—

कमला अपनी बात को पूरा न कर सकी। उसके क्षतस्थान में एक कठिन आघात लगा।

रमेश—तुमने क्यों नहीं कहा कि वे मेरे कोई नहीं होते।

कमला ने क्रोध करके कुटिल कटाक्ष से रमेश के मुँह की ओर देखकर कहा—चलो जाओ।

रमेश फिर मन ही मन सोचने लगा, "क्या करना होगा!" उसके हृदय में लगातार एक दबी हुई वेदना, कीट की तरह गढ़ा खोदकर, बाहर निकलने की चेष्टा करने लगी। योगेन्द्र ने नलिनी से क्या कहा होगा, नलिनी क्या समझती होगी,

सच्चा हाल नलिनी से कैसे कहूँगा, नलिनी से यदि मुझको चिरकाल के लिए अलग होना पड़े तो मैं कैसे जीवन धारण करूँगा।—ये दुःसह प्रश्न भीतर ही भीतर उसे जला रहे थे। उन प्रश्नों की भली भाँति आलोचना करने का उसे अवसर नहीं मिलता था। इससे वह और भी व्याकुल हो रहा था। इतना उसे मालूम हो गया था कि कमला के साथ जो मेरा सम्बन्ध है वह कलकत्ते में मेरे मित्र और शत्रु दोनों दलों में तीव्र आलोचना का विषय हो उठा है। घर-घर उसी की चर्चा होती है। रमेश कमला का पति है—यह जनरव कुछ दिन में सारे शहर में फैल जायगा। अब कमला को लेकर कलकत्ते में एक दिन भी रहना रमेश के लिए कठिन हो पड़ा।

रमेश को इस प्रकार की भावना में निमग्न देखकर कमला ने कहा—आप क्या सोच रहे हैं? अगर आप देश में रहना चाहेंगे तो मैं भी वहीं रहूँगी।

बालिका के मुँह से यह आत्मसंयम की बात सुनकर रमेश के हृदय में फिर भारी आघात लगा। उसने सोचा—"क्या करना होगा?" वह अन्यमनस्क होकर चिन्ता करने और कमला के मुँह की ओर देखने लगा।

कमला ने गम्भीरतापूर्वक कहा—अच्छा, मैं आपसे एक बात पूछती हूँ। मैंने जो छुट्टी के दिनों में स्कूल में रहना नहीं चाहा इससे आप नाराज़ तो नहीं हैं? सच-सच कहिए।

रमेश—सच कहता हूँ, मैं तुम पर नाराज़ नहीं हूँ; मैं तो अपने ही ऊपर नाराज़ हूँ।

रमेश चिन्ताजाल से ज़बरदस्ती अपने को छुड़ाकर कमला के साथ वार्तालाप करने में प्रवृत्त हुआ। उसने कमला से पूछा—कहो, इतने दिन में तुमने स्कूल में क्या सीखा?

कमला बड़े उत्साह से अपनी शिक्षा का हिसाब देने लगी। जब उसने पृथ्वी को गोल और भ्रमणशील बताकर रमेश को चकित कर देने की चेष्टा की तब रमेश ने गम्भीर-भाव धारण कर भूमण्डल की गोलाई में सन्देह प्रकट कर कहा, यह क्या कभी सम्भव है?

कमला ने आँखें फाड़कर कहा—वाह! मेरी किताब में लिखा है। मैंने पढ़ा है।

रमेश ने आश्चर्य का भाव दिखाकर कहा—सच कहो, तुम्हारी किताब में लिखा है? कितनी बड़ी है तुम्हारी किताब?

इस प्रश्न से कमला ने कुछ सहमकर कहा—किताब तो बहुत बड़ी नहीं है, मगर छपी हुई है, उसमें चित्र भी है।

इतना बड़ा प्रमाण मिलने पर रमेश को हार माननी पड़ी। इसके बाद कमला पढ़ाई का लेखा समाप्त करके स्कूल की विद्यार्थिनी और शिक्षिकाओं की बात और वहाँ के दैनिक कार्य का विवरण सुनाने लगी। रमेश का चित्त स्थिर न था, इससे वह बीच-बीच में केवल "हाँ" करता गया। एक-आध बार यह भी कह बैठता था—"क्या कहा, फिर कहो।"

बीसवाँ परिच्छेद

घनानन्द बाबू एकान्तचित्त से आशा कर रहे थे कि योगेन्द्र अच्छी ख़बर लावेगा। सब गोलमाल अब सहज ही निबट जायगा। योगेन्द्र और अक्षय जब घनानन्द बाबू के पास पहुँचे तब उन्होंने सभय दृष्टि से उन दोनों के मुँह की ओर देखा।

योगेन्द्र ने कहा—मैं न जानता था कि आप रमेश को यहाँ तक बढ़ने देंगे। मैं जानता तो आप लोगों के साथ उसका परिचय भी न होने देता।

घनानन्द—रमेश के साथ नलिनी का ब्याह होना तो तुम्हें मंज़ूर था। यह बात तुमने कई बार मुझसे कही भी थी। अगर इस सम्बन्ध में तुम्हें बाधा डालनी थी तो मुझे—

योगेन्द्र—मैं एकदम बाधा डालना न चाहता था, क्या इसी से—

घनानन्द—इसी से क्या? उस मामले में इस बात के लिए जगह नहीं। वे जहाँ तक अग्रसर होना चाहें होने दिया जाय, अथवा रोक दिया जाय, बस, इसके दर्मियान और बात के लिए गुञ्जाइश है कहाँ?

योगेन्द्र—तो क्या इसी से एकदम यहाँ तक अग्रसर—

अक्षय ने हँसकर कहा—संसार में कितने ही जीव ऐसे हैं जो अपनी झोंक में आकर अग्रसर हो पड़ते हैं। उन्हें

प्रेम-सम्पत्ति का अधिक लालच देना नहीं पड़ता—बढ़ते-बढ़ते नौबत यहाँ तक पहुँच जाती है। किन्तु जो हो गई सो हो गई। उस बात को लेकर अब तर्क-वितर्क करना वृथा है; अब जो कर्त्तव्य हो उसका निरूपण करो।

घनानन्द बाबू ने डरते-डरते पूछा—क्या रमेश से तुम्हारी भेंट हुई ?

योगेन्द्र—जी हाँ, ख़ूब भेंट हुई। ऐसी भेंट कभी भी न हुई थी। उसकी स्त्री से भी अच्छी तरह परिचय हो गया।

घनानन्द बाबू अवाक् होकर योगेन्द्र का मुँह देखने लगे। कुछ देर के बाद उन्होंने पूछा—किसकी स्त्री के साथ परिचय हुआ ?

योगेन्द्र—रमेश की स्त्री के साथ।

घनानन्द—तुम क्या कहते हो, मेरी समझ में नहीं आता ! किस रमेश की स्त्री ?

योगेन्द्र—अपने रमेश बाबू की। पाँच-छः महीने पूर्व जब वह देश गया था तब विवाह करने ही के लिए गया था।

घनानन्द—उसके पिता की मृत्यु होने से उसका ब्याह तो रुक गया।

योगेन्द्र—मृत्यु होने के पूर्व ही ब्याह हो गया था।

घनानन्द बाबू सन्नाटे में आकर माथे पर हाथ फेरने लगे। कुछ देर सोचकर बोले—तो मेरी नलिनी के साथ उसका ब्याह नहीं हो सकता।

योगेन्द्र—हम भी यही कहते हैं कि—

घनानन्द—माना कि तुम भी यही कहते हो, किन्तु ब्याह की तो सब तैयारी हो गई है; इस रविवार को छोड़ अग्रिम रविवार का दिन स्थिर करके सर्वत्र सूचना दे दी गई है। अब उस दिन भी शादी न होने की ख़बर सबको देनी होगी।

योगेन्द्र—एकदम से देने की क्या ज़रूरत है, उसमें कुछ हेर-फेर कर देने से काम चल जायगा।

घनानन्द—उसमें अब परिवर्तन करने की तो कोई जगह नहीं है।

योगेन्द्र—है क्यों नहीं? जहाँ परिवर्तन करना युक्तिसङ्गत होगा वहीं किया जायगा। रमेश के बदले कोई और वर ढूँढ़कर आगामी रविवार ही को—जैसे होगा—कार्य सम्पन्न कर लेना होगा; नहीं तो हम लोग किसी के सामने मुँह दिखाने योग्य न रहेंगे।

यह कहकर योगेन्द्र ने अक्षय के मुँह की ओर देखा। अक्षय ने विनय से सिर झुका लिया।

घनानन्द—इतनी जल्दी वर मिल जायगा?

योगेन्द्र—इसके लिए आप चिन्ता न करें।

घनानन्द—किन्तु नलिनी को राज़ी करना होगा।

योगेन्द्र—रमेश का सब वृत्तान्त सुनने पर वह अवश्य राज़ी हो जायगी।

घनानन्द—तो जो तुम अच्छा समझो करो। किन्तु रमेश में अनेक गुण थे। उसके पास धन भी था, चार पैसा कमाने योग्य विद्या-बुद्धि भी थी। यही तो परसों उससे सब बातचीत ठीक हो गई थी। वह इटावा जाकर वकालत करेगा। अब इसी बीच देखो क्या से क्या हो गया!

योगेन्द्र—उसके लिए आप क्यों सोच करते हैं! रमेश अब भी इटावा जाकर प्रैक्टिस कर सकेगा। एक बार नलिनी को बुलाता हूँ। अब समय भी तो अधिक नहीं है।

कुछ देर बाद योगेन्द्र नलिनी को वहाँ बुला लाया। अक्षय घर के एक कोने में, पुस्तकों की अलमारी की आड़ में, जा बैठा।

योगेन्द्र ने नलिनी से कहा—बहन, बैठो। तुमसे कुछ कहना है।

नलिनी गम्भीर भाव से चौकी पर बैठ गई। वह समझ गई कि मुझसे कोई गूढ़ बात पूछी जायगी। मेरी परीक्षा का समय है।

योगेन्द्र ने बातचीत की भूमिका के व्याज से पूछा—रमेश के सम्बन्ध में क्या तुम्हें कोई सन्देह का कारण नहीं देख पड़ता?

नलिनी ने कुछ उत्तर न देकर केवल सिर हिलाया—"नहीं।"

योगेन्द्र—उसने जो ब्याह का दिन एक सप्ताह आगे बढ़ा दिया उसका ऐसा क्या कारण था जो हम लोगों को नहीं बतलाया ?

नलिनी ने दृष्टि नीची करके कहा—कारण कुछ अवश्य है।

योगेन्द्र—सो ठीक है। कारण तो हुई है—किन्तु उसमें क्या सन्देह नहीं है ?

नलिनी ने फिर सिर हिलाकर जताया—"नहीं।"

रमेश पर सबसे अधिक ऐसा अटल विश्वास रखने के कारण योगेन्द्र ने नलिनी पर क्रोध किया। बड़ी सावधानी से उसने भूमिका बाँधी थी, पर उससे कुछ फल न हुआ।

वह फिर कुछ कड़ी आवाज़ में कहने लगा—तुम बख़ूबी जानती हो कि, पाँच-छः महीने हुए तब, रमेश अपने बाप के साथ घर गया था। तब से बहुत दिनों तक उसकी कोई चिट्ठी-पत्री न पाकर हम सबको अचम्भा हुआ था। यह भी तुम जानती हो कि जो रमेश प्रतिदिन शाम-सबेरे यहाँ आया करता था। जो इसी महल्ले में अपने घर के पास ही किराये के मकान में रहता था, उसने कलकत्ते आकर एक बार भी हम लोगों से भेंट तक न की। दूसरे महल्ले में मुँह छिपाकर रहने लगा। इस पर भी तुम लोग पहले ही की तरह उस पर विश्वास करके उसे अपने घर बुला लाये! मैं यहाँ रहता तो क्या यह बात कभी हो सकती ?

नलिनी कुछ न बोली।

योगेन्द्र—क्या तुम लोगों ने रमेश के ऐसे व्यवहार का अर्थ कुछ न जाना? क्या इस सम्बन्ध में एक प्रश्न भी तुम्हारे मन में कभी उदित न हुआ? रमेश के ऊपर इतना गाढ़ विश्वास!

नलिनी फिर भी चुप रही।

योगेन्द्र—अच्छा सुनो, तुम बहुत सीधी-सादी हो। किसी पर सन्देह नहीं करतीं। मैं समझता हूँ, मुझ पर भी तुम्हारा कुछ कम विश्वास नहीं है। मैं जो कुछ कहूँगा उस पर तुम ज़रूर विश्वास करोगी। मैं .खुद स्त्री-विद्यालय में जाकर सच्ची ख़बर ले आया हूँ। रमेश अपनी स्त्री—कमला—को बोर्डिङ्ग में रखकर पढ़ाता था। तातील के दिनों में भी रमेश ने उसको वहीं रखने का प्रबन्ध किया था। दो-तीन दिन हुए, अकस्मात् स्कूल की स्वामिनी की चिट्ठी रमेश को मिली। उसमें लिखा था, छुट्टी के दिनों में कमला को स्कूल में रखना ठीक न होगा। आज से स्कूल बन्द हो गया। कमला को स्कूल की गाड़ी रमेश के दर्ज़ीपाड़ावाले मकान में पहुँचा गई। मैं .खुद उस मकान में गया था। मैंने देखा, कमला नाशपाती को छीलकर टुकड़े कर रही थी। सामने फ़र्श पर बैठा रमेश तश्तरी से एक-एक टुकड़ा उठाकर खाता जाता था। मैंने रमेश से पूछा, "कहो क्या मामला है?" रमेश ने कहा—"मैं अभी तुम लोगों से कुछ न कहूँगा।" अगर रमेश इतना भी कह देता कि कमला उसकी स्त्री नहीं है तो

भी उस बात पर विश्वास कर किसी तरह सन्देह को दबाने की चेष्टा की जाती। किन्तु उसने कोई बात साफ़-साफ़ नहीं कही। तब भी तुम रमेश का इतना विश्वास करती हो!

इस प्रश्न का उत्तर पाने की इच्छा से योगेन्द्र ने नलिनी के मुँह की ओर देखा। देखते ही देखते नलिनी का चेहरा फीका पड़ गया। अपने को सँभालने की बहुत चेष्टा करने पर भी वह मूर्च्छित होकर नीचे गिर पड़ी।

उसकी यह दशा देख घनानन्द बाबू बड़े व्याकुल हुए। उन्होंने झट नलिनी के मस्तक को उठाकर हृदय से लगा लिया और कहने लगे—बेटी! इनकी बात पर विश्वास न करो; सब झूठ है।

योगेन्द्र ने अपने पिता को हटाकर झट नलिनी को एक चारपाई पर लिटा दिया और उसके मुँह और आँखों पर बार-बार गुलाब-जल छिड़कने लगा। अक्षय पंखा लेकर ज़ोर-ज़ोर से हवा करने लगा।

नलिनी कुछ देर के बाद आँख खोलकर चौंक पड़ी। उसने घनानन्द बाबू की ओर देख चिल्लाकर कहा—अक्षय बाबू से कहिए, यहाँ से चले जायँ।

अक्षय पंखा रखकर घर के बाहर दर्वाज़े की आड़ में जा खड़ा हुआ। घनानन्द बाबू चारपाई पर नलिनी के पास बैठकर उसके सिर पर और बदन पर हाथ फेरने लगे। दीर्घ-निःश्वास लेकर उन्होंने केवल एक बार कहा—बेटी।

नलिनी की आँखों से आँसू की धारा बह चली। उसका दम फूलने लगा, वह ज़ोर से साँस लेने लगी। पिता की गोद में मुँह छिपाकर वह अनिवार्य रोदन के वेग को रोकने की चेष्टा करने लगी। घनानन्द बाबू रुँधे कण्ठस्वर से कहने लगे—बेटी! तुम सोच न करो, मैं रमेश को भली भाँति जानता हूँ। वह कभी अविश्वासी नहीं है। योगेन्द्र ने उसके विषय में ज़रूर भूल की है।

योगेन्द्र से चुप न रहा गया। उसने कहा—आप झूठा आश्वासन क्यों देते हैं? इस कष्ट से बचाकर क्या उसे दुगुना कष्ट देना चाहते हैं? नलिनी को अब कुछ देर विचारने को समय दीजिए।

नलिनी अब अच्छी तरह होश में आ गई थी। वह पिता की गोद से सिर उठाकर बैठी और योगेन्द्र की ओर देखकर बोली—मुझे जो कुछ सोचना था, मैंने सोच लिया। जब तक मैं उनके मुँह से यह बात न सुनूँगी तब तक मैं कदापि विश्वास नहीं करूँगी। इसे तुम पक्का समझ लो।

यह कहकर वह खड़ी हो गई। घनानन्द बाबू ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा—गिर पड़ोगी।

पिता का हाथ पकड़कर नलिनी अपने सोने के कमरे में गई। बिछौने पर लेटकर उसने पिता से कहा—मुझको कुछ देर अकेली रहने दीजिए। मैं सोऊँगी।

घनानन्द—हरिशरण की माँ को बुला दूँ? पङ्खा झलेगी।

नलिनी—पङ्खे की ज़रूरत नहीं।

घनानन्द बाबू पास के कमरे में जा बैठे। यह लड़की जब छः महीने की थी तभी इसे छोड़कर इसकी माँ मर गई। वे नलिनी की माँ की बात सोचने लगे। उसकी वह भक्ति, वह धैर्य्य और वह चिर-प्रसन्नता उन्हें स्मरण हो आई। उसी गृह-लक्ष्मी की मूर्ति के सदृश जो बालिका इतने दिन उनकी गोद में लालित-पालित होकर अब बड़ी हुई है, उसके अनिष्ट की आशङ्का से उनका हृदय व्याकुल हो उठा। वे मन ही मन उसे पुकारकर कहने लगे—बेटी, तुम्हारे सभी विघ्न दूर हों, तुम सदा सुख से रहो। तुमको सुखी देखकर, जिसको तुम हृदय से चाहती हो उसके घर में तुम्हें लक्ष्मी की भाँति प्रतिष्ठित देखकर, मैं तुम्हारी माँ के पास ख़ुशी से जा सकूँगा।—यह कहकर उन्होंने अपनी चादर के छोर से आँसू पोंछ डाले।

स्त्रियों की बुद्धि पर योगेन्द्र को पहले ही से बड़ी अश्रद्धा थी। आज वह और भी दृढ़ हो गई। स्त्रियाँ ऐसी हठधर्मिणी होती हैं कि वे प्रत्यक्ष प्रमाण को भी नहीं मानतीं। उन्हें किस तरह समझाया जाय? दो और दो मिलकर चार होते हैं, इसमें किसी को सुख हो या दुःख,—वे इस बात को किसी अवसर पर अपनी हठधर्म्मिता के कारण हर्गिज़ न मानेंगी। युक्ति यदि काले को भली भाँति काला सिद्ध कर दे और इन स्त्रियों का प्रेम यदि उसे सफ़ेद कह दे तो युक्ति बेचारी झख

मारेगी। उसका कुछ जोर उन पर न चलेगा। उलटा वे उस पर ख़फ़ा हो उठेंगी। योगेन्द्र की समझ में न आया कि इन सब के द्वारा संसार का व्यवहार कैसे चलता है।

योगेन्द्र ने पुकारा—अक्षय।

अक्षय धीरे-धीरे भीतर आया। योगेन्द्र ने कहा—सब सुन ही चुके हो, अब क्या उपाय है?

अक्षय—भाई! मुझे इन बातों में क्यों घसीटते हो? मैं इतने दिन इस बखेड़े से बिलकुल अलग था। तुमने आते ही इस झंझट में उलझा दिया है।

योगेन्द्र—अच्छा, ये बातें पीछे होंगी। अब नलिनी के आगे रमेश के मुँह से सारी बातें क़बूल कराये बिना काम न चलेगा। इसके सिवा दूसरा उपाय नहीं।

अक्षय—तुम पागल हुए हो! कोई अपने मुँह से—

योगेन्द्र—अगर वह एक चिट्ठी लिख दे तो और अच्छा हो। तुमको यह भार अपने ऊपर लेना होगा। देरी करने से कार्य-सिद्धि में बाधा होगी।

अक्षय—अच्छा, मुझसे जहाँ तक जो हो सकेगा, अवश्य यत्न करूँगा।

इक्कीसवाँ परिच्छेद

रमेश रात के नौ बजे कमला को साथ ले सियालदह स्टेशन को गया। वहाँ पर वह सीधा नहीं गया, ज़रा चक्कर काटकर गया। उसने गाड़ीवान को कितनी ही गलियों की हवा खिलाई। कोलूटोले में एक मकान के पास आकर उसने गाड़ी से मुँह निकालकर एक मकान की ओर विशेष आग्रह से देखा। परिचित घर में किसी तरह का परिवर्तन देखने में न आया।

रमेश ने इतने जोर से एक दीर्घ निःश्वास लिया कि सोई हुई कमला चकित हो गई। उसने पूछा—अयँ, तुम्हें क्या हो गया?

रमेश ने जवाब दिया—"कुछ नहीं।" वह और कुछ न बोला, गाड़ी में मुँह छिपाये बैठा रहा। कमला गाड़ी के कोने में फिर सो रही। कुछ देर के लिए कमला का वहाँ मौजूद रहना रमेश को असह्य जान पड़ा।

गाड़ी यथासमय स्टेशन पर जा पहुँची। सेकंड क्लास की एक गाड़ी पहले ही से रिज़र्व की हुई मौजूद थी। कमला और रमेश उसी में जा बैठे। एक बेंच पर कमला के लिए बिछौना बिछाकर और लालटेन के नीचे पर्दे के द्वारा अँधेरा करके रमेश ने कहा—कमला, तुम इस बेंच पर सो रहो।

कमला ने कहा—मैं गाड़ी चलने पर सोऊँगी; तब तक इस खिड़की के पास बैठकर बाहर का दृश्य देखती हूँ।

रमेश ने कहा—"अच्छा।" कमला माथे पर कपड़ा सँभालकर प्लेटफ़ार्म की ओर बेंच के कोने पर जा बैठी और लोगों का इधर-उधर जाना-आना देखने लगी। रमेश खिड़की से ज़रा हटकर बीच में बैठा-बैठा शून्य दृष्टि से देखने लगा। गाड़ी जब चल पड़ी तब रमेश का ध्यान टूटा। वह चौंक पड़ा। उसे मालूम हुआ मानों उसका एक परिचित व्यक्ति गाड़ी की ओर दौड़ा आ रहा है।

इसी समय कमला खिलखिलाकर हँस पड़ी। रमेश ने खिड़की से बाहर मुँह निकालकर देखा—रेलवे-कर्मचारी से हाथ छुड़ाकर एक आदमी किसी तरह चलती गाड़ी पर चढ़ गया है। चादर लेने के लिए जब उस व्यक्ति ने खिड़की से बाहर हाथ निकाला तब रमेश ने उसे पहचान लिया। वह और कोई नहीं, अक्षय है।

चादर की इस खैंचातानी का अपूर्व दृश्य देखकर कमला देर तक हँसती रही।

रमेश ने कमला से कहा—साढ़े दस बज गये। गाड़ी रवाना हो गई। अब तुम सो रहो।

बालिका बिछौने पर लेट गई। जब तक उसे नींद न आई तब तक वह बीच-बीच में अक्षयकुमार की घटना पर खिल-खिला उठती थी।

किन्तु इस घटना से रमेश को कुछ विशेष कौतूहल न हुआ। वह जानता था—देहात से अक्षयकुमार का कोई सम्बन्ध नहीं है। कई पुश्त से वह कलकत्ते में रहता है। आज इस हड़बड़ी के साथ वह कलकत्ता छोड़कर कहाँ जा रहा है? रमेश समझ गया कि वह मेरी ही टोह में जा रहा है।

यदि अक्षय मेरे गाँव जाकर कमला के सम्बन्ध की बातों की जाँच-पड़ताल करे और बस्तीवालों के साथ इस बात को लेकर एक नया बखेड़ा खड़ा कर दे तो बात बड़ी भयङ्कर हो उठेगी। यह सोचकर रमेश का हृदय चञ्चल हो उठा। उसके गाँव का कौन आदमी क्या कहेगा, वहाँ कैसे-कैसे तर्क-वितर्क होंगे—यह रमेश मानों प्रत्यक्ष देखने लगा। कलकत्ता जैसे बड़े शहर में सभी अवस्था में मनुष्य अपने को छिपा सकता है, और जब चाहे तब वहाँ ऐसी जगह मिल सकती है जहाँ रहने से किसी तरह का भय न रहे, परन्तु छोटी सी बस्ती की बात ही न्यारी है। वहाँ बात की बात में ज़रा सी बात फैल जाती है। इस बात को वह जितना ही सोचने लगा उतना ही अधीर होने लगा।

बारकपुर में गाड़ी ठहरी। रमेश खिड़की से मुँह बाहर कर देखने लगा, अक्षय गाड़ी से उतरा कि नहीं। नैहाटी में कितने ही लोग उतरे, उनमें भी अक्षय दिखाई न दिया। बगुला स्टेशन पर भी रमेश ने ख़ूब देखा, किन्तु गाड़ी से

उतरनेवाले मुसाफ़िरों में अक्षय का कहीं पता नहीं। इसके बाद और किसी स्टेशन पर अक्षय के उतरने की कोई सम्भावना भी उसे न देख पड़ी।

रात बहुत बीतने पर रमेश सो गया। दूसरे दिन सवेरे ग्वालन्दो गाड़ी पहुँचने पर रमेश ने देखा—अक्षय सिर और मुँह को चादर से छिपाये और हाथ में एक बेग लिये स्टीमर की ओर लपका जा रहा है।

जिस स्टीमर पर रमेश सवार होने को था उसके खुलने में अभी देर है। किन्तु उसके पास ही एक और स्टीमर खुलने पर था। यात्रियों को सावधान करने के लिए वह बार-बार सीटी बजा रहा था। रमेश ने एक व्यक्ति से पूछा—यह स्टीमर कहाँ जायगा? उत्तर मिला—"पश्चिम में।"

"कहाँ तक?"

"गहरा पानी मिले तो बनारस तक।"

यह सुनकर रमेश तुरन्त उस स्टीमर पर कमला को एक कमरे में बिठा आया और झटपट थोड़ा सा दूध, चावल और दाल मोल ले ली।

इधर अक्षय कपड़े से मुँह छिपाकर दूसरे स्टीमर पर सब यात्रियों के पहले एक ऐसी जगह जा खड़ा हुआ जहाँ से अन्यान्य यात्री जहाज़ पर सवार होते समय स्पष्ट देख पड़ें। यात्रियों की विशेष भीड़-भाड़ न थी। जहाज़ रवाना होने में

कुछ विलम्ब था, यह अवकाश पाकर कितने ही यात्रियों ने मुँह-हाथ धोकर स्नान कर लिया। कितने ही किनारे बैठकर रसोई बनाने और कुछ खाने-पीने लगे। अक्षय कभी ग्वालन्दो गया न था। अतएव उसने समझा, यहाँ पास ही कोई होटल-ओटल होगा जहाँ रमेश कमला के साथ कुछ खाने-पीने गया होगा।

जब जहाज़ खुलने की आख़िरी सीटी बजने लगी तब भी रमेश कहीं दिखाई न दिया। सीटी सुनकर सभी मुसाफ़िर हड़बड़ाकर दौड़े, और डोलते हुए त.ख्ते पर होकर जहाज़ पर सवार होने लगे। बारम्बार सीटी सुनकर लोगों की भीड़ क्रमशः बढ़ने लगी। अक्षय ने आँखें फाड़-फाड़कर चारों ओर देखा, रमेश का कहीं कोई चिह्न भी दिखाई न दिया। जब सभी मुसाफ़िर जहाज़ पर सवार हो चुके, त.ख्ता खींच लिया गया और लङ्गर उठा लेने का हुक्म दे दिया गया तब अक्षय घबराकर बोला—"मैं उतरूँगा।" किन्तु ख़लासियों ने उसकी बात पर ध्यान न दिया। किनारा स्टीमर से दूर न था। अक्षय धम से ज़मीन पर कूद पड़ा।

किनारे आकर भी अक्षय को रमेश का कुछ पता न लगा। कुछ देर हुई, ग्वालन्दो से सबेरे की पैसिञ्जर ट्रेन कलकत्ते की तरफ़ गई है। अक्षय मन ही मन सोचने लगा कि कल रात को, गाड़ी में सवार होते समय, कर्मचारी के द्वारा मेरी छीना-झपटी होते समय रमेश ने मुझे अवश्य ही देख लिया

है, और मेरी नीयत बुरी जानकर वह देश को नहीं गया, बल्कि सबेरे की गाड़ी से फिर कलकत्ते लौट गया। कलकत्ते में यदि कोई आदमी छिपकर रहना चाहे तो उसका पता लगाना सहज काम नहीं।

बाईसवाँ परिच्छेद

अक्षय दिन भर ग्वालन्दो में किसी तरह पड़ा रहा। वह सायङ्काल की डाकगाड़ी में सवार हुआ। दूसरे दिन सवेरे ही कलकत्ते पहुँचकर उसने पहले रमेश के दर्ज़ीपाड़ेवाले मकान में जाकर देखा, उसका दर्वाज़ा बन्द था। पूछने पर मालूम हुआ, वहाँ कोई नहीं आया है।

कोलूटोले में आकर देखा, रमेश का घर सूना पड़ा है। आख़िर उसने घनानन्द बाबू के यहाँ आकर योगेन्द्र से कहा—भाग गया! खोजने पर भी उसे मैं पकड़ न सका।

योगेन्द्र—सो क्यों?

अक्षय ने उसके भाग निकलने का सारा वृत्तान्त कह सुनाया।

अक्षय को देखकर रमेश कमला के साथ भाग गया। इस समाचार से रमेश पर योगेन्द्र का सन्देह और भी दृढ़ हो गया।

योगेन्द्र ने कहा—इन युक्तियों से कुछ न होगा। सिर्फ़ नलिनी ही नहीं, पिताजी भी इसी एक बात को पकड़े हुए हैं। वे कहते हैं, रमेश के मुँह से जब तक आख़िरी बात सुन न लेंगे, उस पर अविश्वास न करेंगे। यही क्यों, अगर रमेश आज भी आकर कह दे कि "मैं अभी कुछ न कहूँगा," तो भी पिताजी उसके साथ नलिनी का ब्याह कर देने में कुछ

आगा-पीछा न करेंगे। मैं बड़ी मुश्किल में हूँ। पिताजी नलिनी का कुछ भी कष्ट नहीं देख सकते। यदि नलिनी आज यह हठ पकड़े कि "रमेश के भले ही दूसरी स्त्री हो, मैं उसी से ब्याह करूँगी" तो पिताजी उसी में सहमत हो जायँगे। जैसे हो सके और जितना शीघ्र हो सके, रमेश के द्वारा वह बात कहलानी होगी। तुमको हताश न होना चाहिए। मैं ख़ुद इस कार्य में लग पड़ता, परन्तु मैं कार्य सिद्ध करने का ढङ्ग—युक्तियाँ—नहीं जानता। मुझसे बहुत होगा तो यही कि रमेश के साथ मारपीट की नौबत आ जायगी। जान पड़ता है, तुमने अभी मुँह-हाथ नहीं धोया। चाय भी तो नहीं पी होगी।

अक्षय मुँह धोकर चाय पीते-पीते सोचने लगा। इसी समय घनानन्द बाबू नलिनी का हाथ पकड़े चाय पीने वहाँ आये। अक्षय को देखते ही नलिनी उलटे पैरों वहाँ से लौट गई।

योगेन्द्र ने क्रोध करके कहा—नलिनी की यह बड़ी अशिष्टता है पिताजी। आप उसके अभद्र व्यवहार में साथ न दें। उसको यहाँ आना चाहिए, सीधी तरह न आवेगी तो मैं उसे ज़बर्दस्ती यहाँ ले आऊँगा। यह कहकर वह नलिनी को पुकारने लगा।

नलिनी तब तक ऊपर चली गई थी। अक्षय ने योगेन्द्र से कहा—देखो, इस मामले को तुम और भी ख़राब कर

दोगे। उसके सामने मेरे सम्बन्ध की कोई बात न कहना। समय पर उसका प्रतीकार हो जायगा। ज़बरदस्ती करने से बात बिगड़ जायगी।

अक्षय चाय पीकर चला गया। अक्षय में धीरता की कमी न थी। जब सभी लक्षण उसके प्रतिकूल हैं तब भी वह लगकर उद्योग पर भरोसा किये बैठा था। उसके मानसिक भाव में भी किसी तरह का फ़र्क़ न पड़ा। वह जिस बात को मन में ठाने था उस पर अटल विश्वास किये था। एक बार अकृतकार्य होने पर वह सहसा रूठकर उससे पराङ्मुख नहीं हो जाता। अपनी कार्यसिद्धि के हेतु वह अनादर और अपमान को चुपचाप सह लेता है। वह बड़े पोढ़े हृदय का पुरुष है। उसके साथ कोई किसी तरह का व्यवहार क्यों न करे, पर वह अपने सिद्धान्त से सहसा विचलित नहीं होता।

अक्षय के चले जाने पर घनानन्द बाबू फिर नलिनी को साथ लेकर चाय की टेबल के पास आये। आज नलिनी के चेहरे से उदासी टपकती है। उसके नेत्रों के नीचे काली झाँईं पड़ गई है। कमरे में आते ही उसने नीची नज़र कर ली। योगेन्द्र के मुँह की ओर वह नज़र उठाकर देख न सकी। वह जानती थी, योगेन्द्र मुझ पर और रमेश पर नाराज़ है, तथा हम दोनों के विरुद्ध विचार कर रहा है। इसलिए योगेन्द्र से बोलना या उसकी ओर आँख उठाकर देखना उसके लिए एक कठिन समस्या हो पड़ी।

प्रेम ने नलिनी के विश्वास को यद्यपि अविचल कर रक्खा था तथापि युक्ति को कोई एकदम बहिष्कृत कैसे कर सकता है ? योगेन्द्र के सामने कल नलिनी अपने विश्वास की दृढ़ता दिखाकर चली गई थी। किन्तु अँधेरी रात में जब वह अपने शयनागार में चारपाई पर लेटी तब उसका वह धैर्य, वह मानसिक बल, न रहा। वास्तव में कुछ दिन पहले से रमेश के व्यवहार का कुछ अर्थ उसे मालूम न होता था। अपने विश्वास-रूपी दुर्ग में सन्देह के कारणों को घुसने न देने के लिए नलिनी जितना ही ज़ोर लगाती थी उतने ही अधिक ज़ोर का धक्का वे (सन्देह के कई कारण) बाहर खड़े-खड़े दे रहे थे। सख़्त चोट लगने से माँ जिस तरह बच्चे को दोनों हाथों से पकड़कर, छाती से लगाकर, उसकी रक्षा करती है उसी तरह नलिनी ने भी रमेश के प्रति दृढ़ विश्वास को सब प्रमाणों के ख़िलाफ़ जानकर भी बलपूर्वक छाती से दबा रक्खा। परन्तु बल क्या सदा एक सा रह सकता है ?

नलिनी के शयनगृह के पासवाली कोठरी में घनानन्द बाबू रात को सोये थे। नलिनी जो चारपाई पर बराबर करवट बदलती थी वह उन्हें मालूम होता था। वे बीच-बीच में उठकर उसके कमरे के द्वार पर जाकर कहते—“बेटी, क्या तुम्हें नींद नहीं आती ?” नलिनी कहती थी—आप क्यों जागते हैं ? मैं ऊँघ रही थी, अभी सो रहूँगी।

दूसरे दिन सबेरे उठकर नलिनी छत के ऊपर घूमने गई—रमेश के घर के दरवाज़े और खिड़कियाँ सभी बन्द थीं।

धीरे-धीरे सूर्य भगवान् बहुत ऊपर उठ आये। नलिनी के लिए आज का यह दिन ऐसा सूना, ऐसा आशाहीन और ऐसा निरानन्द जान पड़ा कि वह छत के एक कोने में बैठकर दोनों हाथों से मुँह ढाँककर रोने लगी।—आज दिन भर कोई एक बार भी न आवेगा, चाय पीने के समय किसी के आने की आशा नहीं है। पासवाले घर में कोई है, यह कल्पना करने का सुख भी न रहा।

"नलिनी! नलिनी!"

नलिनी ने झट उठकर आँखें पोंछ डालीं। पिता को आते देखकर बोली—क्या है बाबूजी?

घनानन्द बाबू छत पर आये और नलिनी की पीठ पर हाथ फेरकर बोले—आज मेरे उठने में बहुत विलम्ब हो गया।

घनानन्द बाबू मारे चिन्ता के रात भर जागते रहे थे। इसी से सबेरे उन्हें नींद आ गई। मुँह पर सूर्य का प्रकाश पड़ते ही वे झट उठ बैठे। मुँह-हाथ धोकर नलिनी की ख़बर लेने गये। कमरे में कोई न था। सबेरे उसे छत पर अकेली घूमते देख उनके हृदय में बड़ी चोट लगी। उन्होंने कहा—बेटी! चलो, चाय पीने चलें।

योगेन्द्र के सामने बैठकर चाय पीने की इच्छा नलिनी की न थी, पर वह जानती थी कि नियम के विरुद्ध कोई काम होने

से पिताजी के मन में दुःख होता है। वह प्रतिदिन अपने हाथ से पिता के प्याले में चाय डालकर पीने को देती है, इस पितृ-सेवा से उसने अपने को वञ्चित करना न चाहा।

नीचे जाकर चायवाले कमरे में पहुँचने के पूर्व जब उसने बाहर से योगेन्द्र को किसी के साथ बातें करते सुना तब उसकी छाती धड़क उठी। उसने समझा, शायद रमेश आया है। इतने सबेरे यहाँ और कौन आवेगा?

थरथराते हुए पैरों से भीतर प्रवेश करके ज्योंही अक्षय-कुमार को देखा त्योंही वह अपने को न रोक सकी, उलटे पैरों बाहर चली आई।

घनानन्द बाबू जब उसे दूसरी बार कमरे में ले आये तब वह अपने पिता की कुरसी के पास खड़ी होकर नीचा मुँह किये पिता के लिए चाय तैयार करने लगी।

नलिनी के व्यवहार से योगेन्द्र बहुत रुष्ट था। रमेश के लिए नलिनी इतना खेद कर रही थी, यह उसे बहुत असह्य जान पड़ता था। इस पर भी उसने जब देखा कि घनानन्द बाबू उसके दुःख के साथी हैं और वह भी और सबको छोड़ उन्हीं की स्नेह-छाया में रहकर अपने को सुरक्षित समझती है तब अधीरता और भी बढ़ गई। वह मन में कहने लगा—हम लोग मानो उसके साथ भारी अन्याय करते हैं। हम जो उसके स्नेहवश होकर कर्तव्यपालन की चेष्टा कर रहे हैं, हम लोग जो उसके यथार्थ रूप से हितसाधन में प्रवृत्त हैं, इसके लिए

कृतज्ञता प्रकाश करना तो दूर रहा, उलटे हमीं लोगों को वह मन ही मन दोषी बना रही है। पिताजी तो व्यवहार की बात कुछ जानते नहीं। अभी आश्वासन देने का समय नहीं है, यह तो बाधा देने का समय है। सो यह न करके वे उसकी रुचि रखना ही अच्छा समझते हैं, उसे अप्रिय सत्य बात से अलग रखना चाहते हैं।

योगेन्द्र ने घनानन्द बाबू से कहा—आपको मालूम नहीं बाबूजी, क्या हुआ है?

घनानन्द—नहीं! क्यों, क्या हुआ है?

योगेन्द्र—रमेश कल अपनी स्त्री को लेकर ग्वालन्दो-मेल से अपने घर जा रहा था। अक्षय को ·सी गाड़ी में चढ़ते देख वह घर नहीं गया, फिर कलकत्ते लौट आया है।

नलिनी के हाथ काँपने लगे—वह गिलास में चाय ढाल रही थी। सो चाय प्याले में नहीं, फ़र्श पर गिर पड़ी। वह पिता के पास कुरसी पर बैठ गई।

योगेन्द्र एक बार उसके मुँह की ओर देखकर कहने लगा,—भला रास्ते से लौट आने की क्या जरूरत थी, यह मैं नहीं कह सकता। अक्षय तो पहले ही से उसकी सब बातें जानता था। एक तो उसका वह कपट-व्यवहार, उस पर स्त्री को लेकर चोर की तरह चारों ओर भागते फिरना,—मुझे बहुत ही बुरा लगता है। मालूम नहीं, नलिनी क्या समझती है—किन्तु इस तरह भागना ही उसके अपराध को यथेष्ट प्रमाणित करता है।

नलिनी ने काँपते-काँपते खड़ी होकर कहा—भैया, मैं प्रमाण नहीं चाहती, आप प्रमाण ढूँढ़कर जो विचार करना चाहें, करें। मैं उनकी विचारक नहीं।

योगेन्द्र—तुम्हारे साथ जिसका ब्याह होगा उससे हमारा क्या कोई सम्बन्ध न रहेगा?

नलिनी—ब्याह की बात कौन करता है? तुम इस सम्बन्ध को भले ही तोड़ दो; यह तुम्हारी इच्छा है। किन्तु मेरे मन को तोड़ने-मरोड़ने की चेष्टा तुम वृथा कर रहे हो।

यह कहते-कहते नलिनी का कण्ठ रुद्ध हो गया। उसकी आँखों में आँसू भर आये। वह रोने लगी। घनानन्द बाबू ने उसका हाथ पकड़कर कहा—चलो बेटी! हम-तुम ऊपर चलें।

तेईसवाँ परिच्छेद

स्टीमर खुल गया। पहली और दूसरी श्रेणी के कमरों में कोई मुसाफ़िर न था। रमेश ने एक कमरा पसन्द करके उसमें अपना बिस्तरा लगाया। सबेरे दूध पीकर कमला उस कमरे की खिड़की खोलकर नदी और नदी का तट देखने लगी। रमेश ने कहा—अच्छा कमला, बतलाओ हम कहाँ जा रहे हैं।

कमला—अपने देश को।

रमेश—देश में तो तुम्हें अच्छा नहीं लगता। हम देश नहीं जायँगे।

कमला—तो क्या आपने मेरे ही लिए देश जाना बन्द कर दिया?

रमेश—हाँ, तुम्हारे ही लिए।

कमला ने ज़रा मुँह भारी करके कहा—ऐसा आपने क्यों किया? मैंने एक दिन बात ही बात में कुछ कह दिया। उसी पर आप इतने नाराज़ हो गये। आपको थोड़े ही में क्रोध हो आता है!

रमेश ने हँसकर कहा—मैं तनिक भी क्रोध नहीं करता। मेरी भी इच्छा देश जाने की नहीं है।

कमला ने उत्सुक चित्त से पूछा—तो कहाँ को चल रहे हो?

रमेश—पश्चिम।

पश्चिम का नाम सुनकर कमला आँखें फाड़कर रमेश की ओर देखने लगी। जिन लोगों ने घर छोड़ कभी परदेश का मुँह नहीं देखा उन्हें एकाएक पश्चिम जाने का नाम सुनकर कितना हर्ष होता है, यह वही बता सकते हैं। पश्चिम में कितने ही तीर्थ हैं, स्वास्थ्यवर्द्धक स्थल हैं, कितने ही अच्छे-अच्छे शहर हैं, राजा और सम्राटों की कितनी ही पुरानी कीर्त्तियाँ हैं, कितने ही कारुनिर्म्मित देवमन्दिर हैं, कितनी ही पुरानी बातें और वीरता के इतिहास हैं।

कमला ने पुलकित होकर पूछा—पश्चिम में कहाँ?

रमेश—अभी कुछ निश्चय नहीं। मुँगेर, पटना, दानापुर, बक्सर, ग़ाज़ीपुर, काशी—इनमें से कहीं भी उतर जायँगे।

इन कितने ही जाने और कितने ही अनजाने शहरों का नाम सुनकर कमला की कल्पनावृत्ति और भी उत्तेजित हो गई। उसने ताली बजाकर कहा—वाह! तब तो ख़ूब मज़ा होगा।

रमेश—मज़ा तो पीछे होगा। पहले यह बताओ कि खाने-पीने का क्या प्रबन्ध होगा। तुम नौकर के हाथ का पकाया खा सकोगी?

कमला ने घृणा से नाक सिकोड़कर कहा—नहीं, नहीं, मैं न खा सकूँगी।

रमेश—तो फिर क्या उपाय करोगी?

कमला—मैं ख़ुद रसोई कर लूँगी।

रमेश—तुम रसोई करना जानती हो?

कमला ने हँसकर कहा—मालूम नहीं, आप मुझे क्या समझते हैं? मैं सब जानती हूँ। घर का कोई काम ऐसा नहीं जो मैं न कर सकूँ। मामा के घर तो मैं ही बराबर रसोई बनाती थी।

रमेश ने खेद प्रकट करके कहा—तब तो तुमसे ऐसा प्रश्न करना ठीक नहीं हुआ। अच्छा तो अब रसोई-पानी का प्रबन्ध करना चाहिए।

यह कहकर रमेश चला गया और एक लोहे का चूल्हा कहीं से ले आया। इसके सिवा काशी तक पहुँचा देने का ख़र्च और कुछ वेतन का लोभ देकर उसने उमेश नामक एक कहार के बालक को भी काम करने के लिए रख लिया।

रमेश—तो कमला, आज क्या रसोई होगी?

कमला—रसोई और क्या होगी, सिर्फ़ दाल चावल ही तो है। आप कहें तो खिचड़ी चढ़ा दूँ?

रमेश कहीं से खिचड़ी के लिए थोड़ा सा मसाला माँग लाया। उसकी अनभिज्ञता देख कमला मुसकुराने लगी। बोली, सिर्फ़ मसाला लेकर क्या करूँगी? सिल-लोढ़ा तो हई नहीं, मसाला कैसे पीसा जायगा? जब आप मसाला लाने लगे तब आपको सिल-लोढ़े का भी तो ख़याल करना था।

बालिका के इस मधुर तिरस्कार को चुपचाप सहकर रमेश सिल-लोढ़े की खोज में गया। सिल-लोढ़ा तो न मिला, पर कुछ देर में वह कहीं से एक इमामदिस्ता माँग लाया।

इमामदिस्ते में मसाला कूटने का अभ्यास कमला को न था. तो भी लाचार होकर उसी में मसाला कूटने लगी। रमेश ने कहा—तुम कहो तो मसाला और किसी से पिसा लाऊँ।

कमला ने यह पसन्द न किया। वह आप ही उत्साह-पूर्वक मसाला कूटने लगी। इसमें उसे विशेष कौतूहल बोध होने लगा। मसाला छिटककर जो नीचे गिर पड़ा था, यह उसके हँसने का विशेष कारण हुआ। मसाला गिरते देख वह अपनी हँसी को न रोक सकती थी। उसको हँसते देख रमेश भी सहज ही हँस पड़ता था।

इस प्रकार मसाले को किसी तरह कूट-पीसकर और आँचल के छोर को कमर में खोंसकर एक घिरी जगह में कमला ने रसोई चढ़ा दी। कलकत्ते से एक हाँड़ी में कुछ मिठाई लाई गई थी वही हाँड़ी चूल्हे पर चढ़ाई गई।

रसोई चढ़ाकर कमला ने रमेश से कहा—अब आप शीघ्र स्नान कर आइए। रसोई तैयार होने में अब देर नहीं है।

इधर रसोई तैयार हुई उधर रमेश स्नान कर आया। अब यह प्रश्न उठा कि थाली तो साथ है नहीं, भोजन कैसे होगा? खिचड़ी किसमें परोसी जाय?

रमेश ने डरते-डरते कहा—कहो तो किसी खानसामा से एक रकाबी माँग लाऊँ ?

कमला—छिः !

रमेश ने कोमल स्वर में कमला को जता दिया कि ऐसा अनाचार मैं पहले भी कई बार कर चुका हूँ।

कमला ने कहा—पहले जो हुआ सो हुआ। अब वह बात न होगी। मैं ऐसा अनाचार देख न सकूँगी।

जिस ढक्कन (सकोरे) से हाँड़ी का मुँह ढका था उसी को वह अच्छी तरह धोकर ले आई। कहा,—आज आप इसी में खाइए, कल से देखा जायगा।

कमला ने अपने हाथ से चौका-आसन ठीक करके रसोई परोसी। रमेश पवित्रतापूर्वक भोजन करने बैठा। दो-एक कौर खाकर रमेश ने कहा—वाह ! खिचड़ी बहुत अच्छी बनी है।

कमला ने लजाकर कहा—चलो रहने दो, आपको सभी बातों में ठट्ठा ही सूझता है।

रमेश—"ठट्ठा नहीं, मैं सच कहता हूँ। 'हाथ-कङ्गन को आरसी क्या है', कुछ देर में देखोहीगी।" यह कहते-कहते उसने आगे की खिचड़ी निःशेष कर और भी माँगी। कमला ने अबकी बार यथेष्ट परोस दी। रमेश ने घबराकर पूछा—कुछ अपने लिए भी रक्खी है या सब मेरे ही आगे परोस दी ?

कमला—अभी बहुत है। उसके लिए आप चिन्ता न करें।

रमेश के तृप्तिपूर्वक भोजन करने से कमला बहुत प्रसन्न हुई। रमेश ने पूछा—तुम किस बर्तन में भोजन करोगी ?

कमला—क्यों ? इसी ढक्कन में।

रमेश ने कहा—नहीं, नहीं, यह न होगा। तुम जूठे बर्तन में कैसे खाओगी ?

कमला ने अचरज के साथ कहा—क्यों न खाऊँगी ?

रमेश—नहीं, यह नहीं हो सकता।

कमला—मज़े में हो सकता है। मैं सब ठीक कर लेती हूँ। "उमेश ! तुम काहे में खाओगे ?"

उमेश—नीचे हलवाई पूरी-मिठाई बेच रहा है, मैं उससे एक पत्ता माँगे लाता हूँ।

रमेश ने कमला से कहा—अगर तुम ढक्कन ही में खाओगी तो मुझे दो, मैं उसे अच्छी तरह धो दूँ।

कमला—"आपको क्या हो गया है!" कुछ देर बाद फिर उसने कहा—मैं बीड़ा न लगा सकी। आपने पान तो मँगाये ही नहीं।

रमेश—नीचे तँबोली पान बेचता है। लिये आता हूँ।

इस तरह पाकप्रणाली का सब काम बड़ी सुगमता के साथ हो गया। रमेश मन ही मन उद्विग्न होकर सोचने लगा—दाम्पत्य भाव को इस तरह कब तक परदे में रख सकूँगा ?

गृहिणी-पद प्राप्त करने के लिए कमला को किसी की सहायता या शिक्षा की आवश्यकता न थी। क्योंकि वह मामा

के घर रहकर घर का सब काम-धन्धा करना सीख गई थी। रसोई बनाती थी। घर की सब वस्तुओं को बड़ी हिफ़ाज़त से रखती थी। उस पर भी वह रोज़-रोज़ मामा और मामी की घुड़कियाँ सहती थी।

कमला की दक्षता, तत्परता और कार्य करने का उत्साह देखकर रमेश बहुत प्रसन्न हुआ, पर साथ ही यह भी सोचने लगा कि भविष्यत् में इसे लेकर घर का काम कैसे चलाया जा सकेगा! इसे कैसे पास रक्खूँगा या दूर कर सकूँगा? हम दोनों के बीच जो एक यवनिका पड़ी है उसे कौन उठावेगा? अगर हम दोनों के बीच इस समय नलिनी होती तो अनायास ही यवनिका उठ जाती। किन्तु इस आशा को यदि एकदम त्याग देना ही पड़े तो मैं अकेला कमला की समस्त समस्याओं की मीमांसा कैसे कर सकूँगा, यह कठिन जान पड़ता है। आख़िर उसने निश्चय किया कि कमला से सब बातें खोलकर कह देना ही उचित है। अब इन बातों को छिपा रखने से बड़ी गड़बड़ होगी।

चौबीसवाँ परिच्छेद

अभी दिन पहर भर भी न चढ़ा होगा कि स्टीमर एक बालू के टीले में फँस गया। अनेक प्रयत्न करने पर भी स्टीमर न चला। कछार के नीचे बहुत दूर तक बालू का मैदान था जो नदी के जल से मिला हुआ था। उस पर जलचर पक्षियों के पैरों के चिह्न उभरे हुए थे। नदी के निकटवर्ती गाँव की स्त्रियाँ सिर पर घड़ा रखकर वहाँ पानी भरने आई थीं। उनमें कितनी ही स्त्रियों के मुँह पर घूँघट था और कितनी ही स्त्रियों का चन्द्र-वदन खुला हुआ था। स्टीमर की ओर देखकर वे अपने मन के कुतूहल को मिटा रही थीं। गाँव के लड़के किनारे खड़े होकर, जहाज़ के रुक जाने को एक कुतूहल समझ, ख़ूब जोर से चिल्ला-चिल्लाकर उछल रहे थे।

स्टीमर दिन भर वहीं फँसा रहा। क्रमशः सूर्यास्त हुआ। रमेश जहाज़ का रेलिङ्ग पकड़कर चुपचाप सूर्यास्त-समय की शोभा देखने लगा। कमला अपनी रसोई बनाने की जगह से धीरे-धीरे आकर कमरे के दरवाज़े के पास खड़ी हुई। जब देखा कि रमेश शीघ्र पीछे की ओर मुँह न फिरावेगा तब वह दो-एक बार धीरे से खाँसी। इसका भी कोई फल न हुआ। आख़िर वह अपनी कुञ्जियों के गुच्छे से किवाड़ को खटखटाने लगी। अधिक शब्द सुनकर रमेश ने 'मुँह फिराया। कमला

को खड़ी देखकर वह उसके पास आया और बोला—भला यह तुम्हारे पुकारने की कैसी युक्ति है ?

कमला—और कैसे पुकारूँ ?

रमेश—क्यों ? मेरे बाप ने मेरा नामकरण किस लिए किया था ? यदि वह किसी व्यवहार में न आया तो वह एक प्रकार से व्यर्थ ही हुआ। काम के समय तुम मुझको रमेश बाबू कहकर पुकारो तो क्या हर्ज है ?

कमला ने इस बात को भी ठट्ठा ही समझा। उसका मुँह सायंकालिक लालिमा से यों ही लाल था, अब और भी लाल हो गया। उसने ज़रा गर्दन टेढ़ी करके कहा—न जाने आप क्या-क्या कहा करते हैं ! सुनिए, आपके लिए भोजन तैयार है, सबेरे ही कुछ खा लीजिए। आज उस वक़्त आपको अच्छी तरह भोजन नहीं मिला।

नदी की ठण्ढी हवा लगने से रमेश को भूख मालूम होती थी, किन्तु सामग्री के अभाव से कमला व्यग्र होगी, इस कारण वह कुछ न कह सका था। ऐसे समय अयाचित भोजन के संवाद से उसके मन में जो सुख उत्पन्न हुआ उसमें एक विचित्रता थी। वह केवल शीघ्र क्षुधा निवृत्त होने की विचित्रता न थी। विचित्रता यह थी कि रमेश कुछ न जानता था, तो भी उसके आहार की चिन्ता कमला के मन में जागृत थी। कमला मुझको सुखी रखने की चेष्टा में सदा लगी रहती है, यह देखकर रमेश का उस पर बड़ी ही श्रद्धा उत्पन्न हुई;

परन्तु वह उसकी प्राप्य श्रद्धा न थी। इतनी बड़ी बात केवल भ्रम के ऊपर खड़ी थी, इस बात का कठिन आघात उसके हृदय में लगा। उसने सिर झुकाकर एक लम्बी साँस ले कमरे के भीतर प्रवेश किया।

कमला ने उसके मुँह का भाव देखकर अचरज के साथ कहा—मालूम होता है, आपकी इच्छा अभी खाने की नहीं है। क्या आपको भूख नहीं लगी है? क्या मैं आपको ज़िद करके खिलाना चाहती हूँ?

रमेश ने झट मुँह पर प्रसन्नता का भाव झलकाकर कहा—ज़िद काहे की? मेरे पेट में आप ही चूहे कूद रहे हैं। अभी तो तुम भले ही कुञ्जी झनकारकर बुला लाई हो, परोसने के समय कहीं दर्पहारी मधुसूदन के दर्शन न हों!

अब रमेश ने चारों ओर देखकर कहा—खाने की वस्तु तो कहीं कुछ नज़र नहीं आती। क्षुधा का वेग अधिक होने पर भी घर का यह सब असबाब मुझे हज़म न होगा। लड़कपन से खाने-पीने का अभ्यास मुझे और ही क़िस्म का है। रमेश ने कमरे की कुरसी, चारपाई आदि वस्तुओं की ओर उँगली उठाकर दिखाई।

कमला खिलखिलाकर हँसने लगी। हँसी का वेग रुकने पर बोली—जान पड़ता है, अब आप मारे भूख के अधीर हुए जाते हैं। पहले आपको भूख-प्यास न थी। मेरे पुकारते ही आपको भूख की याद आ गई। अच्छा, आप दो-एक मिनट धैर्य से बैठें, मैं अभी जलपान की वस्तुएँ लाती हूँ।

रमेश—देरी होने से यह मेज़, स्टूल और कुरसी आदि कुछ भी देख न पड़ेगा। फिर मुझे दोष न देना।

इस हास्य-विनोद से कमला को बड़ी ख़ुशी हुई। वह फिर हँसने लगी। हँसते-हँसते वह रसोई बनाने की जगह से जल-पान की सामग्री लाने गई। रमेश के कृत्रिम प्रफुल्ल मुख पर फिर उदासी छा गई।

साखू के पत्ते से ढकी हुई कुछ चीज़ें हाथ में लिये कमला शीघ्र ही कमरे में आई। उसको चारपाई पर रखकर आँचल से मेज़ झाड़ने लगी।

रमेश ने जल्दी से पूछा—यह क्या कर रही हो?

"आप देखते तो रहिए, मैं क्या कर रही हूँ।" कहकर कमला ने मेज़ पर पत्ता बिछाकर उस पर पूरी-तरकारी रख दी।

रमेश ने कहा—बड़ा आश्चर्य है! तुमने पूरियाँ कैसे बनाईं?

कमला ने मुस्कुराकर कहा—आप ही बताइए, कैसे बनीं?

रमेश ने बहुत कुछ सोचने का सा भाव दिखाकर कहा—ज़रूर ही तुमने खलासियों के भोजन में से हिस्सा माँग लिया है।

कमला ने तमककर कहा—कभी नहीं, राम का नाम लो।

रमेश ने खाते-खाते पूरी के आदि-कारण के सम्बन्ध में अनेक असम्भव कल्पनाओं के द्वारा कमला को चिढ़ा डाला।

जब उसने कहा—आरब्योपन्यास के जादूगर अलाउद्दीन ने बलू-चिस्तान से गरमागरम पूरियाँ बनवाकर दैत्य के द्वारा सौगात भेजी है तब कमला अधीर हो उठी। उसने मुँह फेरकर कहा—जाइए, मैं अब आपसे न बोलूँगी!

रमेश ने डरकर कहा—नहीं, नहीं, मैं अटकल लगाते-लगाते थक गया। पर कोई कारण स्थिर न कर सका कि तुम्हें यहाँ, बीच दरिया में, पूरी बनाने के लिए सामान कैसे मिल गया। कारण न मालूम हुआ तो न सही, खाने में तो अच्छा मालूम होता है। यह कहकर रमेश एकाग्र मन से जठरानल की ज्वाला शान्त करने लगा।

जहाज़ को बालू में फँसा देखकर कमला ने बस्ती से भोजन की आवश्यक सामग्री मोल मँगाने के लिए उमेश को भेजा था। कमला जब स्कूल में थी तब रमेश ने उसको कुछ रुपये जलपान के लिए दिये थे। उन्हीं में से उसने कुछ बचा रक्खा था। उसी से उसने थोड़ा सा घी और आटा मोल मँगा लिया। कमला ने उमेश से पूछा—तुम क्या खाओगे?

उमेश—गाँव में एक ग्वाले के घर बहुत बढ़िया दही देख आया हूँ। केले अपने पास हैं ही। दो-एक पैसे का चिउड़ा और कुछ फल मोल मिल जाने से आज भर पेट फलाहार हो जायगा।

ये चीज़ें खाने की उस लड़के की रुचि देखकर कमला उत्साहपूर्वक बोली—कुछ पैसे बचे हैं?

उमेश—कुछ भी नहीं।

कमला बड़ी कठिनाई में पड़ी। रमेश से मुँह खोलकर कैसे रुपये माँगे, यही सोचने लगी। कुछ देर बाद बोली—अगर तुम्हारे नसीब में आज ये चीज़ें न बदी हों तो पूरियाँ खा लेना। चलो आटा गूँध लें।

उमेश ने कहा—मगर दही ऐसा उमदा देख आया हूँ कि आपसे क्या कहूँ!

कमला—देखो उमेश! बाबू जब खाने को बैठें तब तुम सौदा लाने के लिए पैसे माँगने आना।

रमेश जब कुछ भोजन कर चुका तब उमेश उसके सामने आ खड़ा हुआ। रमेश ने सिर उठाकर उसकी ओर देखा। उसने कमला से अधकट बात कही—माँ, बाज़ार के लिए पैसा—

तब रमेश को चेत हुआ कि भोजन की तैयारी करने में रुपये की ज़रूरत होती है। जादूगर की अपेक्षा करने से काम नहीं चल सकता। उसने कमला से कहा—तुम्हारे पास तो रुपये-पैसे हैं नहीं, मुझे क्यों न याद दिलाया?

कमला ने मौन साध अपराध स्वीकार कर लिया। भोजन करके रमेश ने कमला के हाथ में एक छोटा सा कैश-बक्स देकर कहा—यह लो, फ़िलहाल इसमें से रुपया निकालकर जो ख़र्च ज़रूरी हो, करो।

यों गृहिणी का कुल भार मेरे हाथ से धीरे-धीरे कमला के हाथ में जा रहा है,—जहाज़ का रेलिंग पकड़कर रमेश मन

पचीसवाँ परिच्छेद

किनारे की झाड़ी ने अपनी अविच्छिन्न श्यामल छटा से सन्ध्या-वधू के सुनहले आँचल में काली गोट लगा दी। पक्षीगण दिन भर अन्यत्र चरकर साँझ को अपने-अपने घोंसले में आये और कलरव से जङ्गल की निःस्तब्धता को भङ्ग करने लगे। कौवे कभी के अपने घोंसलों में लौट आये हैं। अब उनकी काँव-काँव बन्द हो गई है। नदी में उस समय एक भी नाव न थी; सिर्फ एक बड़ी डोंगी निस्तरङ्ग जल के ऊपर से धीरे-धीरे चली जा रही थी।

रमेश, जहाज की छत पर खड़ा होकर, नवोदित शुक्ल-पक्ष के चन्द्रमा के आलोक में एक बेत की कुर्सी पर बैठ गया।

धीरे-धीरे पश्चिम आकाश से सन्ध्या-काल की सुनहली रेखा लुप्त हो गई। चन्द्रमा की चटकीली चाँदनी की ऐन्द्र-जालिक शक्ति से सारा संसार मुग्ध सा हो गया। रमेश अपने आप मृदु स्वर में कहने लगा—"नलिनी! नलिनी!" उस नाम का शब्द मानो सुमधुर स्पर्श-रूप में उसके हृदय को बारंबार वेष्टन करके प्रदक्षिणा कर आया—उस नाम का शब्द मानो अपरिमेय करुणा-रसार्द्र छायामय दो चक्षुओं के रूप में उसके चेहरे पर वेदना विकीर्ण करता हुआ देखने लगा। रमेश का शरीर पुलकित हो गया और आँखों में आँसू आ गये।

उसका पिछले दो वर्ष का समस्त जीवन-वृत्तान्त उसका आँखों के सामने नाचने लगा। जिस दिन नलिनी के साथ उसका प्रथम परिचय हुआ था उस दिन का आज स्मरण हो आया। उस दिन को रमेश अब तक अपने जीवन का एक विशेष दिन समझ न सका था। योगेन्द्र जब उसे अपनी चाय की टेब्ल के पास ले गया था तब वहाँ नलिनी को बैठी देखकर लज्जाशील रमेश ने अपने को भारी विपज्जाल में फँसा समझा। धीरे-धीरे उसकी झिझक हटी। वह नलिनी के साथ मिल-जुल गया। धीरे-धीरे वही मेल-मिलाप रमेश के बन्धन का कारण हुआ। रमेश ने काव्य-साहित्य में जो कुछ प्रेम की कहानी पढ़ी थी उसे वह नलिनी के ऊपर आरोपित करने लगा। "मैं प्रेमिक हूँ, प्रेम करना जानता हूँ" इसका अभिमान उसके मन में उत्पन्न हुआ। उसके सहपाठी परीक्षोत्तीर्ण होने के लिए (पाठ्य पुस्तक की) प्रेम-विषयक कविता के अर्थ को कण्ठस्थ करने में ही अपना सिर खपाते थे, किन्तु रमेश सचमुच प्रेम करता था—यह सोचकर वह अन्य छात्रों को कृपापात्र समझता था। रमेश ने आज अच्छी तरह आलोचना करके देखा, उस दिन भी मैं प्रेम के बाहरी द्वार पर ही था। किन्तु कमला ने अकस्मात् आकर जब उसकी जीवन-समस्या को जटिल कर दिया तब कई विरुद्ध घात-प्रतिघातों द्वारा नलिनी के प्रति उसका प्रेम आकार धारण कर हृदय में जाग्रत हो उठा।

रमेश दोनों हाथों पर सिर रखकर सोचने लगा, जीवन का शेष भाग सामने पड़ा है, किन्तु उसका वर्तमान क्षुधित उपवासमय जीवन सङ्कटजाल में फँसा है। क्या उस जाल को अपने सबल हाथों से काटकर वह बाहर न हो सकेगा ?

ज्योंही दृढ़ संकल्प के आवेश में आकर उसने एकाएक सिर उठाया त्योंही देखा, पास ही एक बेत की कुरसी पर हाथ टेके कमला खड़ी है। कमला चकित होकर बोली—मालूम होता है आप सो गये थे, मैंने ही आपको जगा दिया है।

कमला को अनुतप्त होकर लौटते देख रमेश ने कहा—नहीं, नहीं, मैं सोया न था। तुम बैठो, में तुमसे एक कहानी कहूँगा।

कहानी का नाम सुनते ही कमला पुलकित होकर, कुरसी को ज़रा और आगे बढ़ाकर, बैठ गई। रमेश पहले ही निश्चय कर चुका था कि कमला से सब बातें खोलकर कह देनी चाहिएँ किन्तु वह इतनी बड़ी गहरी चोट उसे एकाएक न दे सका। इसी से उसने कहा—बैठो, मैं तुमसे एक कहानी कहूँगा।

रमेश ने कहा—एक समय एक जाति के क्षत्रिय थे। वे—

कमला ने पूछा—किस समय ? कब ? क्या बहुत अधिक समय हो गया ?

रमेश—हाँ, मुद्दत हो चुकी। जब तुम्हारा जन्म भी न हुआ था।

कमला—तो क्या तब आपका जन्म हो गया था? क्या आप बहुत पुराने समय के हैं? अच्छा, उसके बाद।

रमेश—उन क्षत्रियों की रीति थी कि वे स्वयं विवाह करने न जाते थे—इसके लिए वे तलवार भेज देते थे। उस तलवार के साथ लड़की का ब्याह हो जाने पर उसे घर लाकर फिर उसके साथ ब्याह करते थे।

कमला—छिः, छिः, ऐसा भी कहीं ब्याह होता है?

रमेश—मैं भी ऐसे ब्याह को पसन्द नहीं करता। किन्तु क्या किया जाय, यह क्षत्रियों की कहानी कह रहा हूँ। वे ससुर के घर जाकर ब्याह कराने में अपना अपमान समझते थे। मैं जिस राजा की कहानी कह रहा हूँ वह इसी जाति का क्षत्रिय था। वह एक दिन—

कमला—वे कहाँ के राजा थे, यह तो आपने बतलाया ही नहीं।

रमेश—वह मद्रदेश का राजा था। एक दिन वह—

कमला—पहले यह तो बतलाइए, राजा का नाम क्या था।

कमला सब बातों को स्पष्ट कर लेना चाहती है। उसके निकट कथा-सम्बन्धी कोई बात गुप्त रह जायगी तो वह आगे बढ़ने न देगी। रमेश यदि पहले से यह जानता होता तो वह और भी सावधान होकर कहानी कहता। अब उसे मालूम हो गया कि कमला को कहानी सुनने का जैसा शौक़ है उससे वह कहानी में किसी जगह चालाकी करने न देगी।

रमेश कुछ ठहरकर बोला—राजा का नाम था रण-जीतसिंह।

कमला ने याद कर लिया—रणजीतसिंह, मद्रदेश का राजा। फिर उसने पूछा—इसके बाद ?

रमेश—इसके बाद एक दिन राजा ने भाट के मुँह से सुना कि उनके स्वजातीय एक राजा के एक परम सुन्दरी बेटी है।

कमला—वे कहाँ के राजा थे ?

रमेश—मान लो, वह काञ्ची का राजा था।

कमला—मान लूँ ! तो क्या वे यथार्थ में काञ्ची के राजा न थे ?

रमेश—काञ्ची ही का राजा था। तुम उसका नाम जानना चाहती हो ? उसका नाम था अमरसिंह।

कमला—उस लड़की का नाम कहना तो आप भूल ही गये।

रमेश—हाँ, हाँ, मैं सचमुच भूल गया। उस लड़की का नाम—अच्छा मैं कहता हूँ—उसका नाम—उसका नाम था चन्द्रकला।

कमला—आश्चर्य है ! आप इस तरह भूलते क्यों हैं ? आप तो मेरा नाम भी भूल गये थे।

रमेश—कोशल देश के राजा ने भाट के मुँह से यह वृत्तान्त सुनकर—

कमला—कोशल के राजा कहाँ से निकल पड़े ? आपने तो मद्रदेश का राजा कहा था।

रमेश—क्या तुम समझती हो कि वह एक ही देश का राजा था ! नहीं, वह मद्रदेश का भी राजा था और कोशल का भी।

कमला—तो क्या दोनों राज्य पास ही पास थे ?

रमेश—हाँ।

इस तरह बारम्बार भूल करते-करते और सतर्क कमला के प्रश्नों की सहायता से उन सब भूलों का किसी तरह संशोधन करते-करते रमेश ने कथा का सिलसिला ठीक कर यों कहना आरम्भ किया—

"मद्रदेश के राजा रणजीतसिंह ने काञ्चीराज के पास दूत के द्वारा कहला भेजा कि हमें अपनी बेटी ब्याह दो। काञ्ची के राजा अमरसिंह ने बड़ी ख़ुशी के साथ उनके प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया।

"तदनन्तर रणजीतसिंह के छोटे भाई इन्द्रजीतसिंह ने, सेना-सामन्तों के साथ रङ्ग-बिरङ्ग की झण्डियाँ फहराते,—भाँति-भाँति के बाजे बजाते, डङ्का पीटते हुए, कई दिनों में—काञ्ची पहुँचकर एक वाटिका में डेरा डाला। काञ्ची नगर में उत्सव की धूम मच गई।

"राजा के पुरोहित ने पञ्चाङ्ग देखकर विवाह का शुभ दिन और मुहूर्त स्थिर कर दिया। कृष्णपक्ष की द्वादशी तिथि

को. ढाई पहर रात बीतने पर ब्याह का मुहूर्त निश्चित हुआ। उस रात को घर-घर मङ्गलाचार होने लगा। तोरण-बन्दनवार से नगर-निवासियों ने अपना-अपना घर अलंकृत किया। सारा शहर दीपावली से जगमगा उठा। आज रात को राजकुमारी चन्द्रकला का ब्याह है।

"परन्तु ब्याह किसके साथ होगा, यह राजकुमारी न जानती थी। उसके जन्मकाल में परमहंस नित्यानन्द स्वामी ने राजा से कहा था—तुम्हारी इस कन्या के ऊपर अशुभ ग्रह की दृष्टि है। अतएव ऐसा करना जिसमें ब्याह के समय इसे वर का नाम मालूम न हो।

"नियत समय में तलवार के साथ राजकुमारी का ग्रन्थि-बन्धन हो गया। इन्द्रजीतसिंह ने मुखदर्शनी दाख़िल कर भाभी को प्रणाम किया। मद्रराज के रणजीत और इन्द्रजीतसिंह मानो द्वितीय राम-लक्ष्मण थे। इन्द्रजीतसिंह ने चन्द्रकला के संकुचित मुख-कमल की ओर देखा भी नहीं। उन्होंने केवल उसके महावर से रँगे पायज़ेब-भूषित दोनों पैर देखे।

"यथोक्त रीति से ब्याह होने के दूसरे ही दिन इन्द्रजीतसिंह ने मोतियों की झालर लगी, मख़मल के पर्दे से ढकी, पालकी पर भाभी को बिठाकर अपने देश की यात्रा की। अशुभ ग्रह की बात याद करके काञ्चीराज ने शङ्कित हृदय से कन्या के मस्तक पर दहना हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। कन्या को छाती से लगाकर माता आँसू बरसाने लगी। अशुभ ग्रह

की शान्ति के निमित्त सैकड़ों ब्राह्मणों को देव-मन्दिर में पूजा-पाठ करने का सङ्कल्प दिया गया।

"काञ्ची से मद्रदेश बहुत दूर था। लगभग एक महीने का रास्ता था। दूसरी रात को जब वेतसा नदी के किनारे शिविर स्थापित कर इन्द्रजीतसिंह के साथी लोग विश्राम की आयोजना कर रहे थे तब जङ्गल के भीतर मशाल की रोशनी देखी गई। उसके जानने के लिए इन्द्रजीत ने सेना भेजी।

"सेना ने आकर कहा—वे लोग भी बाराती हैं। हमारी ही श्रेणी के क्षत्रिय हैं। अस्त्र-विवाह कराकर वधू को बिदा कराये लिये जा रहे हैं। रास्ते में अनेक विघ्नों का डर है, इसी से वे लोग श्रीमान् के शरणापन्न हुए हैं। आपकी आज्ञा होने पर कुछ दूर तक वे हम लोगों के साथ-साथ चलेंगे।

"कुँवर ने कहा—शरणागत को आश्रय देना हमारा धर्म है। वे निर्भय होकर हमारे साथ चलें। तुम लोग बराबर उनकी रक्षा में तत्पर रहो।

"इस प्रकार दो बारातें एक साथ होकर चलीं। आज अमावस की रात है। सामने छोटे-छोटे पहाड़ हैं और पीछे है घना जङ्गल। थके हुए सैनिक झिल्ली और समीपस्थ झरनों के मधुर शब्द को सुनते-सुनते गाढ़ निद्रा में निमग्न हो पड़े।

"इसी समय एकाएक अतर्कित कोलाहल से सब की नींद टूट गई। सभी ने देखा—मद्रराज के घोड़े पागल की भाँति इधर-उधर दौड़ रहे हैं। किसी ने उनका बन्धन काट दिया

है। किसी-किसी तम्बू में आग भी लग गई है, जिसके प्रकाश से अमावस की अँधेरी रात उजाली हो गई है।

"कुछ देर में सबको मालूम हो गया कि डाकुओं ने आक्रमण किया है। परस्पर मार-काट शुरू हुई। अँधेरे में शत्रु-मित्र का भेद जानना कठिन हो पड़ा। सभी उच्छृंखल हो गये। सुयोग पाकर डकैत लूट-पाट करके जङ्गल में जा छिपे।

"युद्ध शान्त होने पर राजकुमारी का पता न लगा कि कहाँ गई, क्या हुई। वह कोलाहल सुनकर ख़ीमे से बाहर हो गई थी और दूसरी बारातवालों को भागते देख वह उन्हें अपने दल के समझकर उन्हीं में जा मिली थी।

"वह दूसरी बारात का दल था। मार-काट के समय, सुयोग पाकर, डाकू उस बारात की वधू को हर ले गये थे। वह दल अब राजकुमारी चन्द्रकला को ही अपनी वधू जानकर, अपने देश की ओर बड़े वेग से ले चला।

"ये क्षत्रिय साधारण ज़मींदार थे। कलिङ्ग देश में समुद्र के किनारे इनका घर था। वहाँ राजकुमारी के साथ अन्य पक्ष के दूलह का मिलन हुआ। उसका नाम था चेतसिंह।

"चेतसिंह की माँ बहू को सादर स्वागत कर घर ले गई। टोले-महल्ले की स्त्रियों ने बहू को देखकर कहा—अहा, ऐसा सुन्दर रूप तो हमने कभी न देखा था।

"चेतसिंह नववधू को गृहलक्ष्मी समझ मन ही मन अपने भाग्य को सराहने लगा। राजकुमारी भी सतीधर्म की मर्यादा

जानती थी। उसने चेतसिंह को अपना पति जानकर उसे मन ही मन आत्मसमर्पण कर दिया।

"कुछ दिन तो उनके लज्जाभङ्ग होने ही में गये। जब झिझक दूर हुई तब दुलहिन की बातचीत से चेतसिंह को मालूम हो गया कि जिसे मैंने अपनी गृहिणी समझकर ग्रहण किया है, वह राजकुमारी चन्द्रकला है।"

छब्बीसवाँ परिच्छेद

कमला ने साँस रोककर बड़े आग्रह के साथ पूछा—फिर क्या हुआ ?

रमेश—मैं यहीं तक जानता हूँ, आगे क्या हुआ यह मुझे मालूम नहीं। तुम्हीं कहो, इसके बाद क्या हुआ ?

कमला—नहीं, नहीं, मैं न मानूँगी। इसके बाद क्या हुआ, वह मुझसे कहिए।

रमेश—मैं सच कहता हूँ, जिस ग्रन्थ से मुझे यह कहानी मिली है वह अब तक सम्पूर्ण नहीं छपा। कौन जाने, उसका शेष भाग कब प्रकाशित होगा !

कमला ने क्रुद्ध होकर कहा—चलिए रहने दीजिए, आप बड़े छली हैं। यह आपका भारी अन्याय है।

रमेश—जो ग्रन्थ लिख रहे हैं उन पर तुम क्रोध करो। मैं तुमसे केवल इतना ही पूछता हूँ—चन्द्रकला को लेकर चेतसिंह क्या करेगा ?

कमला नदी की ओर देखकर सोचने लगी। देर तक सोच-कर बोली—मैं नहीं बता सकती कि वह क्या करेगा। मेरी समझ में इस प्रश्न का कोई समीचीन उत्तर नहीं आता।

रमेश ने ज़रा चुप रहकर कहा—तो क्या चेतसिंह चन्द्र-कला से सब बातें खोलकर कह देगा ?

कमला—आप भी ख़ूब रहे। न कहेगा तो क्या छिपाकर गड़बड़झाला कर देगा? छिपाना तो बेढङ्गा काम होगा। सब साफ़ होना चाहिए न?

रमेश—हाँ, ऐसा तो होना ही चाहिए।

कुछ देर के बाद रमेश ने कहा—कमला अगर—

कमला—अगर क्या?

रमेश—मान लो, यदि मैं ही चेतसिंह होऊँ और तुम यदि चन्द्रकला हो—

कमला अनखाकर बोली—आप मुझसे ऐसी बात न कहें। मैं सच कहती हूँ, ऐसी बात मुझे अच्छी नहीं लगती।

रमेश—नहीं, यह तुमको बतलाना ही होगा। वैसी दशा हो तो मेरा क्या कर्तव्य होगा और तुम क्या करोगी?

इस प्रश्न का कुछ उत्तर दिये बिना ही कमला कुरसी पर से उठकर झट वहाँ से चली गई। वहाँ देखा, उमेश उसके कमरे के द्वार पर चुपचाप बैठा नदी की ओर देख रहा है। कमला ने पूछा—उमेश! तूने कभी भूत देखा है?

उमेश—हाँ, देखा तो है अम्माँ।

कमला ने, उसके पास ही एक मूढ़े पर बैठकर, कहा—अच्छा, बताओ तो कैसा भूत देखा है?

कमला जब खिसियाकर चली गई तब रमेश ने फिर उसे पुकारा नहीं। रमेश की दृष्टि के सामने बाँस का घना जङ्गल पड़ जाने से चन्द्रमा अदृश्य हो गया। डेक के ऊपर की

रोशनी बुझाकर खलासी लोग जहाज़ के नीचे के हिस्से में भोजन करने और सोने के उद्योग में गये हैं। पहली और दूसरी श्रेणी में कोई यात्री न था। तीसरी श्रेणी के अधिकांश यात्री रसोई आदि बनाने के लिए जहाज़ से उतरकर किनारे की सूखी बालू पर गये हैं। अन्धकाराच्छन्न नदी-किनारे की झाड़ी में से समीपवर्ती बाज़ार का यत्र-तत्र उजेला देख पड़ता है। नदी का तीक्ष्ण प्रवाह लोहे के लङ्गर को झनकारता हुआ बह रहा है। रह-रहकर गङ्गा की तरङ्ग स्टीमर को डगमगा देती है।

इस अपरिस्फुट विपुलता, इस अन्धकार की निबिड़ता और इस अपरिचित दृश्य की प्रकाण्ड अपूर्वता के बीच रमेश अपने कर्तव्य की मीमांसा करने लगा। उसने निश्चय किया कि नलिनी या कमला, इन दोनों में से किसी एक को छोड़ना ही होगा। ऐसा कोई रास्ता नहीं जिसमें नलिनी और कमला दोनों का निर्वाह हो सके। तथापि नलिनी को आश्रय है; वह निरवलम्ब नहीं है। वह अब भी मुझे भूलकर दूसरे के साथ ब्याह कर सकती है। किन्तु कमला को त्याग दें तो उसके लिए कुछ सहारा नहीं, उसका जीवन व्यर्थ हो जायगा।

मनुष्य की स्वार्थपरता का अन्त नहीं है। नलिनी रमेश को भूल सकती है। उसकी रक्षा का उपाय है। वह अनन्य-गति नहीं है। इससे रमेश को कुछ सान्त्वना न हुई। उसकी अधीरता और बढ़ गई। उसने समझा, नलिनी मेरे हाथ से

निकली जा रही है, वह सदा के लिए दूसरे की होकर रहना चाहती है। अब भी हाथ बढ़ाकर मैं उसे अपनी ओर खींच सकता हूँ।

रमेश दोनों हाथों पर सिर रखकर इस प्रकार मन ही मन सोचने लगा। जङ्गल में गीदड़ बोलने लगे। साथ ही गाँव के दो-एक असहनशील कुत्ते भूँकने लगे। रमेश ने सिर उठाकर देखा, सामने कमला डेक का रेलिङ्ग पकड़े अन्धकार में अकेली खड़ी है। रमेश ने कुरसी से उठकर कहा—कमला, तुम अब भी सोई नहीं? रात बहुत जा चुकी।

कमला—आप न सोयेंगे?

रमेश—मैं भी अब सोने जाता हूँ। पूरब ओर के कमरे में मेरा बिस्तर लगा है। तुम भी अब देर न करो, अपने बिछौने पर लेट रहो।

कमला ने इसका कुछ उत्तर नहीं दिया। वह धीरे-धीरे अपने निर्दिष्ट कमरे में चली गई। वह रमेश से यह न कह सकी कि कुछ ही देर पहले मैंने भूत की कहानी सुनी है और मेरे कमरे में दूसरा कोई नहीं है।

कमला को अनिच्छापूर्वक जाते देख रमेश के हृदय में गहरी चोट लगी। उसने कहा—कमला, डरने की कोई बात नहीं, तुम्हारी कोठरी के पास ही मेरी कोठरी है। बीच का दरवाज़ा खुला रहेगा।

कमला ने लापरवाही के साथ सिर हिलाकर कहा—भला मैं क्यों डरने लगी ?

रमेश अपनी कोठरी की बत्ती बुझाकर सो रहा। उसने मन ही मन कहा—कमला का परित्याग करने को कोई मार्ग नहीं है इसलिए अब नलिनी की आशा त्याग देना ही अच्छा है। यही स्थिर हुआ। इसमें आगा-पीछा करना ठीक नहीं।

अँधेरे में लेटा हुआ रमेश इसी का अनुभव करने लगा कि नलिनी की आशा छोड़ने में ज़िन्दगी की कितनी बातों से हाथ धोने पड़ेंगे। वह अब बिस्तरे पर पड़ा न रह सका। उठकर बाहर आया। रात के अँधेरे में उसने अनुभव किया कि मेरी ही लज्जा, और मेरी ही वेदना कुछ अनन्त देश और अनन्त काल में व्याप्त नहीं है। आकाश को पूर्ण करके चिरकाल के ज्योतिर्लोक सन्नाटे में आ गये हैं—नलिनी के और मेरे क्षुद्र इतिहास ने उन्हें छुआ भी नहीं है—यह क्वार महीने की नदी अपने निर्जन बालुका-तट में प्रफुल्ल काँस के जङ्गल के नीचे होकर ऐसी कितनी ही नक्षत्रालोकित रातों में सो रहे गाँवों की वन-प्रान्त-छाया में बहती रहेगी,—जब कि रमेश के जीवन का सारा धिक्कार मरघट की मुट्ठी भर भस्म के बीच सदा से धैर्य धारण कर रही धरती में मिलकर हमेशा के लिए शान्त हो गया होगा !

—

सत्ताईसवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन कमला जब जागी तब सबेरा हो गया था। पर सूर्योदय होने में कुछ विलम्ब था। उसने चारों ओर नज़र उठाकर देखा, कमरे में कोई न था। तब उसे धक से याद आ गया कि मैं जहाज़ पर हूँ। धीरे से उठकर उसने खिड़की खोलकर देखा, नदी के स्वच्छ जल पर कुछ-कुछ कुहरा छाया है। पूरब ओर उदय-काल की ललिमा दिखाई दे रही है। देखते ही देखते सफ़ेद पाल की नौकाओं से गङ्गा की धारा भर गई।

कमला किसी तरह न समझ सकी कि कौनसी गूढ़ यन्त्रणा मेरे हृदय को व्यथित कर रही है। शरद् ऋतु की यह लालिमा-विभूषित उषा आज क्यों मेरे मन में आनन्द नहीं उपजाती? आज क्यों रह-रहकर मेरी आँखों में आँसू उमड़ आते हैं? मेरे न ससुर है, न सास है, न संगिनी है और न कोई स्वजन-परिजन ही।—इसका दुःख मन में कल तक न था। रात ही भर में क्या परिवर्तन हो गया जिससे आज मेरे मन में यह चिन्ता समा गई कि एक रमेश ही मेरे सम्पूर्ण आश्रयस्थानीय नहीं हैं? ऐसा क्यों उसके मन में हुआ कि यह जगत् बहुत बड़ा है और मैं बालिका नितान्त छोटी हूँ।

कमला देर तक किवाड़ पर हाथ रक्खे चुपचाप खड़ी रही। नदी का प्रवाह प्राभातकालिक सूर्य की किरण पड़ने

से चञ्चल स्वर्णस्रोत की तरह दिखाई देने लगा। खलासी अपने काम में लग पड़े। एञ्जिन से भक्-भक् शब्द होना शुरू हो गया। लङ्गर उठने और जहाज़ को ठेलकर गहरे पानी में ले जाने के शब्द से असमय में ही जागकर झुण्ड के झुण्ड बालक नदी-किनारे दौड़ आये।

इसी समय इस हल्ले-गुल्ले में रमेश की नींद टूट गई। वह कमला को देखने के लिए उसकी कोठरी के द्वार पर गया। कमला ने चकित होकर, यथास्थान आँचल रहने पर भी ज़रा उसे खींचकर अपने अङ्ग को विशेष रूप से ढकने की चेष्टा की।

रमेश ने कहा—कमला, तुम हाथ-मुँह धो चुकीं?

इस प्रश्न से कमला क्यों नाराज़ होगी, यह उससे पूछा जाता तो कुछ भी उत्तर न मिलता। किन्तु एकाएक कमला को क्रोध हुआ। उसने दूसरी ओर मुँह फेरकर केवल सिर हिलाकर जतलाया—नहीं।

रमेश ने कहा—ज़रा दिन चढ़ते ही लोग उठ बैठेंगे। अभी निबट आओ।

कमला ने इसका कुछ उत्तर तो न दिया पर वह एक साड़ी और तौलिया लेकर रमेश के पास से ही स्नान-घर में चली गई।

रमेश जो सबेरे ही उठकर कमला को देखने आया, इसे कमला ने केवल अनावश्यक ही नहीं समझा, बल्कि इसमें उसने अपना अपमान भी समझा। रमेश का भाव उस पर

कैसा है यह कुछ-कुछ उसे झलक गया। उसके साथ रमेश की आत्मीयता की सीमा संकुचित है, यह उसे मालूम हो गया। ससुराल में किसी ने उसको लज्जा करना न सिखाया था। सिर पर किस समय कितना बड़ा घूँघट डालना चाहिए, इसका भी उसे पूर्ण ज्ञान न था—किन्तु रमेश के सामने आते ही न मालूम क्यों उसका हृदय आज लज्जा से संकुचित होने लगा।

स्नान कर कमला जब अपनी कोठरी में आकर बैठी तब दिन का काम उसके सामने आया। आँचल के छोर में बँधी हुई कुञ्जी कन्धे पर लटक रही थी। उसे लेकर कपड़े का बैग खोलते ही छोटे से कैश-बक्स पर उसकी नज़र पड़ी। जब यह कैश-बक्स मिला था उस समय कमला ने एक विशेष गौरव का अनुभव किया था। उसके हाथ में एक स्वाधीन शक्ति आई थी। इसी से उसने कैश-बक्स को अपनी पेटी में बन्द करके बड़े यत्न से रक्खा था। आज उस बक्स को हाथ से उठाने पर कमला को कुछ भी हर्ष न हुआ। आज वह बक्स उसे बिलकुल अपना न जान पड़ा। वह रमेश का है। उस बक्स पर कमला की पूर्ण स्वाधीनता नहीं है। इसलिए वह रुपये का बक्स उसको एक भार सा जान पड़ा।

रमेश ने कमला के पास आकर कहा—इस खुली पेटी के भीतर किसी गूढ़ रहस्य का अर्थ तो नहीं मिल गया? आज तो निश्चिन्त बैठी हो?

कमला ने कैश-बक्स उठाकर कहा—लीजिए, यह आपका बक्स है।

रमेश—मैं क्या करूँगा ?

कमला—क्यों ? आप जब जिस चीज़ की ज़रूरत समझें मुझे मँगा दीजिएगा।

रमेश—तो तुम्हें कुछ दरकार नहीं ?

कमला ने ज़रा गर्दन झुकाकर कहा—मुझे रुपये-पैसे की क्या ज़रूरत है ?

रमेश ने हँसकर कहा—इतनी बडी बात कितने लोगों के मुँह से निकल सकती है ? कुछ भी हो, जो तुम्हारे इतने अनादर की वस्तु है क्या वह दूसरे को दी जाने योग्य है ? मैं भी वह न लूँगा।

कमला ने कुछ उत्तर न देकर मेज़ के ऊपर कैश-बक्स रख दिया।

रमेश ने कहा—अच्छा कमला, तुम सच-सच कहो, मैंने अपनी कहानी पूरी नहीं की इसी से क्या तुम मुझ पर इतनी नाराज़ हो ?

कमला ने सिर नीचा करके कहा—नाराज़ कौन है ?

रमेश—अगर नाराज़ नहीं हो तो यह कैश-बक्स अपने पास रक्खो। इसी से तुम्हारी बात की सत्यता प्रमाणित हो जायगी।

कमला—कैश-बक्स न रखने से मेरी नाराज़गी क्यों ज़ाहिर होगी ? आपकी वस्तु है, आप अपने पास रखिए। इसमें नाराज़गी की क्या बात ?

रमेश—अब वह मेरी वस्तु नहीं। देकर ले लेने से, मरने पर, मुझे ब्रह्मराक्षस होना पड़ेगा। क्या मुझे इसका डर नहीं है ?

रमेश की ब्रह्मराक्षस होने की आशङ्का सुनकर कमला को एकाएक हँसी आ गई। वह हँसते-हँसते बोली—कभी नहीं। देकर ले लेने से ब्रह्मराक्षस होना पड़ता है, यह तो मैंने कभी सुना नहीं।

अकस्मात् इस हँसी से सन्धि का सूत्रपात्र हो गया। रमेश ने कहा—दूसरे से तुम यह बात कैसे सुनोगी ? अगर तुम कभी किसी ब्रह्मराक्षस को देखो तो उससे पूछकर सच-झूठ का निर्णय कर लेना।

कमला ने कुतूहलाक्रान्त होकर पूछा—अच्छा, सच कहिए, आपने कभी सचमुच ब्रह्मराक्षस देखा भी है।

रमेश—ऐसे ब्रह्मराक्षस तो अनेक देखे हैं जो सचमुच के नहीं हैं। दुनिया में असली चीज़ मिलना दुर्लभ है।

कमला—क्यों ? उमेश ने तो देखा है। वह कहता—

रमेश—कौन उमेश ?

कमला—अजी वही लड़का, जो हमारे साथ जा रहा है। कहता था, मैंने अपनी आँखों ब्रह्मराक्षस देखा है।

रमेश—मैं इन बातों में उमेश की समता नहीं कर सकता, यह मैं मानता हूँ।

इधर खलासी लोग अनेक यत्न करके स्टीमर को गहरे पानी में बहा ले आये। जहाज़ अपनी जगह से कुछ ही दूर

आगे बढ़ा था कि इतने में एक आदमी सिर पर टोकरी रक्खे दौड़ता हुआ किनारे आया और हाथ उठाकर जहाज़ रोकने के लिए प्रार्थना करने लगा। जहाज़ के ड्राइवर ने उसकी व्याकुलता पर कुछ ध्यान न दिया। तब वह रमेश बाबू की ओर देखकर "बाबू, बाबू" कहकर चिल्लाने लगा। रमेश ने कहा—"इसने मुझे जहाज़ का टिकट-बाबू समझ लिया है" फिर दोनों हाथ हिलाकर जता दिया कि स्टीमर ठहराने का मुझे अधिकार नहीं है।

कमला एकाएक बोल उठी—अरे! वह तो उमेश है! उसे मत छोड़िए। उसे जहाज़ पर चढ़ा लीजिए।

रमेश—मेरे कहने से स्टीमर थोड़े ही रुकेगा।

कमला ने अधीर होकर कहा—नहीं, नहीं, आप रोकने को कहिए। एक बार कहिए तो सही, किनारा यहाँ से बहुत दूर नहीं है।

रमेश ने प्रधान खलासी से जहाज़ रोकने का अनुरोध किया तो उसने कहा—बाबू, कम्पनी का ऐसा नियम नहीं है।

कमला ने बाहर आकर प्रधान खलासी से कहा—उसे छोड़-कर मैं न जा सकूँगी। दो मिनट के लिए आप जहाज़ को ठहराइए। वह मेरा उमेश है।

रमेश ने प्रधान खलासी से नियम भङ्ग कराने का एक सहज उपाय सोचा। इनाम के लोभ से उसने जहाज़ ठहरा-कर उमेश को चढ़ा लिया और उसे ख़ूब फटकार बताई।

उमेश उस पर कुछ भी ध्यान दिये बिना ही कमला के आगे टोकरी रखकर हँसने लगा, मानों कुछ हुआ ही नहीं है।

कमला के हृदय का क्षोभ तब भी दूर न हुआ था। उसने उमेश से कहा—तू हँसता है! अगर जहाज़ न ठहरता तो तेरी क्या दशा होती?

उमेश ने उस प्रश्न का कोई उत्तर न देकर सामने टोकरी को उँड़ेल दिया। उसमें से कच्चे केले, दो तीन क़िस्म की भाजी और बैंगन निकल पड़े।

कमला ने पूछा—ये चीज़ें कहाँ से लाया?

उमेश ने उन चीज़ों के संग्रह करने का जो इतिहास कहा, वह रत्ती भर भी सन्तोष-जनक न था। कल बाज़ार से दही आदि वस्तु लाने के समय वह किसी की फुलवाड़ी और किसी के खेत में ये चीज़ें देख आया था। आज ख़ूब तड़के जहाज़ खुलने के पहले ही वह किनारे उतरकर, बिना किसी से कुछ पूछे, इन सब चीज़ों को जहाँ-तहाँ से ले आया।

रमेश ने अत्यन्त रुष्ट होकर कहा—तू दूसरे के खेत से ये सब चीज़ें चुराकर क्यों ले आया?

उमेश—चोरी भला क्यों करूँगा? खेत में बहुत फल लगे थे, मैं थोड़े से तोड़ लाया तो कौन बड़ा नुक़सान हो गया? इससे उसकी क्या हानि हुई?

रमेश—थोड़ा लेना क्या चोरी नहीं है? मूर्ख! जा यहाँ से; ये चीज़ें मेरे सामने से उठा ले जा।

उमेश ने कातर दृष्टि से एक बार कमला के मुँह की ओर देखकर कहा—माँ, यह साग-भाजी बहुत उमदा है और—

रमेश ने दुगुना क्रोध करके कहा—अभी यहाँ से अपनी साग-भाजी ले जा। नहीं तो मैं सब नदी में फेंक दूँगा।

अब क्या करना चाहिए, यह जानने के लिए उमेश ने कमला के मुँह की ओर देखा। कमला ने ले जाने का संकेत किया। उस संकेत के भीतर करुणा मिली प्रसन्नता देख उमेश उन साग-भाजियों को टोकरी में उठाकर वहाँ से धीरे-धीरे चला गया।

रमेश ने कमला से कहा—देखो, यह बहुत बुरा काम है। तुम उस लड़के को आश्रय न दो।

यह कहकर रमेश चिट्ठी-पत्री लिखने के लिए अपनी कोठरी में चला गया। कमला ने खिड़की से सिर निकालकर देखा उमेश, उसकी रसोई बनाने की जगह, चूल्हे के पास, चुप-चाप बैठा है।

सेकेंड क्लास का कोई यात्री न था। कमला ने रसोई का प्रबन्ध करने के बहाने रसोई के स्थान में जाकर उमेश से कहा—क्या तूने सब चीज़ें फेंक दीं?

उमेश—इतने परिश्रम से क्या फेंकने ही के लिए ले आया हूँ? यहीं सब चीज़ें रक्खी हैं।

कमला ने ज़रा घुड़ककर कहा—तूने बहुत बेजा काम किया! फिर कभी ऐसा काम न करना। दूसरे की तिनके के बराबर

चीज़ क्यों न हो, बिना माँगे हर्गिज़ न छूना। देखो, अगर स्टीमर चला जाता तो!

इतना कहकर कमला घर के भीतर गई और उमेश से कहा—ला, छुरी ला।

उमेश छुरी ले आया। कमला तरकारी बँदारने लगी।

उमेश ने कहा—माँ, यह साग बेसन लगाकर भूनने से बड़ा अच्छा बनता है।

कमला ने क्रुद्ध स्वर में कहा—अच्छा देख, बेसन है भी। कमला ने उमेश के प्रति ऐसा भाव दिखाया, जिससे वह बहक-कर फिर ऐसा काम न करे। गम्भीर भाव धारण कर कमला ने उसके लाये साग, केले और बैंगनों को काटकर रसोई चढ़ा दी।

हाय! इस अनाथ बालक को आश्रय दिये बिना कमला कैसे रह सकती है? कमला ठीक-ठीक नहीं जानती कि साग चुराना कितनां बड़ा दोष है—किन्तु उसे यह मालूम है कि निरा-श्रय बालक को आश्रय देना कितना बड़ा धर्म है। वह ग़रीब लड़का जो कमला को प्रसन्न करने के लिए कल ही से तरकारी की खोज में घूम रहा था, और ज़रा देर होने ही से उसे स्टीमर न मिलता, क्या इस बात की दया कमला को स्पर्श किये बिना रह सकती?

कमला ने कहा—उमेश, तुम्हारे लिए कल का थोड़ा सा दही रक्खा है। तुम्हें आज भी दही खिलाऊँगी, पर ऐसा काम फिर कभी न करना!

उमेश ने अत्यन्त दुखी होकर कहा—माँ ! क्या आपने कल वह दही नहीं खाया ?

कमला—तेरी तरह दही के लिए मैं व्याकुल नहीं रहती। हाँ उमेश ! सब तो हुआ, दूध का क्या प्रबन्ध होगा ? बिना दूध के बाबू कैसे भोजन करेंगे ?

उमेश—दूध का प्रबन्ध हो सकता है, परन्तु मुफ़् नहीं।

कमला फिर शासन-कार्य में प्रवृत्त हुई। उसने अपनी सुन्दर भौंहें तानकर कहा—उमेश, तुझसा मूर्ख मैंने कभी नहीं देखा। क्या मैंने तुझसे मुफ़् कोई चीज़ लाने को कहा है ?

कल से उमेश के मन में एक प्रकार की धारणा हो गई है कि रमेश से रुपया माँगना कमला के लिए सहज काम नहीं है। इसलिए वह मन ही मन कोई सहज उपाय सोच रहा था जिसके द्वारा रमेश की पर्वा छोड़कर, कमला और आप दोनों मिलकर घर का काम चला सकें। तरकारी से तो वह एक प्रकार से निश्चिन्त हो गया। किन्तु दूध का क्या उपाय किया जाय, इसकी युक्ति अभी तक स्थिर न कर सका था। संसार में केवल निःस्वार्थ भक्ति के बल पर साधारण दूध-दही का भी प्रबन्ध होना कठिन है। पैसा दरकार है, इसलिए कमला के अकिञ्चित् बालक-भक्त उमेश के लिए यह संसार बड़ा ही कठिन जान पड़ा।

उमेश ने कुछ कातर होकर कहा—माँ, अगर बाबू से कहकर किसी तरह पाँच आने पैसे दिला दो तो मैं सेर दो सेर दूध लाने की कोशिश करूँ।

कमला उद्विग्न होकर बोली—नहीं, नहीं, अब तुझे स्टीमर से उतरने न दूँगी। अब तू किनारे जायगा तो तुझे कोई जहाज़ पर न ले सकेगा।

उमेश—मैं किनारे क्यों जाऊँगा? जहाज़ पर कप्तान की एक गाय है। रोज़ सात-आठ सेर दूध देती है। शायद कहने से थोड़ा मोल दे दे।

कमला ने झट एक रुपया लाकर उमेश के हाथ में रख दिया और कहा—जो दाम ले सो देकर बाक़ी फिरता लेना।

उमेश तीन सेर दूध ले आया, किन्तु कुछ फिरता न लाया। कहा—तीन सेर दूध का पूरा एक रुपया ले लिया।

कमला ने मुस्कुराकर कहा—अब स्टीमर ठहरेगा तो रुपया भुना लूँगी।

उमेश ने गम्भीरतापूर्वक कहा—हाँ, यह तो बहुत ज़रूरी काम है। बँधा रुपया एक दफ़े जहाँ बाहर हुआ कि फिर उसका फिरना कठिन हो जाता है।

रमेश ने भोजन करने को बैठकर कहा—"वाह! भोजन की सामग्री तो अच्छी बनी है।" दूध देखकर उसको और भी आश्चर्य हुआ। वह भोजन करके तृप्त हो गया।

इस प्रकार उस दिन मध्याह्न का भोजन बड़े समारोह के साथ हुआ। रमेश भोजन करके डेक पर जाकर आराम-कुरसी पर लेट गया। अब कमला उमेश को खिलाने बैठी। उमेश को अच्छी तरह खिला-पिलाकर उसने आप भी भोजन किया।

इस प्रकार दिन के काम और हास्य-विनोद में सबेरे का मन-मुटाव कब कैसे दूर हो गया, यह कमला को मालूम भी न हुआ।

क्रमशः दिन ढला। साँझ हुई। नदी के दोनों किनारों के हरे धान से लहराते हुए खेतों की संकीर्ण राह से होकर गाँव की कितनी ही स्त्रियाँ बग़ल में घड़ा दबाये पानी भरने के लिए आ रही थीं।

कमला ने पान लगाकर बाल सँवारे और मुँह-हाथ धोकर साड़ी बदली। जब वह सायङ्कालिक गृहकार्य करने को तैयार हुई तब सूर्यास्त हो गया था। स्टेशन के घाट पर ठहरकर जहाज़ ने लङ्गर डाल दिया।

आज कमला को रात के लिए रसोई बनाने में वैसा झंझट न था। दिन की बनी तरकारी इस समय के लिए रक्खी थी। इसी समय रमेश ने आकर कहा—आज मैंने दिन में बहुत ज्यादा खा लिया। इस समय कुछ न खाऊँगा।

कमला ने उदास होकर कहा—कुछ न खाइएगा? थोड़ा सा दूध हलुवा भी नहीं?

"नहीं, कुछ भी नहीं।" कहकर रमेश चला गया।

कमला ने दिन की रक्खी सब चीज़ें उमेश को परोस दीं। उमेश ने कहा—अपने लिए कुछ न रक्खा?

कमला—मैं खा चुकी।

इस तरह बहती हुई गृहस्थी का कमला का समस्त दिनकृत्य पूरा हुआ।

तब चाँदनी क्या जल क्या स्थल सब जगह अच्छी तरह छिटक गई थी। किनारे कोई गाँव न था। नदी के किनारे धान के दूर तक फैले हरे-हरे खेतों पर उजाली रात की छटा-छा रही थी।

घाट पर, टीन के बने, छोटे से घर में स्टीमर-कम्पनी का दफ़्तर था। वहाँ एक दुबला-पतला क्लर्क स्टूल पर बैठा, मेज़ के ऊपर एक चिराग़ रक्खे बही लिख रहा था। खुले दरवाज़े की राह से रमेश उस क्लर्क को देख रहा था और दीर्घ-निःश्वास लेकर मन ही मन सोच रहा था कि यदि मेरा नसीब इस क्लर्क की भाँति मुझे भी एक छोटे से सीधे-सादे किन्तु साफ़ काम में उलझा रखता, मुझे इस तरह की उलझन में न फँसाता तो मैं भी दिन भर बैठा-बैठा हिसाब लिखता, काम करता, और काम में ग़लती होने पर मालिक की घुड़की खाता। फिर दिन का काम पूरा करके रात को अपने घर चला जाता। अगर इस तरह मेरा जीवन व्यतीत होता तो क्या ही अच्छा होता—मेरी जान बचती!

कुछ देर में आफ़िस का चिराग़ बुझ गया। दफ़्तर में ताला लगाकर और जाड़े के भय से सिर में कपड़ा लपेटकर, क्लर्क खेत के बीच से होता हुआ अपने घर को चला गया।

रमेश को ख़बर ही न थी कि कमला बड़ी देर से रेलिङ्ग पकड़े मेरे पीछे चुपचाप खड़ी है। कमला ने सोचा था, कि सन्ध्या होने के बाद रमेश मुझे बुला लेगा, इसलिए घर का

सब काम-धन्धा करके जब उसने देखा कि रमेश मेरी खोज-ख़बर लेने न आया तब वह आप ही धीरे-धीरे जहाज़ की छत पर गई। किन्तु वहाँ जाकर वह एक जगह खड़ी हो रही। रमेश के पास न जा सकी। चन्द्रमा का प्रकाश रमेश के चेहरे पर पड़ रहा था। मानो वह मुखड़ा दूर है, बहुत दूर—कमला के साथ उसका कुछ भी सम्बन्ध नहीं। ध्यानमग्न रमेश और सङ्गविहीना कमला के बीच मानों यह विराट् रात्रि चाँदनी रूपी चादर से सर्वाङ्ग को ढके, ठोड़ी पर उँगली रक्खे, चुपचाप खड़ी पहरा दे रही थी!

रमेश ने जब दोनों हाथों के बीच मुँह रखकर टेबिल पर रक्खा तब कमला पैरों की आहट बचाकर धीरे-धीरे अपनी कोठरी की ओर गई, जिसमें रमेश को मालूम न हो कि कमला मेरी टोह लेने आई है।

कमला के सोने की कोठरी सूनी थी। अँधेरे में वहाँ अकेली जाने के कारण उसकी छाती धड़कने लगी। वह अपने को बिलकुल परित्यक्त और अकेली समझने लगी। लकड़ी के तख़्तों का बना वह छोटा सा कमरा उसे ऐसा जँचा मानों कोई अपरिचित निष्ठुर जन्तु मुँह फैलाकर अन्धकार फैला रहा हो। अब वह कहाँ जावे? अपने छोटे से शरीर को कहाँ रखकर वह कहे कि यह मेरा स्थान है।

कोठरी के भीतर प्रवेश करने का उसे साहस न हुआ। वह द्वार के पास खड़ी हो, भीतर झाँककर, बाहर निकल आई।

बाहर निकलते समय रमेश की छतरी टीन की पेटी के ऊपर गिर पड़ी, इससे एक शब्द हुआ। उससे चौंककर रमेश ने सिर उठाया और कुरसी से उठकर देखा, कमला अपने सोने की कोठरी के सामने खड़ी है। रमेश ने कहा—कमला, यह क्या! मैंने समझा था, तुम सो गई होगी। तुम डरती तो नहीं हो? अच्छा, अब मैं बाहर न बैठूँगा। मैं इसी पासवाली कोठरी में लेटता हूँ। दोनों कोठरियों के बीच का दरवाज़ा खुला ही रहेगा।

कमला ने प्रौढ़ता के साथ कहा—"मैं नहीं डरती।" यह कहकर उसने बड़े वेग से अपनी अँधेरी कोठरी में प्रवेश किया और जिस दरवाज़े को रमेश ने खुला रक्खा था उसे उसने बन्द कर दिया। चारपाई पर लेटकर उसने चादर से मुँह ढक लिया। संसार में मानो और किसी को न पाकर वह अपने आप से ख़ूब लिपट गई। उसका हृदय विद्रोही हो गया। जहाँ अपना कोई सम्बन्धी नहीं, स्वाधीनता नहीं, वहाँ कोई क्योंकर जी सकता है?

रात उसके लिए पहाड़ हो गई। रमेश पासवाली कोठरी में सो गया था। कमला अब बिस्तर पर न रह सकी। वह धीरे-धीरे कोठरी से बाहर चली आई। जहाज़ का रेलिङ्ग पकड़कर नदी के किनारे की ओर देखने लगी। कहीं किसी प्राणी का शब्द सुनाई न देता था। सर्वत्र सन्नाटा छाया था। चन्द्रमा पच्छिम की ओर प्रयाण कर चुका था। धान के खेतों

के बीच से जो पगडण्डी गई है, उसकी ओर देखकर कमला सोचने लगी, "इस राह से कितनी ही स्त्रियाँ रोज़ नदी से पानी भरकर अपने घर जाती होंगी।" घर का नाम याद आते ही उसकी आँखों में आँसू भर आये। छोटा सा घर, हाय! वह घर है कहाँ? उसने नज़र उठाकर एक बार दुःख-भरी दृष्टि से चारों ओर देखा, गहरी रात में सूना किनारा सायँ-सायँ कर रहा है—विशाल आकाश में इस छोर से उस छोर तक सन्नाटा छाया हुआ है। हा! साधारण बालिका के लिए इतना बड़ा आकाश और इतनी बड़ी पृथ्वी व्यर्थ मालूम होने लगी। उसे तो एक छोटे से घर की आवश्यकता थी।

कमला एकाएक चौक उठी। उसके पास कोई आदमी खड़ा था।

"माँ, डरो मत, मैं उमेश हूँ। रात बहुत बीती। आप अभी तक जागती हैं, सोईं नहीं?"

इतनी देर से जो आँसू उसकी आँखों में भरे थे, वे अब टपक पड़े। कमला ने उमेश की ओर से मुँह फेर लिया। जल लिये मेघ उड़ा चला जा रहा है ज्योंही उसी की तरह एक गृहविहीन हवा का झोंका उसे लगा त्योंही बरस गया। बे घर-द्वार के इस दरिद्र बालक के मुँह से एक ममता की बात सुनते ही कमला की डबडबाई हुई आँखें आँसू बहाने लगीं। उसने उमेश से कुछ कहना चाहा, पर मुँह से एक भी शब्द न निकला।

उमेश क्या कहकर कमला को सान्त्वना दे, यह मन ही मन सोचने लगा। आख़िर उसने सोचकर कमला से कहा—माँ, आपने जो वह रुपया दिया था उसमें पाँच आने पैसे फिरे हैं, मेरे पास मौजूद हैं।

कमला को तब तक कुछ धैर्य हो आया। उमेश के इस असम्बद्ध कथन से कमला ने कुछ हँसकर कहा—अच्छा, पैसे अपने पास ही रहने दे। जा, अब सो रह।

चन्द्रमा अस्ताचल को पहुँच गया। कमला इस बार ज्योंही बिछौने पर लेटी त्योंही उसे गाढ़ी नींद आ गई। कुछ देर के लिए चिन्ता ने उसकी जान छोड़ दी। सबेरे की धूप जब उसके द्वार पर उसे जगाने को आ पहुँची तब भी वह निद्रा में निमग्न थी।

अट्ठाईसवाँ परिच्छेद

थकावट में ही कमला को सबेरा हुआ। उस दिन उसकी नज़र में सूर्य की धूप और नदी की धारा थकी-माँदी थी; नदी-तीर के वृक्ष उसे ऐसे लगते थे मानों दूर से आये हुए मुसाफ़िर हों।

उमेश जब कमला को काम-काज में सहायता देने आया तब कमला ने टूटे स्वर में कहा—जाओ उमेश! आज मुझे दिक़ मत करो।

उमेश थोड़े ही में चुप होनेवाला नहीं। उसने कहा—माँ, मैं दिक़ क्यों करूँगा, मैं तो मसाला पीसने आया हूँ।

सवेरे रमेश ने कमला के मुख और नेत्रों का भाव देखकर पूछा—कमला, तुम्हारी तबीयत अच्छी है न?

इस प्रश्न का उत्तर कमला केवल सिर हिलाकर देती हुई रसोई-घर में चली गई। इस प्रश्न को उसने यहाँ तक अनावश्यक और असङ्गत समझा।

रमेश ने देखा, बात दिन पर दिन भारी होती जाती है। अब शीघ्र ही इसका कुछ निर्णय हो जाना चाहिए। नलिनी के साथ एक बार ख़ुलासा बात-चीत हो जाने पर सहज ही कर्तव्य की मीमांसा हो जायगी।

रमेश देर तक सोच-विचार करने के बाद नलिनी को चिट्ठी लिखने बैठा। एक बार लिखता था और फिर उसे

काटता था। इसी समय किसी ने आकर पूछा—"महाशय! आपका नाम?" सुनते ही रमेश ने चौंककर सिर उठाया। देखा, एक अधेड़ भद्र मनुष्य सामने खड़ा है। उसकी डाढ़ी के बाल पक गये हैं, सामने की ओर सिर पर थोड़े से बाल शीघ्र गञ्जे हो जाने की पूर्व सूचना दे रहे हैं। रमेश का ध्यान जो चिट्ठी लिखने में एकान्त भाव से लगा था, वह कुछ देर के लिए उचट गया। वह भौंचक सा होकर उसके मुँह की ओर देखने लगा।

"आप ब्राह्मण हैं? नमस्कार। आपका नाम रमेश बाबू है—यह मैं पहले ही जान चुका हूँ। आप बुरा न मानें, हमारे देश में नाम-गाँव पूछकर परिचय प्राप्त करने की एक परिपाटी है। यह शिष्टता है, पर कोई-कोई इसे अशिष्टता समझ बुरा मानते हैं। यदि आप नाराज़ हो गये हों तो आप भी मुझसे पूछ लें। मैं ज़रा भी बुरा न मानूँगा। मैं अपना नाम, बाप का नाम, और पितामह का नाम भी बताने में कुछ उज्र. न करूँगा।"

रमेश ने हँसकर कहा—मैं इतना अधिक बुरा नहीं मानता। आप सिर्फ़ अपना ही नाम बतला दें, बस मैं इतने में ही सन्तुष्ट हो जाऊँगा।

"मेरा नाम त्रिलोकनाथ चक्रवर्ती है। पश्चिमोत्तर प्रदेश में सभी लोग मुझे जानते हैं। आपने तो इतिहास पढ़ा है? भारतवर्ष में भरत चक्रवर्ती राजा होने के कारण जैसे प्रसिद्ध थे वैसे ही पश्चिमोत्तर देश में मेरा नाम चक्रवर्ती काका सर्वत्र

प्रसिद्ध है। जब आप पश्चिम जा रहे हैं तब मेरा परिचय पावेंगे ही। किन्तु आप कहाँ जाना चाहते हैं"

रमेश—मैं अभी ठीक-ठीक नहीं बता सकता।

त्रिलोक—वाह! यह आपने एक ही कही! आपने यह निश्चय ही नहीं किया कि कहाँ जायँगे? बिना ही निश्चय किये जहाज़ पर सवार हो गये? निश्चय करने के लिए तनिक भी न ठहरे!

रमेश—एक दिन ग्वालन्दो में गाड़ी से उतरकर देखा तो स्टीमर बार-बार चलने की सीटी दे रहा था। तब मैंने अच्छी तरह समझा कि मुझे अपना मत स्थिर करने में देरी होगी, पर जहाज़ खुलने में देरी नहीं है। अतएव जो काम जल्दी का था वह मैंने झटपट कर ही डाला।

त्रिलोक—महाशय! आप धन्य हैं। आप पर मेरी भक्ति बढ़ती जाती है। मुझमें और आपमें बड़ा अन्तर है। हम लोग पहले कहीं जाने का निश्चय कर लेते हैं तब जहाज़ पर पाँव रखते हैं। क्योंकि हम लोग स्वभाव से ही डरपोक हैं। आपने जाने का तो निश्चय किया है, पर कहाँ जायँगे? इसका कुछ निश्चय नहीं। यह क्या साधारण बात है! परिवार आपके साथ ही है?

"हाँ" कहकर इस प्रश्न का उत्तर देने में रमेश का मन कुछ देर के लिए सन्देह में पड़ गया। उसे चुप देख त्रिलोकनाथ चक्रवर्त्ती ने कहा—आप मुझे क्षमा करें। परिवार आपके साथ ही है, यह ख़बर मुझे पहले ही मिल चुकी है। बहूजी इसी

कोठरी में रसोई बना रही हैं। मैं पेट की आग बुझाने के लिए रसोई-घर की खोज करते-करते वहाँ जा पहुँचा। मैंने बहूजी से कहा – आप मुझे देखकर सङ्कोच न करें। मैं पश्चिम में रहता हूँ। यहाँ के सभी भद्र मनुष्य मुझे जानते हैं। बहूजी साक्षात् अन्नपूर्णा का अवतार ही जान पड़ती हैं। फिर मैंने कहा —"आप जब रसोई करने बैठी हैं तब मेरी भी ख़बर लीजिएगा, भूल न जाइएगा। मैं निरुपाय हूँ।" इस पर बहूजी हँसीं। मैं समझ गया कि अन्नपूर्णा मुझ पर प्रसन्न हो गईं। आज मुझे किसी तरह की चिन्ता नहीं। हर दफ़े पंचाङ्ग देखकर शुभ मुहूर्त ही में यात्रा करता हूँ। किन्तु ऐसा भाग्य क्या सदा संघटित होता है? आप काम कर रहे हैं, आपको तकलीफ़ न दूँगा। यदि आप आज्ञा दें तो मैं बहूजी के काम में कुछ सहायता करूँ। जब मैं मौजूद हूँ तब वे अपने हाथ से सब काम क्यों करेंगी? नहीं-नहीं, आप लिखिए—मैं आपके काम में बाधा नहीं डालना चाहता। आप न-आइए—मैं परिचय कर लूँगा।

यह कहकर चक्रवर्ती उठकर रसोई-घर की तरफ़ गये। वहाँ उन्होंने कमला से कहा—वाह! तरकारी बहुत अच्छी तरह छौंकी गई है। दिव्य सुगन्ध आ रही है। रसोई आप बनाती हैं तो बनावें, पर इमली की चटनी मैं ही बनाऊँगा। आप यह सोचती होंगी कि इमली तो हुई नहीं, चटनी किस चीज़ की बनेगी; किन्तु मेरे रहते आप इमली की चिन्ता न करें। मैं अभी सब चीज़ें लाता हूँ।

यह कहकर चक्रवर्ती एक झोला उठा लाये। उसमें काग़ज़ में लपेटी इमली और चटनी का सब मसाला मौजूद था। चक्रवर्ती ने कमला से कहा—मैं बहुत उम्दा चटनी बनाना जानता हूँ। जब आप उसे जीभ पर रक्खेंगी तब जानेंगी। अभी मैं उसकी क्या तारीफ़ करूँ? अच्छा, अब समय अधिक हुआ। आप चौके से निकलकर ज़रा आराम कर लें। हाथ-पैर धो लें। रसोई में जो काम बाक़ी रह गया है उसे मैं पूरा किये देता हूँ। आप कुछ संकोच न करें। मैं रसोई बनाना जानता हूँ। जहाँ रहता हूँ, अपने हाथ से रसोई बनाता हूँ। मेरे घर में वह बराबर बीमार रहा करती है। उसकी अरुचि को दूर करने के लिए इमली की चटनी और मसालेदार तरकारी बनाते-बनाते मैं सिद्धहस्त हो गया हूँ। आप बूढ़े की बात सुनकर हँसती होंगी, पर इसे आप हास्य न समझें। मैंने आपसे सब बातें सच-सच कही हैं।

कमला मुस्कुराती हुई बोली—मैं आपसे चटनी बनाना सीखूँगी।

चक्रवर्ती—"पाक-विद्या कुछ सामान्य विद्या नहीं है। आप झटपट सीख लेना चाहती हैं, यह कैसे होगा? यदि एक ही दिन में आपको ये सब बातें सिखाकर विद्या की मर्यादा बिगाड़ डालूँ तो सरस्वती देवी अप्रसन्न न हो जायँगी। इसके लिए दो-चार दिन इस वृद्ध की ख़ुशामद करनी होगी। मुझे किस तरह ख़ुश कर सकोगी,—इसकी आपको चिन्ता न करनी होगी। मैं स्वयं सब

कमला पास ही अपनी कोठरी के दरवाज़े पर खड़ी हो गई। दोपहरी के ख़ाली समय को वह चक्रवर्ती के साथ बिताना चाहती है। चक्रवर्ती ने कमला के पैरों में जूता देखकर कहा—यह क्या? इसे तो मैं पसन्द नहीं करता!

इस वाक्य का अर्थ कमला की समझ में कुछ न आया। वह आश्चर्ययुक्त होकर वृद्ध का मुँह देखने लगी। वृद्ध ने कहा—यह जो जूता देखता हूँ, रमेश बाबू यह आप ही की कृपा जान पड़ती है। आप चाहे जो समझें, पर मेरी समझ में यह आप अधर्म कर रहे हैं। देखिए, देश की भूमि को इन चरणों के स्पर्श से वञ्चित न कीजिएगा। ऐसा न होने से देश मिट्टी में मिल जायगा। रामचन्द्रजी यदि सीता को डासन का बूट पहनाते तो क्या लक्ष्मण उनके साथ-साथ चौदह वर्ष तक वन में रहते? कभी नहीं। मेरी बातें सुनने से आपको हँसी आती होगी और मेरी बात अच्छी न लगती होगी। बात ही ऐसी है। आप जहाज़ की सीटी सुनकर बिना कुछ सोचे-विचारे उस पर सवार हो जाते हैं, पर यह एक बार भी नहीं सोचते कि जायँगे कहाँ।

रमेश ने कहा—आप ही मेरे गन्तव्य स्थान का ठीक कर दीजिए न! जहाज़ की सीटी की अपेक्षा आपका परामर्श कहीं अच्छा होगा।

चक्रवर्ती—यह देखिए, आपकी विवेचना-शक्ति इतने ही में बढ़ गई। थोड़ी ही देर के परिचय का यह फल है! तो फिर चलिए,

ग़ाज़ीपुर चलिए। (कमला की ओर देखकर) कहो माँजी, ग़ाज़ीपुर चलोगी? वहाँ गुलाब की खेती होती है। इत्र से सारा देश सुगन्धमय रहता है। तुम्हारा यह बूढ़ा भक्त भी वहीं रहता है।

रमेश ने कमला की ओर देखा। कमला ने सिर हिलाकर तुरन्त सम्मति जताई।

इसके अनन्तर उमेश और चक्रवर्ती दोनों लज्जित कमला की कोठरी में जा बैठे। रमेश एक लम्बी साँस लेकर बाहर ही रह गया। मध्याह्न का समय है। जहाज़ बड़ी तेज़ी के साथ धक्-धक् करता चला जा रहा है। दोनों तटों का, शरत् की धूप से रँगा हुआ, दृश्य क्रमशः अग्र पश्चात् होकर एक विचित्र स्वप्न की तरह दृष्टि के नीचे आता और चला जाता है। कहीं खेतों में हरे धान, कहीं नाव लगने का घाट, कहीं बालू का टीला, कहीं बस्ती, कहीं बाज़ार दृष्टिगोचर हो रहे हैं। कहीं पुराने बरगद के पेड़ की छाँह में पार जानेवाले मुसाफ़िर नौका की प्रतीक्षा में बैठे देख पड़े।

इस शरत्काल के मध्याह्न की सुमधुर स्तब्धता में पास की कोठरी के भीतर से जब रह-रहकर कमला की कुतूहल-व्यञ्जक मीठी हँसी रमेश के कान में प्रवेश करने लगी तब उसके हृदय में चोट सी लगने लगी। सभी कुछ सुन्दर है, परन्तु है बहुत दूर! रमेश के आर्त जीवन के साथ कैसे दारुण आघात से छिन्न-भिन्न है।

उनतीसवाँ परिच्छेद

कमला के हृदय में अब भी बालपन बना है। कोई संशय, आशंका या वेदना चिरस्थायी होकर उसके हृदय में ठहरने नहीं पाती।

इधर कई दिनों से रमेश के व्यवहार के सम्बन्ध में कमला को चिन्ता करने की .फ़ुरसत नहीं मिली। धारा में जहाँ रुकावट होती है वहीं कूड़ा-कचरा आकर इकट्ठा हो जाता है—कमला के हृदय-स्रोत में जो रमेश के आचरण से एक जगह अटकाव हो गया था उसी जगह आवर्त-स्वरूप भाँति-भाँति की बातें आक्रमण कर चक्कर काट रही थीं। कमला के हृदय-स्रोत का जो आवर्त था वह वृद्ध चक्रवर्ती को पाकर मिट गया। अब वह बूढ़े चक्रवर्ती से हँसने, बोलने और रसोई बनाकर उसे खिलाने-पिलाने में सब कुछ भूल गई। वह उस वृद्ध के सान्त्वना-वाक्यों से अपना सारा दुखड़ा भूल गई।

आश्विन के सुन्दर दिन जल-पथ के विचित्र दृश्यों को रमणीय बनाकर उसी के बीच में कमला के गृह-कौशल को सुनहरी तसवीर के बीच सरल कविता के एक-एक पृष्ठ की भाँति उलटाने लगे—अतिक्रमण करने लगे।

कमला बड़े उत्साह से घर का काम करने लगी। उमेश अब कभी स्टीमर फ़ेल 'नहीं करता, ठीक वक़्त पर सवार हो

जाता है। पर उसकी टोकरी साग-भाजियों से भरकर आ जाती है। छोटी सी गृहस्थी के काम-काज में उमेश की यह सबेरे की टोकरी-भरण-लीला भारी कुतूहल का विषय हो गई। टोकरी के कारण रोज़ सबेरे एक न एक हास्य की बात निकल पड़ती थी। जिस दिन रमेश उपस्थित रहता था उस दिन इस विनोद में बाधा पड़ जाती थी। वह उमेश पर चोरी का सन्देह किये बिना न रह सकता था। जब वह उमेश पर चोरी का सन्देह करता तब कमला उत्तेजित होकर कहती थी—वाह! मैंने अपने हाथ से उसके लिए उमेश को पैसे गिनकर दिये हैं।

रमेश—इससे उसकी चोरी की मात्रा दुगुनी बढ़ जायगी। वह साग-भाजी तो चुराकर लाता ही है, पैसा भी चुरावेगा।

यह कहकर जब वह उमेश को पुकारकर हिसाब माँगता था तब उमेश कुछ का कुछ कहने लग जाता था। जो हिसाब एक बार बताता था वह दूसरी बार के हिसाब से न मिलता था। अन्त में जमा से खर्च की रक़म अधिक हो जाती थी। किन्तु इस पर वह ज़रा भी न शरमाता था। वह कहता था, अगर मैं हिसाब करना जानता तो मेरी यही दशा रहती! तब तो मैं गुमाश्ते का काम कर सकता।

चक्रवर्ती कहते—रमेश बाबू, भोजन करने के बाद आप इसका विचार करना। कम से कम मैं तो इस लड़के को बिना उत्साह दिये नहीं रह सकता। सुनो उमेश! संग्रह करने की

विद्या साधारण विद्या नहीं है। ऐसे लोग कम मिलेंगे जो संग्रह करना जानते हों। उद्योग सभी करते हैं, परन्तु उनमें कृतकार्य कितने होते हैं? सुनिए रमेश बाबू! मैं गुणी की क़दर करना जानता हूँ। विदेश में इतने सबेरे कितने लड़के साग-भाजियों का संग्रह कर ला सकते हैं? सन्देह बहुत लोग कर सकते हैं, परन्तु संग्रह हज़ार में विरला ही कोई कर सकता है।

रमेश—यह आप अच्छा नहीं करते। उत्साह देकर अन्याय करते हैं।

चक्रवर्ती—लड़का कुछ पढ़ा-लिखा नहीं है। जो कुछ जानता है वह भी यदि उत्साह के अभाव से नष्ट हो जाय तो बड़े खेद का विषय होगा। जाओ उमेश! इन तरकारियों को अच्छी तरह धो लाओ।

उमेश पर रमेश जितना ही सन्देह कर उसे डाँट-डपट दिखाता था उतना ही उस पर कमला का अनुग्रह दिन-दिन बढ़ता जाता था। इधर चक्रवर्ती भी उमेश ही के पक्ष में हो गये। अतएव रमेश से अलग कमला का दल स्वतन्त्र हो गया। रमेश अपनी सूक्ष्म विचार-शक्ति लिये अकेला एक ओर है, और दूसरी ओर कमला, उमेश तथा चक्रवर्ती अपने काम-काज, स्नेह और हँसी-ख़ुशी के बन्धन में बँधे हुए हैं। जब से चक्रवर्ती आये हैं तब से उनका उत्साह देख रमेश पहले से विशेष उत्सुकता के साथ कमला को देखता है तो भी उस दल में पूरे तौर से सम्मिलित नहीं होता। बड़ा जहाज़ किनारे से कुछ

अन्तर पर ही लङ्गर डाल देता है, किनारे से लगकर खड़ा नहीं हो सकता और छोटी किश्तियाँ सहज ही किनारे आ लगती हैं – उन्हें दूर खड़े खड़े अपनी इच्छा पूर्ण करने के लिए तरसना नहीं पड़ता। रमेश की यही दशा थी।

पूर्णमासी के दो-एक दिन पूर्व सबेरे उठकर सबों ने देखा, सारा आकाशमण्डल काले-काले बादलों से घिर गया है। हवा कुछ तेज़ी के साथ चल रही है। कभी कुछ पानी बरस जाता है, और कभी कुछ धूप भी निकल आती है। आज गङ्गा में अधिक नावें नहीं हैं, जो दो-एक हैं, वे बड़े वेग से किनारे की ओर जा रही हैं। पानी भरने के लिए जो स्त्रियाँ आज घाट पर आती हैं वे देर तक नहीं ठहरतीं, पानी भरकर झट चल देती हैं। जल पर मेघों की भयङ्कर छाया समेत भयङ्कर प्रकाश देख पड़ता है और क्षण-क्षण भर में एक तीर से लेकर दूसरे तीर तक नदी का जल काँपने लगता है।

स्टीमर अपनी राह पकड़े चला जा रहा है। अनेक प्रकार की असुविधा होने पर भी कमला की रसोई का काम किसी तरह होने लगा। चक्रवर्ती ने आकाश की ओर देखकर कमला से कहा—आज जो कुछ बनाना हो सो एक ही दफ़े बना लो, जिसमें फिर दूसरे वक्त रसोई न बनानी पड़े। तुम रसोई चढ़ा दो। मैं आटा गूँधता हूँ।

खाते-पीते आज बहुत देर हो गई। ज्यों-ज्यों हवा तेज़ बहने लगी त्यों-त्यों नदी की तरङ्ग ऊपर को उछलने लगी।

मालूम न हुआ कि सूर्यास्त हो गया अथवा अभी दिन है। जहाज़ ने आगे जाने का इरादा छोड़ जल्दी ही लङ्गर डाल दिया।

साँझ हुई। दिन की अपेक्षा रात को बादलों ने और भयङ्कर रूप धारण किया। बिजली चमकने लगी। हवा ख़ूब ज़ोर से बहने लगी और मूसलधार पानी बरसने लगा।

कमला एक बार पानी में डूब चुकी है। झड़ी देखकर उसका हृदय काँपने लगा। रमेश ने आश्वासन देकर उससे कहा—स्टीमर पर कोई डर नहीं, तुम निश्चिन्त होकर सो रहो। मैं पासवाली कोठरी में जाग रहा हूँ।

द्वार के पास आकर चक्रवर्ती ने कहा—माँ लक्ष्मी! कुछ डर नहीं। झड़ी के बाप का सामर्थ्य क्या जो तुम्हें कुछ क्लेश दे सके।

झड़ी के बाप का सामर्थ्य कहाँ तक है, यह कहना कठिन है, परन्तु झड़ी का कितना बड़ा सामर्थ्य है, यह कमला भली भाँति जानती है। वह झट द्वार के नज़दीक आकर बोली—चक्रवर्ती काका! तुम कोठरी के भीतर आकर बैठो।

चक्रवर्ती ने संकुचित होकर कहा—यह तुम्हारे सोने का समय है। अभी—

कोठरी के भीतर जाकर देखा रमेश बाबू वहाँ नहीं हैं। उन्होंने अचरज के साथ कहा—ऐसी झड़ी में रमेश बाबू कहाँ गये? शाक-भाजी चुरा लाने की लत तो उन्हें है नहीं!

"कौन, चक्रवर्ती जी? मैं यहीं पासवाली कोठरी में हूँ।"

पासवाली कोठरी में झाँककर चक्रवर्ती ने देखा—बिछौने पर लेटा हुआ रमेश सिरहाने चिराग़ रक्खे कोई किताब पढ़ रहा है।

चक्रवर्ती ने कहा—बहूजी इस कोठरी में अकेली डरती हैं। आपकी पुस्तक तो झड़ी से डरती नहीं, उसे अभी रख देने में कुछ अन्याय न होगा। इस कोठरी में आइए।

एक दुर्निवार आवेश के वश होकर कमला अपने को भूल गई, झट चक्रवर्ती का हाथ ज़ोर से दाबकर रुँधे स्वर में बोली—"नहीं, नहीं।" झड़ी के कारण कमला की यह बात रमेश के कान तक न पहुँची। किन्तु चक्रवर्ती विस्मित होकर लौट आये।

रमेश पुस्तक रखकर उस कोठरी में गया और पूछा—चक्रवर्तीजी, क्या है? कहिए, क्या मामला है? जान पड़ता है कमला ने आपको—

रमेश के मुँह की ओर देखे बिना ही कमला बोल उठी—नहीं, नहीं। मैंने इन्हें केवल कहानी कहने के लिए बुलाया था।

किस बात के उत्तर में कमला ने "नहीं, नहीं" कहा, यह पूछने पर वह कुछ उत्तर न दे सकती। इस "नहीं" का अर्थ यही था कि अगर आप यह समझते हों कि मेरा भय दूर करने की आवश्यकता है तो—नहीं, कोई आवश्यकता नहीं! अगर यह समझते हों कि मेरे पास किसी के रहने की आवश्यकता है सो भी नहीं!

कुछ ही देर में कमला ने चक्रवर्ती से कहा—रात बहुत बीती। अब आप सोने के लिए जाइए। एक बार उमेश को देखते जाइएगा। शायद वह डरता हो!

दरवाज़े के पास ही से यह आवाज़ आई—माँजी, मैं किसी से नहीं डरता।

उमेश घुटनों पर सिर रक्खे दरवाज़े के पास ही बैठा था। यह देख कमला का हृदय द्रवित हो गया। वह झट बाहर आकर बोली—क्यों रे उमेश ! तू बाहर बैठा पानी में क्यों भीग रहा है ? अभागा कहीं का। जा, चक्रवर्तीजी के साथ जाकर सो रह।

कमला के मुँह से अपने लिए 'अभागा' सम्बोधन सुनकर उमेश बड़ी .खुशी से चक्रवर्ती के साथ सोने के लिए चला गया।

रमेश ने पूछा—जितनी देर तुम्हें नींद न आवे उतनी देर तक कहो तो मैं यहाँ बैठकर तुमको कोई क़िस्सा सुनाऊँ।

कमला—नहीं, मैं देर से ऊँघ रही हूँ। अब शीघ्र ही सो जाऊँगी।

रमेश ने कमला के मन का भाव न समझा हो—यह नहीं, किन्तु वह उस पर फिर कुछ न बोला। कमला के अभिमान-भरे मुँह की ओर देखकर वह धीरे-धीरे अपनी कोठरी में चला गया।

नींद आने के लिए कमला बिछौने पर स्थिर होकर पड़ी रहती, ऐसी शान्ति उसके मन में कहाँ थी। तो भी वह ज़बर्दस्ती लेट रही। झड़ी के प्रबल वेग के साथ-साथ नदी की तरङ्ग भी क्रम से बढ़ने लगी। खलासियों का गोलमाल सुन पड़ने लगा। बीच-बीच में एञ्जिन-रूम से नायब कप्तान की आज्ञा-सूचक घण्टी बजने लगी। जहाज़ को आँधी-पानी से रक्षित रखने के लिए लङ्गर डाल देने पर भी प्रबल वायु के आघात से एञ्जिन धीरे-धीरे चलने लगा।

चारपाई छोड़कर कमला कोठरी के बाहर आ खड़ी हुई। कुछ देर से पानी बरसना बन्द हो गया, परन्तु हवा का वेग वैसा ही प्रबल है। बादल से ढके रहने के कारण शुक्ल पक्ष की चतुर्दशी का आकाश धुँधला सा दिखाई दे रहा है। किनारा साफ़-साफ़ दिखाई नहीं देता।

इस उन्मादिनी रात और मेघाच्छन्न आकाश की ओर देखकर कमला का हृदय काँपने लगा। भय से काँपा या आनन्द से, यह ठीक-ठीक नहीं कहा जा सकता। इस प्रलय के भीतर जो एक प्रबल शक्ति है, एक बन्धनहीन स्वाधीनता है, उसने मानों कमला के हृदय में सोई हुई एक संगिनी को जगा दिया। इस विश्वव्यापी विद्रोह के तीव्र वेग ने कमला के चित्त को विचलित कर दिया। यह विद्रोह किसके विरुद्ध है, इसका उत्तर क्या झंझावायु की सनसनाहट में पाया जा सकता है? नहीं, वह कमला के हृदय में ही छिपा है। किसी अनिर्दिष्ट, अमूर्त मिथ्या के, स्वप्न के, अन्धकार के जाल को छिन्न-भिन्न करके बाहर निकल आने के लिए आकाश-पाताल के बीच यह रणरङ्ग है और यह रोष-गर्जित रोदन है। मार्ग-विहीन प्रान्त से हवा केवल "नहीं, नहीं" चिल्लाती हुई आधी रात को दौड़ी चली आ रही है—केवल एक प्रचण्ड अस्वीकृति!—किस बात की अस्वीकृति?—यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता—किन्तु नहीं, कुछ भी नहीं, नहीं, नहीं, नहीं।

तीसवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन सबेरे झड़ी का वेग कुछ कम हुआ सही, पर एकदम शान्त न हुआ। लङ्गर उठाना चाहिए या नहीं, नायब कप्तान इसका निश्चय उस समय भी नहीं कर सका था—वह घबराहट के साथ आकाश की ओर देख रहा था।

चक्रवर्ती सबेरे ही रमेश की खोज-ख़बर लेने कमला की पासवाली कोठरी में गये। देखा, तब भी रमेश ने चारपाई नहीं छोड़ी है। चक्रवर्ती को देखकर वह झट उठ बैठा। इस कोठरी में रमेश की अलग शय्या देख चक्रवर्ती ने गत रात्रि की घटना के साथ-साथ सब बातों का अनुमान मन ही मन कर लिया। पूछा—कल रात को शायद यहीं आप सोये थे?

रमेश ने इस प्रश्न का कुछ उत्तर न देकर कहा—कल का दिन कैसा ख़राब था? हाँ, आपको रात में नींद कैसी आई?

चक्रवर्ती—रमेश बाबू, आप मुझे जैसा जाहिल सा देखते हैं वैसी ही मेरी बातचीत भी होती है, तो भी इतनी बड़ी उम्र में मुझे कई बार कठिन से कठिन बातों से सामना करना पड़ा और उनसे बचने की मीमांसा भी करनी पड़ी है। परन्तु आप सबसे दुरूह जँचते हैं! आप—

यह सुनकर रमेश का मुँह कुछ देर के लिए लाल हो गया, परन्तु तुरन्त ही उसनें अपने को सँभालकर हँसकर कहा—

दुरूह होने ही से कोई हर वक्त अपराधी न समझा जाय। तिलगू भाषा की शिशुपाठ्य पुस्तक भी कठिन (दुरूह) होती है, किन्तु तैलङ्ग बालकों के लिए वह बड़ी ही सहज है। जो विषय समझ में न आवे उसके लिए सहसा दोष देना ठीक नहीं, और जो अक्षर पहिचान के नहीं उन पर अनिमेष दृष्टि रखने से भी क्या लाभ हो सकता है ?

वृद्ध ने कहा—क्षमा कीजिए। मेरे साथ जिन बातों का सम्पर्क नहीं है उनके जानने की चेष्टा करना मेरी धृष्टता मात्र है। परन्तु संसार में भाग्य से ऐसा भी कोई मनुष्य मिल जाता है जिसके साथ भेंट होते ही सम्बन्ध स्थिर हो जाता है। आप जहाज़ के नायब कप्तान से पूछ देखें, उसे बहूजी के साथ आत्मीय सम्बन्ध अवश्य ही स्वीकार करना पड़ेगा; न करे तो मैं उसे मुसलमान न समझूँगा। तिलगू भाषा की बात जाने दीजिए। केवल क्रोध करने से कुछ न होगा। मेरी बात को आप अच्छी तरह सोच देखें।

रमेश—मैं सोचता हूँ इसी से तो क्रोध नहीं कर सकता। परन्तु मैं क्रोध करूँ या न करूँ, आप दुःख पावें या न पावें, तिलगू भाषा तिलगू ही रहेगी। प्रकृति का ऐसा ही कठोर नियम है। यह कहकर उसने एक ठण्डी साँस ली।

अब रमेश को इस बात की चिन्ता हुई कि ग़ाज़ीपुर जाना चाहिए अथवा नहीं। पहले उसने सोचा था कि नई जगह में रहने के लिए स्थान आदि का निश्चय करने में चक्रवर्ती का परि-

चय कुछ काम देगा। अब वह ख़याल बदल गया। उसने सोचा, इस परिचय से असुविधा भी हो सकती है। आलोचना और अनुसन्धान होने से कदाचित् कमला के अंश में कुछ ख़राबी हो। अतएव ऐसी जगह जाना भला है जहाँ कोई जान-पहचान-वाला न हो और जहाँ कोई कुछ पूछताछ न करे।

ग़ाज़ीपुर पहुँचने के एक दिन पूर्व रमेश ने चक्रवर्ती से कहा—मेरी प्रैक्टिस के लिए ग़ाज़ीपुर ठीक जगह नहीं मालूम होती, इसलिए मैंने काशी जाने ही का विचार किया है।

रमेश की बात में दृढ़ता का सुर देख वृद्ध ने हँसकर कहा—बार-बार इरादा बदलने को विचार स्थिर करना नहीं, उसे अस्थिर करना ही कहना चाहिए। ख़ैर जो हो, अब काशी जाना ही आपका आख़िरी विचार हुआ ?

रमेश—जी हाँ।

वृद्ध कोई उत्तर न देकर चले गये और अपनी चीज़-वस्तु बाँधने लगे।

कमला ने आकर कहा—चक्रवर्तीजी, आज मेरे साथ झगड़ा किस लिए ?

वृद्ध—झगड़ा तो रोज़ ही होता है, पर मैं एक दिन भी झगड़े में न जीत सका।

कमला—आज सबेरे से आप भागे-भागे फिरते हैं ?

चक्रवर्ती—तुम सब तो मुझसे भी बढ़कर भागने की कोशिश में हो, और मुझी पर भागने का दोष लगाती हो।

कमला इस बात का अर्थ न समझ उनके मुँह की ओर देखने लगी।

वृद्ध ने कहा—क्या रमेश ने अब तक तुमसे कुछ नहीं कहा? उन्होंने काशी जाने का निश्चय किया है।

यह सुनकर कमला ने हाँ या ना कुछ न कहा। कुछ देर बाद उसने कहा—आपसे यह काम न हो सकेगा। दीजिए, मैं आपके सन्दूक़ में सब चीज़ें ठीक से रख दूँ।

काशी जाने के नाम से कमला को उदासीन देख वृद्ध के हृदय में एक गहरी चोट लगी। उन्होंने मन ही मन सोचा, अच्छा ही हुआ जो इस झमेले से मैं अलग हो गया। मेरे जैसे बूढ़े को इस बखेड़े में फँसने की ज़रूरत क्या? मैं क्यों इसमें अपने आप फँसने लगा?

रमेश इसी समय कमला से काशी जाने की बात कहने आया। उसने कहा—मैं देर से तुम्हें खोज रहा था।

चक्रवर्ती के कपड़ों को तहाकर कमला सन्दूक़ में रखने लगी। रमेश ने कहा—कमला! हम इस बार ग़ाज़ीपुर न चल सकेंगे। मैंने काशी में प्रैक्टिस करने की बात ठीक की है। तुम क्या कहती हो?

कमला ने चक्रवर्ती के सन्दूक़ की ओर से नज़र उठाये बिना ही कहा—मैं तो ग़ाज़ीपुर ही जाऊँगी! मैंने अपना सब सामान ठीक कर लिया है।

कमला के इस निर्विवाद उत्तर से चकित होकर रमेश ने कहा—तो तुम अकेली ही जाओगी ?

कमला ने चक्रवर्ती के चेहरे पर ममता-भरी दृष्टि डालकर कहा—क्यों, वहाँ मेरे चक्रवर्तीजी भी तो रहेंगे।

कमला की इस बात से चक्रवर्ती पसोपेश में पड़ गये। उन्होंने कहा—अगर तुम मेरा इतना पक्ष लोगी तो रमेश बाबू मुझे फूटी आँखों भी देख न सकेंगे।

इसके उत्तर में कमला ने सिर्फ़ इतना ही कहा—मैं तो ग़ाज़ीपुर चलूँगी।

इस सम्बन्ध में किसी से कुछ सम्मति लेने की ज़रूरत भी कमला के कण्ठ-स्वर से ज़ाहिर न हुई।

रमेश ने कहा—चक्रवर्तीजी, तो फिर ग़ाज़ीपुर जाने ही की बात पक्की रही।

आज आकाश में बादल का नाम नहीं है। शरद् ऋतु की रात की चाँदनी चारों ओर चित्त चुरा रही है। रमेश डेक की कुर्सी पर बैठकर सोचने लगा—इस तरह कब तक चलेगा ! विद्रोही कमला को लेकर दिन-दिन भारी उपद्रव मचने की सम्भावना है। पास रहकर भी दूर बने रहने का काम बड़ा कठिन है। इसलिए अब उसके साथ दूसरे ही तौर से पेश आऊँगा। कमला ही मेरी स्त्री है, और मैंने उसे स्त्री समझकर ही ग्रहण किया था। उसके साथ विधि-पूर्वक ब्याह नहीं हुआ, मन्त्र नहीं पढ़े गये, इसका सङ्कोच करना

अब उचित नहीं। धर्मराज ने उस दिन कमला को वधूरूप में मेरे पास लाकर, उस निर्जन बालुकामय द्वीप में, अपने हाथ से ग्रन्थिबन्धन कर दिया है। उनके सदृश धार्मिक पुरोहित संसार में और कहाँ मिलेगा?

नलिनी और रमेश के बीच एक बड़े दङ्गल का मैदान आ पड़ा है। बाधा, अपमान और अविश्वास आदि को काट-कर यदि रमेश जीत सकेगा तो वह सिर उठाकर नलिनी के पास जाकर खड़ा हो सकेगा। उस दङ्गल की बात याद आने से उसे डर लगता है। जीतने की उसे कोई आशा नहीं होती। वह अपने पक्ष को कैसे प्रमाणित कर सकेगा? प्रमाण देगा तो सब बातें जन-साधारण के निकट ऐसी गर्हित और कमला के हक़ में ऐसी भयङ्कर आघात पहुँचानेवाली हो उठेंगी कि उस सङ्कल्प को मन में स्थान तक देना कठिन है।

इसलिए अब दुर्बल की भाँति तीन-पाँच न करके कमला को स्त्री बनाकर रखने ही में सब प्रकार कुशल है। नलिनी का जब मुझ पर पहले का सा भाव नहीं है, बल्कि वह मुझसे घृणा करती है, तब इस भाव से ही वह प्रसन्नतापूर्वक अपने मन को योग्य वर के हाथ सौंप सकती है। यह सोचकर रमेश ने दीर्घ निःश्वास के साथ उधर की आशा छोड़ दी।

इकतीसवाँ परिच्छेद

रमेश ने पूछा—क्यों रे! तू कहाँ चला?

उमेश—माँजी के साथ जाऊँगा।

रमेश—मैंने जो तेरे लिए काशी तक का टिकट ले लिया है। यह तो ग़ाज़ीपुर का घाट है। हम तो काशी जायँगे ही नहीं।

उमेश—तो मैं भी न जाऊँगा।

रमेश को यह आशङ्का न थी कि उमेश हमारा साथ न छोड़ेगा किन्तु उस लड़के के चित्त की दृढ़ता देखकर वह अकचका गया। उसने कमला से पूछा—तो उमेश को भी साथ ले चलोगी?

कमला—न ले जाऊँगी तो वह जायगा कहाँ?

रमेश—क्यों? काशी में उसके आत्मीय हैं न?

कमला—नहीं, वह हमारे ही साथ रहेगा,—कह चुका है। उमेश! तू बराबर चक्रवर्ती काका के साथ-साथ चलना, नहीं तो लोगों की भीड़ में कहीं खो जायगा। परदेश है।

कहाँ जाना होगा, किसको साथ ले जाना होगा, इन बातों के विचार का भार भी कमला ने अपने ही ऊपर ले लिया। पहले वह रमेश से पूछकर हर एक काम करती थी, उसकी आज्ञा को नम्रतापूर्वक मानती थी। किन्तु इधर कई दिनों से उसने वह बन्धन हटा दिया है।

इसलिए उमेश भी अपनी छोटी सी गठरी बग़ल में दबा-कर उसके साथ ही चला। इस विषय में और कोई विशेष आलोचना न हुई।

शहर और साहबगञ्ज के बीच में चक्रवर्ती महाशय का छोटा सा बँगला है। उसके पीछे आम का बाग़ है। सामने पक्का कुवाँ है। छोटे से अहाते के घेरे में शाक-सब्ज़ी के त.ख्ते हैं।

पहले दिन कमला और रमेश इसी बँगले में जाकर टिके।

चक्रवर्ती सबसे यही कहा करते थे कि हमारी स्त्री हरिभाविनी बराबर बीमार रहा करती है, किन्तु उसका चेहरा देखने से बीमारी का कोई बाह्य लक्षण दिखाई न देता था। उसकी उम्र कम न थी, परन्तु चेहरे पर शिकन तक न थी। सामने के कुछ-कुछ बाल पक गये थे। पर काले बालों का अंश अधिक था। उसको देखने से यही जान पड़ता था कि बुढ़ापे ने उस पर डिग्री तो हासिल कर ली है, पर अब तक दख़ल नहीं जमा सका है।

सच तो यह है कि ये दोनों जब युवा थे तब हरिभाविनी को मैलेरिया ज्वर ने बुरी तरह पकड़ लिया था। वायु-परि-वर्तन के सिवा और कोई उपाय न देख चक्रवर्तीजी ग़ाज़ीपुर-स्कूल में अध्यापकीय वृत्ति का अवलम्बन कर यहीं रहने लगे। स्त्री के सर्वथा नीरोग हो जाने पर भी उसकी तन्दुरुस्ती पर उन्हें कुछ विश्वास न होता था।

रमेश आदि आगत व्यक्तियों को बाहर के कमरे में बिठाकर चक्रवर्ती ने अन्दर जाकर गृहिणी को पुकारा।

उनकी गृहिणी उस समय धूप में अचार और मुरब्बे आदि के बर्तन रखकर धूप दिखा रही थी, और मजदूरिन से गेहूँ पिसवा रही थी।

चक्रवर्ती ने आते ही कहा—यह क्या! जाड़ा आ गया, तुम एक-आध गरम चादर क्यों नहीं ओढ़ लेतीं?

हरिभाविनी—आपकी सभी बातें अनोखी होती हैं। जाड़ा है कहाँ—धूप से तो पीठ जली जा रही है!

चक्रवर्ती—यह भी तो अच्छा नहीं, छाया कुछ इतनी महँगी नहीं है।

हरिभाविनी—अच्छा इसे रहने दो। आपने आने में इतनी देर क्यों की?

चक्रवर्ती—यह फिर बतलाऊँगा, अभी घर पर जो अतिथि आये हैं उनकी सेवा की तैयारी करनी होगी।

यह कहकर चक्रवर्ती ने अभ्यागतों का परिचय दिया। चक्रवर्ती के घर विदेशी अतिथियों का समागम अक्सर हुआ करता था, किन्तु सस्त्रीक अतिथि के लिए हरिभाविनी प्रस्तुत न थी। उसने कहा—आपके घर में जगह कहाँ है जो उन्हें रक्खेंगे?

चक्रवर्ती—पहले उनसे जान-पहचान तो कर लो, जगह की बात फिर होगी। मेरी अन्नपूर्णा कहाँ है?

हरिभाविनी—वह नाती को नहला रही है।

चक्रवर्ती तुरन्त कमला को भीतर बुला लाये। कमला ने हरिभाविनी को प्रणाम किया। हरिभाविनी ने असीस देकर कहा—इनका चेहरा मेरी शशिकला से बहुत कुछ मिलता-जुलता है।

शशिकला चक्रवर्ती की बड़ी लड़की है। वह अपनी ससुराल, कानपुर, में रहती है। चक्रवर्ती मन ही मन हँसे। वे जानते थे कि कमला के साथ शशिकला का कुछ भी सादृश्य न था। किन्तु हरिभाविनी रूप-गुण में अपनी लड़की को उपमान समझ दूसरे की लड़की को उपमेय समझती थी। सुन्दरता में वह पराई लड़की की जीत स्वीकार न कर सकती थी। अन्नपूर्णा घर ही में थी। यदि उसके साथ प्रत्यक्ष तुलना की जाय तो कदाचित् उसकी हार हो, इसलिए हरिभाविनी ने उसको उपमास्थल में रक्खा जो उसके घर पर मौजूद न थी और इस तरह अपने घर में ही विजय-पताका फहराई।

हरिभाविनी—ये आये हैं, यह बड़े आनन्द की बात है, किन्तु अपना नया मकान तो अभी तक दुरुस्त नहीं हुआ; इस घर में हम किसी तरह दिन काट रही हैं—यहाँ इनको बड़ा कष्ट होगा।

बाज़ार में चक्रवर्ती के एक छोटे से घर की मरम्मत हो ज़रूर रही है, पर वह मामूली दूकान है। वह रहने योग्य जगह नहीं। वहाँ किसी तरह की कोई सुविधा भी नहीं और न वहाँ रहने का इरादा ही है।

चक्रवर्ती ने इस मिथ्याभाषण का कोई प्रतिवाद न करके मुस्कुराकर कहा—यदि बहू इसे कष्ट समझतीं तो क्या मैं उन्हें इस घर में लाता। (अपनी स्त्री की ओर देखकर) तुम देर तक धूप में खड़ी न रहो। शरद् ऋतु की धूप ख़राब होती है।

यह कहकर चक्रवर्ती रमेश के पास बाहर चले गये।

इधर हरिभाविनी कमला से विस्तारपूर्वक परिचय पूछने लगी। "तुम्हारे पति वकील हैं? वे कितने दिन से वकालत कर रहे हैं? क्या आमदनी हो जाती है? जान पड़ता है, उन्होंने अभी तक कहीं वकालत नहीं की है? तो फिर ख़र्च कैसे चलता है? तुम्हारे ससुर धनी हैं? उनके पास सम्पत्ति है? नहीं जानतीं? तुम कैसी भोली-भाली हो जो ससुराल की कुछ ख़बर नहीं रखतीं? घर के ख़र्च के लिए स्वामी तुमको हर महीने क्या देते हैं? जब सास नहीं है तब तो गृहस्थी का भार तुम्हीं सँभालती होगी। तुम तो अब निरी बालिका नहीं। मेरे बड़े जमाई जो कुछ कमाते हैं, सब मेरी शशी को देते हैं।" ऐसे अनेक प्रश्नों और मन्तव्यों के द्वारा हरिभाविनी ने थोड़ी ही देर में कमला को छका दिया। कमला रमेश के विषय में बहुत कम बातें जानती थी। उन दोनों के दाम्पत्य सम्बन्ध का विचार करने से यह अल्प ज्ञान कितना असङ्गत और लज्जा का विषय है, यह हरिभाविनी के प्रश्नों से मन में स्पष्ट झलक गया। उसने सोचकर देखा—"आज तक मुझे रमेश के साथ किसी बात की भली भाँति आलोचना करने का

अवसर नहीं मिला। मैं रमेश की स्त्री हूँ फिर भी अपने पति के विषय में कुछ नहीं जानती।" आज यह उसे ख़ुद अजीब मालूम होने लगा और अपनी अनभिज्ञता पर लज्जा भी आने लगी।

हरिभाविनी फिर कहने लगी—बहूजी! देखूँ तुम्हारे हाथ के कड़े। यह सोना तो अच्छा नहीं जान पड़ता। क्या मायके से तुम कुछ गहना न लाई थीं! क्या तुम्हारे बाप जीवित नहीं हैं? इसी से तुम्हारे बदन पर इतने थोड़े ज़ेवर हैं। पति तुमको कुछ ज़ेवर नहीं बनवा देते? मेरे बड़े जमाई तो मेरी शशी को दूसरे-तीसरे महीने एक न एक नया ज़ेवर बनवा देते हैं।

उन दोनों में इस तरह सवाल-जवाब हो रहे थे कि उसी समय अन्नपूर्णा अपनी दो वर्ष की बेटी का हाथ पकड़े वहाँ आई। अन्नपूर्णा साँवली थी। उसका मुखमण्डल छोटा सा था। आँखें दोनों बड़ी-बड़ी, पर गोल थीं। ललाट चौड़ा और बाल बहुत लम्बे थे। उसका चेहरा देखने ही से मालूम होता था कि वह गम्भीर और शान्त प्रकृति की स्त्री है।

अन्नपूर्णा की छोटी बालिका कमला के सामने खड़ी हो कुछ देर तक टकटकी बाँधकर उसके मुँह की ओर देखकर बोल उठी—"मौसी।" शशिकला समझकर उसने उसे मौसी कहा हो, यह बात नहीं है। बड़ी उम्र की किसी स्त्री को—जो उसे प्रिय जान पड़ती है—वह तुरन्त मौसी कहने लगती है। कमला ने झट उसे गोद में बिठा लिया।

हरिभाविनी ने अन्नपूर्णा को कमला का परिचय देकर कहा—इनके पति वकील हैं। वे रोज़गार करने के लिए परदेश आये हैं। रास्ते में तुम्हारे पिता से उनकी भेंट हुई है। वे ही इनको यहाँ ले आये हैं।

अन्नपूर्णा ने कमला के मुँह की ओर देखा और कमला ने भी उसकी ओर देखा। इसी परस्परावलोकन ने दोनों को स्नेहसूत्र में बाँध दिया। हरिभाविनी आतिथ्य की सामग्री संग्रह करने को गई। अन्नपूर्णा ने कमला का हाथ पकड़कर कहा—बहन, चलो मेरे कमरे में चलो।

थोड़ी ही देर के बाद उन दोनों में बड़ी घनिष्ठता के साथ बातें होने लगीं, जैसे उन दोनों की पुरानी मित्रता हो। अन्नपूर्णा और कमला की उम्र में अन्तर था; पर देखने से सहसा नहीं जान पड़ता था। अन्नपूर्णा दुबली-पतली और नाटी सी थी। कमला ठीक इसके विपरीत थी। आकार और भावभङ्गी में वह अपनी उम्र की पूर्णता तक पहुँच चुकी थी। विवाह होने के बाद उस पर सास-ससुर का कोई दबाव न रहने के कारण हो या किसी और ही कारण से हो, वह देखते ही देखते बहुत बढ़ गई थी। उसके चेहरे पर एक प्रकार की स्वाधीनता का चिह्न झलक रहा था। उसके सामने जो कुछ आता है उसके सम्बन्ध में वह, कम से कम मन ही मन, प्रश्न किये बिना नहीं रहती। "चुप रहो", "जो कहते हैं वही करो", "बहू को ज़बान न लड़ानी चाहिए", इत्यादि बातें उसने आज

तक कभी सुनीं नहीं। इसी से वह सिर सीधा करके सहज हो गई है—उसकी सरलता में सबलता है।

अन्नपूर्णा की लड़की, उमा, के द्वारा दोनों के ध्यान को अपनी ओर खींचने की चेष्टा करते रहने पर भी दोनों नई सखियों में गप-शप का तार बँध गया। इस कथोपकथन से कमला अपनी दीनता सहज ही समझ गई। अन्नपूर्णा के पास कहने के लिए बहुत कुछ है, पर कमला के पास कुछ भी नहीं है। कमला के हृदयपट पर जो उसके दाम्पत्य-जीवन का चित्र है वह पेंसिल का खींचा हुआ एक चिह्न मात्र है। उस पर अभी कोई रङ्ग नहीं चढ़ा है—सब ख़ाली पड़ा है। कमला को इतने दिन तक इस पर ध्यान देने का अवकाश नहीं मिला और न उसे इसका कारण जानने का अवसर ही मिला था। यद्यपि वह हृदय में अभाव का अनुभव कई बार कर चुकी है, बीच-बीच में विद्रोह-भाव भी उपस्थित हो चुका है तो भी अभी तक वह असली चेहरा उसने देखा नहीं था। सख्यभाव की भूमिका ही में जब अन्नपूर्णा ने उससे अपने स्वामी का वृत्तान्त कहना आरम्भ किया, जिस सुर में अन्नपूर्णा की हृत्तन्त्री के सभी तार बँधे हुए हैं वे उँगली का स्पर्श होते ही जब एक साथ बजने लगे तब कमला ने देखा कि मेरे हृदय में ऐसे सुर की कोई झङ्कार नहीं है। वह पति की बात अन्नपूर्णा से क्या कहती? कहने की बात ही क्या थी? सुख का पूरा बोझ लादे अन्नपूर्णा का इतिहास-रूपी जहाज़

जहाँ उमङ्ग की धारा में बड़े वेग से बहा जा रहा था वहाँ कमला की ख़ाली नाव नैराश्य के टीले से अटककर अचल हो गई थी।

अन्नपूर्णा का पति विपिनविहारी ग़ाज़ीपुर में अफ़ीम-गोदाम में काम करता है। चक्रवर्ती के दो बेटियाँ हैं। बड़ी बेटी अपनी ससुराल में है। छोटी बेटी को अपने पास से अलग करने में असमर्थ होकर चक्रवर्ती एक दरिद्र वर ढूँढ़ लाये और उसी के साथ अन्नपूर्णा को ब्याह दिया। फिर हाकिम-हुक्काम के यहाँ कोशिश-पैरवी करके उसे इसी शहर में एक नौकरी भी दिला दी। विपिनविहारी इन्हीं के यहाँ रहता है।

बात-चीत करते-करते अन्नपूर्णा एकाएक उठ खड़ी हुई और बोली—"बहन, तुम ज़रा बैठो, मैं अभी आती हूँ।" फिर तुरन्त ही हँसकर अपने जाने का कारण कहने लगी—वे स्नान करके चौके में आये हैं, भोजन करके आफ़िस जायँगे।

कमला ने सरल विस्मय के साथ पूछा—वे चौके में आ गये, यह तुमको कैसे मालूम हुआ?

अन्नपूर्णा—तुम हँसो मत। सभी सुहागिन स्त्रियाँ जैसे जानती हैं वैसे ही मैंने भी जान लिया। क्या तुम अपने पति के पैरों की आहट नहीं पहचानतीं।

यह कहकर अन्नपूर्णा ने हँसकर कमला की ठुड्डी को ज़रा हिला दिया। फिर वह आँचल में बँधे कुञ्जियों के गुच्छे को झमकाकर, पीठ पर फेंक, लड़की को गोद में लेकर चली

गई। पैरों की आहट की भाषा इतनी सरल है, यह कमला अब भी अच्छी तरह न समझ सकी। वह चुपचाप बैठकर खिड़की के बाहर दृष्टि डाल इस बात को सोचने लगी। उस समय खिड़की के बाहर अमरूद का पेड़ बेतरह फूल रहा था। उस पर मधुमक्खियों का झुण्ड टूटकर केशर लूट रहा था।

— —

बत्तीसवाँ परिच्छेद

गङ्गा के किनारे एक अच्छी जगह तजवीज़ कर किराये पर मकान लेने का विचार हो रहा है। ग़ाज़ीपुर की अदालत में बाज़ाब्ता वकालत करने के लिए और ज़रूरी सामान लाने के लिए रमेश एक बार कलकत्ते जाने का विचार स्थिर कर चुका है। परन्तु कलकत्ते को जाने का उसे साहस नहीं होता। कलकत्ते की एक ख़ास गली के चित्र का दृश्य मन में आते ही अब भी रमेश का हृदय काँपने लगता है। अब भी वह मोह-जाल में पड़ा है। इधर कमला के साथ सम्पूर्ण रूप से दाम्पत्य सम्बन्ध स्वीकार करने में विलम्ब करना भी ठीक नहीं। इन्हीं बातों को सोच-विचारकर रमेश कलकत्ते जाने में आगा-पीछा करने लगा।

कमला चक्रवर्ती के घर के भीतर ही रहती थी। भीतर जगह कम थी, इसलिए रमेश को बाहर के कमरे में रहना पड़ता था। अतएव कमला के साथ भेंट करने का सुयोग न मिलता था।

इस विषम विच्छेद-काण्ड के लिए अन्नपूर्णा केवल कमला से दुःख प्रकट करने लगी। कमला ने कहा—क्यों बहन, तुम इतना सोच क्यों करती हो? ऐसा क्या सङ्कट आ पड़ा है?

अन्नपूर्णा ने हँसकर कहा—तुम धन्य हो! तुम्हारा हृदय पत्थर से भी कठोर है! यह कपट-कौशल रहने दो। तुम्हारे मन में जैसा होता है, सो क्या मैं नहीं जानती? मैं सब जानती हूँ।

कमला ने पूछा—अच्छा बहन, सच-सच कहो, अगर दो दिन विपिन बाबू तुमसे भेट न करें तो क्या तुम—

अन्नपूर्णा ने गर्व भरे स्वर में कहा—यह कभी हो सकता है? दो दिन मुझसे अलग रहने की उनमें हिम्मत भी है?

यह कहकर वह विपिन बाबू की अधीरता-सम्बन्धी बातें करने लगी। विवाह होने के बाद बालक विपिन ने गुरु-जनों की आँख बचाकर अपनी नववधू के साथ भेट करने के लिए कब क्या-क्या कौशल किया था; कब उसका आयास व्यर्थ हुआ था, कब उसका यह कपट-कौशल लोगों में प्रकट हो गया था; दिन में भेट न होने का दुःख हलका करने के लिए दोपहर को भोजन के समय एक बड़े आईने के द्वारा—गुरुजनों की दृष्टि बचाकर—उन दोनों में परस्पर कैसे दृष्टि-विनिमय होता था, इत्यादि बातें कहते-कहते पुरानी घटनाओं की याद आ जाने के कारण आनन्द से अन्नपूर्णा का सर्वाङ्ग कण्टकित हो गया और चेहरा खिल उठा। इसके बाद विपिन जब आफ़िस जाने लगा—नौकर हो गया—तब जो उतनी देर का वियोग दोनों को असह्य होता था, बहाना करके जब-तब विपिन दफ़्तर से भाग आता था—ऐसी-ऐसी अनेक बातें हैं।

एक बार ससुर के व्यवसाय के लिए कुछ दिन तक विपिन को पटना भेजना तय हुआ। तब अन्नपूर्णा ने अपने पति से पूछा—"आप अकेले पटने में रह सकेंगे?" विपिन ने बड़ी शान से कहा—"क्यों न रह सकूँगा, खूब मज़े में रहूँगा!" इस स्पर्धा के वाक्य से अन्नपूर्णा रूठ गई। उसने प्राणपण से प्रतिज्ञा की थी कि बिदाई की पहली रात को मैं ज़रा भी दुःख प्रकट न करूँगी। परन्तु वह प्रतिज्ञा आँसुओं के प्रवाह के साथ न-जाने किधर बह गई। दूसरे दिन जब यात्रा का सब सामान ठीक हो चुका तब एकाएक विपिन के सिर में ऐसा दर्द शुरू हुआ कि यात्रा रुक ही गई। इसके बाद डाक्टर बुलाये गये। उन्होंने शीशी भर बहुत उम्दा दवा दी। दवा देकर जब वे चले गये तब उस दवा को चुपचाप नाली में फेंककर किस अपूर्व उपाय से उसकी शिरःपीड़ा दूर हुई, यह सब वृत्तान्त कहते-कहते कब कितना समय हो जाता था, इसका ज्ञान अन्न-पूर्णा को न रहता था। ऐसे समय दरवाज़े पर एकाएक किसी की आहट सुनते ही वह हड़बड़ाकर सहसा उठ खड़ी होती थी। विपिन बाबू आफ़िस से न आ गये हों! सम्पूर्ण वार्तालाप के भीतर एक उत्कण्ठित हृदय मानों उनके आने की राह देखा करता था।

कमला के आगे ये बातें बिलकुल आकाश-कुसुम की भाँति रही हों, यह नहीं, इसका आभास पहले ही से उसे कुछ-कुछ मिल चुका था। पहले कई महीने तक रमेश के साथ जो

प्रथम परिचय रहा उस समय मानों इसी तरह की एक रागिनी बजने लगती थी। इसके बाद, स्कूल से छुटकारा पाकर, जब वह रमेश के पास लौट आई तब भी बीच-बीच में इस तरह की तरल तरङ्ग, अपूर्व सङ्गीत और नृत्य के साथ, उसके हृदय में थपेड़ लगाती थी। उस थपेड़ का ठीक अर्थ आज अन्नपूर्णा की इन कहानियों से उसकी समझ में आया है। समझने ही से क्या होगा? उसका यह सब छिन्न-भिन्न है, इसमें कोई धारावाहिकता नहीं है। उसे किसी परिणाम तक पहुँचने नहीं दिया गया है। अन्नपूर्णा और विपिन में जो एक प्रकार के आग्रह का खिंचाव है, वह रमेश और कमला में कहाँ है? यह जो कई दिनों से ये दोनों आपस में मिल-जुल नहीं सकते, बातचीत भी नहीं कर सकते—इससे कमला के मन में क्या चञ्चलता हुई? कुछ नहीं। और रमेश भी उसको देखने के लिए बाहर बैठा कोई युक्ति सोचता हो, या कुछ अधीरता प्रकट करता हो, सो यह भी नहीं है।

इसी बीच रविवार आ गया। उस दिन अन्नपूर्णा कुछ कठिनाई में पड़ गई। अपनी नई सखी को बड़ी देर तक अकेली छोड़कर जाने में उसे लज्जा मालूम होने लगी। इधर छुट्टी के दिन को वह एक बार ही व्यर्थ कर दे, इतनी बड़ी उदारता भी उसमें नहीं। इधर रमेश बाबू के नज़दीक रहते भी जब कमला की उससे भेंट नहीं होती तब, छुट्टी के उत्सव में अपने पति के पास जाकर सम्मिलन-सुख लूटने में उसे कुछ

कष्ट भी मालूम हुआ। अहा! अगर किसी तरह रमेश के साथ कमला के मिलने का कोई प्रबन्ध कर दिया जाय तो कैसा अच्छा हो!

इन बातों में बड़े-बूढ़ों से सलाह लेकर तो कुछ किया नहीं जाता, किन्तु चक्रवर्ती सलाह के लिए ठहरनेवाले आदमी नहीं। उन्होंने घर में सबसे कह दिया कि आज हम किसी विशेष कार्य-वश शहर के बाहर जाते हैं। उन्होंने रमेश को समझा दिया कि बाहर का कोई आदमी आज हमारे घर न आवेगा। हम सदर फाटक बन्द करके जाते हैं। यह समाचार उन्होंने अपनी कन्या को विशेष रूप से सुना दिया। वे भली भाँति जानते थे कि हमारे इशारों का अर्थ अन्नपूर्णा ब.खूबी. समझ जाती है।

स्नान करने के बाद अन्नपूर्णा ने कमला से कहा—आओ बहन, तुम्हारी चोटी बाँध दूँ।

कमला—क्यों, आज इतनी जल्दी किस लिए?

"यह फिर बताऊँगी। पहले तुम्हारी चोटी बाँध दूँ।" यह कहकर अन्नपूर्णा कमला को अपने आगे बिठाकर कङ्घी करने लगी। आज कमला की वेणी गूँथने में उसने विशेष परिश्रम किया।

इसके बाद साड़ी के लिए दोनों सखियों में बहस होने लगी। अन्नपूर्णा उसे रङ्गीन साड़ी पहिराना चाहती थी और कमला उस साड़ी के पहिरने का कारण न समझती थी।

आखिर बिना ही कारण जाने अन्नपूर्णा को सन्तुष्ट करने की इच्छा से कमला ने उसकी पसन्द की साड़ी पहन ली।

दोपहर को भोजन के अनन्तर अन्नपूर्णा अपने स्वामी के कान में न मालूम क्या कहकर कुछ देर के लिए छुट्टी लेकर कमला के पास आई। इसके बाद बाहर के कमरे में जाने के लिए कमला से बहुत कुछ अनुरोध-उपरोध किया गया।

यहाँ आने के पूर्व रमेश के पास कमला कई बार निःसङ्कोच होकर जाती-आती थी। इस विषय में सामाजिक लज्जा करने की कोई विधि है, यह जानने का आज तक उसे कोई अवसर न मिला था। परिचय के आरम्भ में ही रमेश ने सङ्कोच का व्यवहार उठा दिया था। निर्लज्जता का दोष देकर धिक्कारने-वाली कोई सहेली भी कमला के पास न थी।

किन्तु आज अन्नपूर्णा के अनुरोध का पालन करना उसके लिए अत्यन्त कठिन हो गया। अन्नपूर्णा जिस अधिकार से स्वामी के पास आती जाती है वह कमला को मालूम हो चुका है। वह अधिकार जब उसे प्राप्त नहीं है तब वह दीनभाव से आज रमेश के पास क्योंकर जाय।

कमला जब किसी तरह जाने को राज़ी न हुई तब अन्न-पूर्णा नें समझा कि वह रमेश पर रूठी है। रूठने की बात ही है। कई दिन हो गये, पर रमेश ने कोई युक्ति निकालकर एक बार भी उसको देखने की चेष्टा नहीं की।

हरिभाविनी उस समय किवाड़ बन्द किये अपने कमरे में सो रही थी। अन्नपूर्णा ने विपिन के पास जाकर कहा—"आप रमेश बाबू से कहिए कि कमला तुम्हें भीतर बुलाती है। पिताजी इसके लिए कुछ न कहेंगे। माँ सोई हैं, उन्हें कुछ मालूम ही न होगा।" विपिन के सदृश एकान्तप्रिय मनुष्य के लिए ऐसा दूतकर्म किसी तरह इष्ट न था तो भी छुट्टी के दिन अन्नपूर्णा के इस अनुरोध का लङ्घन वह नहीं कर सका।

बैठक में जाज़िम बिछी थी। उस पर चित लेटा हुआ रमेश 'पायोनियर' (अख़बार) पढ़ रहा था। उसके उठे हुए घुटने पर दूसरे पैर की पिंडली रक्खी थी। अख़बार के पढ़ने योग्य अंश को समाप्त करके जब उसने विज्ञापन की ओर दृष्टि दी तब विपिन को भीतर आते देख वह उल्लसित हो उठा। साथी के हिसाब से विपिन प्रथम श्रेणी का न था तो भी दोपहरी बिताने के लिए रमेश ने उसके आगमन को परम लाभ समझा। उसने बड़े प्रेम के साथ कहा—आइए, विपिन बाबू, आइए, बैठिए।

विपिन बैठने के लिए तो आया न था इसलिए उसने ज़रा सिर खुजलाकर कहा—वे आपको भीतर बुलाती हैं।

रमेश—कौन, कमला?

विपिन—जी हाँ।

रमेश को कुछ आश्चर्य हुआ। वह पहले ही निश्चय कर चुका है कि कमला को पत्नीभाव से ग्रहण करेगा। किन्तु

दुबिधा करने का उसका स्वभाव, कई दिन का अवकाश पाकर, विश्राम कर रहा है। कल्पना के द्वारा कमला को गृहिणी-पद पर अभिषिक्त करके अपने मन को नाना प्रकार के भावी सुखों का प्रलोभन दिखाकर उसने उत्तेजित भी किया था। परन्तु प्रथम आरम्भ ही कठिन है। कुछ दिन से कमला के प्रति जो उसका बर्ताव और ही तरह का हो गया था, उससे वह जो दूर ही दूर छुडकता सा रहता था, उसे वह एकाएक कैसे तोड़ डाले। इसका कोई उपाय रमेश को न सूझता था। और इसी कारण वह किराये का मकान लेने में भी विलम्ब कर रहा था।

कमला ने बुलाया है, यह सुनकर रमेश ने सोचा कि ज़रूर उसे मुझसे कोई विशेष काम होगा। प्रयोजन की बात सोच-कर भी उसके मन में धड़कन पैदा हुई। पायोनियर को नीचे रखकर जब वह विपिन के पीछे-पीछे भीतर गया तब शरद् ऋतु के सूनसान मध्याह्न-कालिक अभिसार के आभास ने उसके चित्त को कुछ चञ्चल कर दिया।

विपिन दूर ही से कमरा दिखाकर चला गया। कमला ने समझा था कि अन्नपूर्णा मुझे छोड़कर विपिन के पास चली गई, इसलिए वह खुले दरवाज़े की चौखट पर बैठी सामने के बाग़ की ओर देख रही थी। अन्नपूर्णा ने किसी तरह कमला के हृदय के भीतर-बाहर एक अनुराग का तार बाँध दिया था। दोपहर की कुछ गरम हवा में बाहर पेड़ों के पत्ते जैसे मर्मर

शब्द के साथ हिल रहे थे वैसे ही कमला के हृदय के भीतर भी एक दीर्घ निःश्वास की वायु बहकर अव्यक्त वेदना के साथ उसके कलेजे को रह-रहकर कँपा रही थी।

ऐसे ही समय रमेश ने कमरे में जाकर जब उसे पीछे से पुकारा 'कमला' तब वह चौंक उठी। उसके हृत्पिण्ड के भीतर रक्त उछलने लगा। जो कमला इसके पहले कभी रमेश के आगे विशेष सङ्कोच न करती थी वह आज अच्छी तरह सिर उठाकर रमेश की ओर देख भी न सकी। उसका चेहरा लाल हो गया।

आज के भूषण-वस्त्र की सजावट से रमेश को कमला नये रूप में देख पड़ी। कमला के इस सौन्दर्य-विकाश ने रमेश को चकित और मुग्ध कर दिया। वह धीरे-धीरे कमला के पास जाकर ज़रा चुप रहकर कोमल स्वर में बोला—तुमने मुझको बुलाया है?

कमला ने चकित होकर अनावश्यक उत्तेजना के साथ कहा—नहीं, नहीं, मैंने तो नहीं बुलाया। मैं आपको क्यों बुलाऊँगी?

रमेश—बुलाने में दोष ही क्या है?

कमला ने दुगुनी उत्तेजना के साथ कहा—नहीं, मैं बुलाती तो आपसे कह न देती।

रमेश—अच्छा, तुमने न बुलाया सही, मैं अपने मन से आया हूँ। इससे क्या मुझे अनादर के साथ लौट जाना पड़ेगा?

कमला—घरवालों को जो यह मालूम होगा कि आप यहाँ मेरे पास आये हैं तो वे क्रोध करेंगे। आप जाइए। मैंने आपको नहीं बुलाया।

रमेश ने कमला का हाथ पकड़कर कहा—अच्छा, तो तुम मेरे साथ बाहर के कमरे में चलो। वहाँ कोई नहीं है, और न किसी के अभी आने की सम्भावना है।

कमला हाथ छुड़ाकर काँपती हुई कमरे के भीतर चली गई। भीतर से उसने किवाड़ बन्द कर लिये।

रमेश ने समझा कि यह इस घर की किसी स्त्री का प्रपञ्च है। यह समझकर वह पुलकित होता हुआ बाहर कमरे में चला गया। फिर चित लेटकर वह पायोनियर के विज्ञापन देखने लगा किन्तु कुछ अर्थ उसकी समझ में न आया। उसका मन चिन्ता के झूले पर चढ़कर भाँति-भाँति के झोंके खा रहा था। उसके हृदय-रूपी आकाश में भाव के रङ्ग-बिरङ्गे बादल तेज़ हवा लगने से इधर-उधर उड़ने लगे।

अन्नपूर्णा ने बन्द किवाड़ों में बाहर से धक्का दिया पर किसी ने दर्वाज़ा न खोला। तब उसने किवाड़ की झिलमिली को सीधा करके बाहर से हाथ डालकर चटख़नी खोल ली। भीतर प्रवेश करके देखा—कमला नीचे औंधी पड़ी दोनों हाथों से मुँह छिपाये रो रही है।

अन्नपूर्णा को बड़ा आश्चर्य हुआ। ऐसी क्या बात हो गई जिससे कमला इतनी बिलख रही है! वह झटपट उसके

कान में मुँह लगाकर स्नेह भरे स्वर में पूछने लगी—क्यों बहन, तुम्हें क्या हुआ है, इस तरह क्यों रो रही हो?

कमला—तुम उन्हें क्यों बुला लाईं? तुमने बड़ा अन्याय किया।

कमला के मन में जो आकस्मिक आवेग की प्रबलता थी उसका अन्नपूर्णा की या किसी और की समझ में आना कठिन था। एक कल्पना के राज्य पर अधिकार किये कमला आज मज़े में बैठी थी। यदि रमेश आज सावधानी से उस राज्य में प्रवेश करता तो अच्छा ही होता। किन्तु उसे बुला लाने से सारा खेल बिगड़ गया। तातील के समय कमला को बोर्डिङ्ग में ही धाँध रखने की कोशिश और इसके बाद स्टीमर पर रमेश की उदासीनता—ये बातें कमला के मन की तह में उथल-पुथल मचाने लगीं। पास रहने के कारण मिल जाते हैं और बुलाये जाने पर आते हैं, यह भी कोई बात हुई! ग़ाज़ीपुर में आने पर कमला थोड़े ही दिनों में असल बात को बख़ूबी समझ गई। कमला और रमेश के बीच जो किसी तरह का सच्चा व्यवधान रह सकता है, इसकी कल्पना भी अन्नपूर्णा नहीं कर सकती। उसने बड़े यत्न से अपनी गोद में कमला का मस्तक रखकर पूछा—क्या रमेश बाबू ने तुमसे कोई सख़्त बात कही है या तुम्हारे साथ कुछ अप्रिय व्यवहार किया है? वे बुलाने गये थे, इससे रमेश बाबू नाराज़ तो नहीं हो गये! तुमने उनसे कहा क्यों नहीं कि यह अन्नपूर्णा की करतूत है।

तेंतीसवाँ परिच्छेद

रमेश ने निश्चय किया था कि कलकत्ते में अपना काम करके शीघ्र लौट आऊँगा और कोलूटोला स्ट्रीट की उस गली में जाऊँगा भी नहीं।

रमेश दर्ज़ीपाड़ेवाले मकान में आकर ठहरा। दिन में उसका बहुत कम समय ज़रूरी कामों में बीतता था, बाक़ी समय मुश्किल से कटता था। वह और दफ़े कलकत्ते आकर जिन लोगों से मिलता-जुलता था, अबकी बार वह उनसे भेट न कर सका। रास्ते में कहीं किसी परिचित व्यक्ति से भेट न हो जाय, इस भय से वह बराबर चौकन्ना रहता था।

किन्तु कलकत्ते आते ही रमेश का ख़याल बदल गया। उसके पूर्व-कल्पित सिद्धान्त में हेर-फेर होने लगा। जो कमला उसकी आँखों में बस गई थी, जिसने निर्जन आकाश के बीच, निर्मल शान्ति के परिवेष्टन में अपनी किशोरावस्था के प्रथम आविर्भाव के समय रमणीय दर्शन दिया था उसकी वह मोहिनी छवि कलकत्ते आने पर रमेश के चित्त से बहुत कुछ हट गई। रमेश ने दर्ज़ीपाड़े के मकान में कमला को कल्पना-क्षेत्र में लाकर अनुराग की दृष्टि से देखने की चेष्टा की। किन्तु यहाँ उसका चित्त ऐसा करने को राज़ी न हुआ। आज कमला उसे एक अभद्र अशिक्षिता बालिका की भाँति जँची।

जितने अधिक बल का प्रयोग किया जाता है उतना ही वह घटता है। रमेश नलिनी को मन से हटाने के लिए जितना ज़ोर मारने लगा उतनी ही उसकी मानसिक शक्ति घटने लगी। "नलिनी को किसी तरह मन के भीतर प्रवेश न करने दूँगा", यह प्रतिज्ञा करते-करते नलिनी की बात दिन-रात रमेश के मन में जागृत होने लगी। भूलने का कठिन संकल्प ही स्मरण रखने का प्रबल कारण हो गया।

यदि रमेश को कुछ जल्दी होती तो बहुत शीघ्र कलकत्ते का काम करके ग़ाज़ीपुर लौट जाता। किन्तु यहाँ आते ही उसका काम बहुत बढ़ गया। आख़िर वह भी ख़तम हो गया।

कल रमेश किसी काम से पहले इलाहाबाद जायगा और तब ग़ाज़ीपुर को लौटेगा। इतने दिन से वह बेचारा धैर्य धारण किये चला आता है। क्या इसके लिए कुछ पुरस्कार उसे न मिलना चाहिए? कलकत्ते से बिदा होने के पूर्व चुप-चाप एक बार कोलूटोले की ख़बर ले आवे तो क्या हर्ज है?

आज कोलूटोले की उसी गली से होकर जाने का निश्चय करके वह एक चिट्ठी लिखने बैठा। उस चिट्ठी में रमेश ने कमला के साथ अपना सम्बन्ध विस्तारपूर्वक लिखा। उसमें यह भी सूचित कर दिया कि इस बार ग़ाज़ीपुर लौटकर मैं लाचारी से हतभागिनी कमला को पत्नी भाव से ग्रहण करूँगा। इस प्रकार उसने नलिनी से अपना चिर-विच्छेद होने के पूर्व की सारी सच्ची घटना जताकर इस पत्र द्वारा उससे बिदा माँगी।

चिट्ठी को लिफ़ाफ़े में बन्द करके उसके ऊपर किसी का नाम न लिखा। चिट्ठी में भी उसने न किसी का नाम लेकर सम्बोधन किया, न नीचे अपना नाम लिखा। घनानन्द बाबू के नौकर-चाकर रमेश से राज़ी रहते थे। कारण यह कि नलिनी के सभी छोटे-बड़े आत्मीय जनों को रमेश ममता की की दृष्टि से देखता था। कभी-कभी वह त्योहार पर नलिनी के नौकरों को इनाम में कपड़ा या कुछ नक़द दे देता था। उसने निश्चय किया था कि साँझ हो जाने पर मैं कोलूटोलेवाले मकान में जाकर एक बार दूर से नलिनी को देख आऊँगा और किसी नौकर के द्वारा वह चिट्ठी चुपचाप नलिनी के पास भेजकर सदा के लिए पुराने प्रेम-बन्धन को तोड़कर चला जाऊँगा।

रमेश ने चिराग़-बत्ती के समय चिट्ठी हाथ में ले थरथराते पैरों और काँपते हृदय से उस गली के भीतर प्रवेश किया। फाटक के पास आकर देखा, दरवाज़ा बन्द है। ऊपर नज़र उठाकर देखा तो झरोखे मोखे सब बन्द हैं। मकान सूना पड़ा है। सर्वत्र अँधेरा है।

तथापि रमेश ने बाहर के किवाड़ पर धक्का दिया। दो-चार बार धक्का देने पर भीतर से एक दरवान दरवाज़ा खोलकर बाहर आया। रमेश ने पूछा—कौन, रामधन?

दरवान—हाँ बाबू, मैं रामधन ही हूँ।

रमेश—बाबू कहाँ गये हैं?

दरवान—लल्ली को लेकर पश्चिम हवा खाने गये हैं।

रमेश—कहाँ गये हैं?

दरवान—यह मैं नहीं कह सकता।

रमेश—साथ में और कौन गया है?

दरवान—कमलनयन बाबू।

रमेश—कौन कमलनयन बाबू?

दरवान—यह मुझे मालूम नहीं।

रमेश को पूछने पर मालूम हुआ कि कमलनयन एक युवा पुरुष है, कुछ दिन से इस घर में आने-जाने लगा है। यद्यपि रमेश नलिनी की आशा का परित्याग करने ही चला था तथापि कमलनयन पर उसको एक स्वाभाविक ईर्ष्या हुई।

रमेश ने पूछा—तुम्हारी लल्ली का स्वास्थ्य कैसा है?

दरवान—स्वास्थ्य—स्वास्थ्य तो अच्छा ही है।

रामधन ने समझा था कि रमेश बाबू इस शुभ संवाद से प्रसन्न और चिन्तारहित होंगे। भगवान् जानें, रामधन ने यह ग़लत समझा था।

रमेश—मैं एक बार ऊपर जाऊँगा।

रामधन हाथ में मिट्टी के तेल का चिराग़ ले रमेश को ऊपर ले गया। रमेश भूत की तरह हर एक कमरे में घूम आया।

फिर एक कुरसी पर बैठ गया। घर में जो वस्तु जहाँ थी वह पहले की ही तरह वहाँ मौजूद थी। बीच में कमल-नयन कहाँ से कूद पड़ा। संसार में कोई जगह किसी के

अभाव में अधिक दिन ख़ाली नहीं रह सकती। जिस झरोखे पर रमेश एक दिन नलिनी के पास खड़ा होकर सावन महीने के सूर्यास्त-समय की शोभा देख गया था और जहाँ दो हृदयों का निःशब्द मिलन हुआ था, वहाँ क्या अब धूप नहीं पड़ती? उसी झरोखे में और कोई आकर जब युगल मूर्ति की रचना करना चाहेगा तब क्या पुराना इतिहास आकर उनके लिए जगह रोक लेगा और चुपचाप उँगली के इशारे से उन्हें दूर हटा देगा? ग्लानि से रमेश का हृदय फूलने लगा।

दूसरे दिन रमेश इलाहाबाद न जाकर सीधे ग़ाज़ीपुर लौट गया।

चौंतीसवाँ परिच्छेद

रमेश कलकत्ते में एक महीने भर के लगभग रहकर ग़ाज़ीपुर आया। कमला के लिए यह एक महीना कुछ कम समय न था। वह नहीं जानती थी कि मेरे भाग्य में क्या लिखा है। उसके हृदय में किसी तबदीली का सोता बड़ी फुर्ती से बह रहा है। उषा का प्रकाश देखते ही देखते जैसे प्रातःकाल की धूप निकल आती है वैसे ही थोड़े समय में कमला का स्त्री-स्वभाव भी सोते से जाग उठा। अन्नपूर्णा के साथ यदि उसका घनिष्ठ परिचय न होता, यदि अन्नपूर्णा का प्रेम-रहस्य और वियोग-व्यथा उसके हृदय पर प्रतिफलित न होती तो न मालूम कितने दिनों में वह इन बातों का मर्म समझ सकती।

इधर रमेश के आने में विलम्ब देखकर, अन्नपूर्णा के अनुरोध से, चक्रवर्ती ने कमला और रमेश के रहने के लिए शहर के बाहर गङ्गा के किनारे किराये का एक मकान ठीक कर रक्खा। थोड़ा-बहुत असबाब भी इकट्ठा करके घर सजाने के लिए रख छोड़ा और घर का आवश्यक काम-धन्धा करने के लिए दास-दासी का भी प्रबन्ध कर लिया।

बहुत विलम्ब करके रमेश जब ग़ाज़ीपुर आया तब चक्रवर्ती के घर में ही रहने के लिए उसे कोई बहाना न मिला। इतने दिन बाद कमला ने अपने स्वतन्त्र घर में प्रवेश किया।

मकान के चारों ओर बाग़ लगाने योग्य ज़मीन है। दोनों ओर बड़े-बड़े शीशम के पेड़ हैं जिनके नीचे होकर एक छाँह-दार सड़क गई है। शीतकाल में गङ्गा के दूर हट जाने के कारण गङ्गा की धार और मकान के बीच बालू का एक बड़ा मैदान सा हो गया है। उस मैदान में जगह-जगह किसानों ने गेहूँ की खेती कर ली है और जहाँ-तहाँ तरबूज़ और ख़र-बूज़े बो दिये हैं। घर के दक्खिन सिवाने, गङ्गा के किनारे की तरफ़, अशोक का एक बहुत बड़ा पेड़ है। उसके नीचे पत्थर का चबूतरा है।

बहुत दिनों से मकान ख़ाली पड़ा रहने के कारण मकान और उसके हाते की ज़मीन गिरी दशा में थी। बाग़ में कोई पेड़-पौधा हरा न था। घर भी कूड़े-करकट से भरा था। किन्तु कमला को यह देखकर बुरा न लगा। गृहिणी-पद-प्राप्ति के आनन्द में उसे सब वस्तुएँ सुन्दर दीखने लगीं। कौन कमरा किस काम आवेगा, बाग़ की ज़मीन में कहाँ कौन पेड़-पौधे लगाये जायँगे, यह सब उसने मन ही मन ठीक कर लिया। चक्रवर्ती से सलाह करके कमला ने सब ज़मीन आबाद करने की व्यवस्था की। स्वयं खड़ी होकर उसने रसोई-घर का चूल्हा बनवाया और उसके पार्श्ववर्ती भाण्डार-घर में जहाँ जो परिवर्तन करना ज़रूरी था सब ठीक कर लिया। घर के कूड़े-करकट को फेंकवाकर सबको झाड़-पोंछकर साफ़ करवाया, फिर पीली मिट्टी और गाय के गोबर से

लिपवा दिया। जिस जगह को देखने से पहले जी मचलाता था वही अब ऐसी सुहावनी हो गई कि मन को लुभाने लगी। कमला का चित्त घर-द्वार की सफ़ाई और फुलवाड़ी की सजावट में लग गया।

गृहकार्य में रमणी का जी जितना लगता है उतना और किसी काम में नहीं। और इसी में उसकी सुन्दरता है। रमेश ने कमला को आज उसी काम में जी से लगा देखा। एक तरह से उसने चिड़िया को पींजड़े के बाहर उड़ते देखा। उसके प्रसन्न मुँह और उसकी गृहकार्य-दक्षता देख रमेश के मन में एक नवीन आश्चर्य के साथ विशेष हर्ष उत्पन्न हुआ।

इतने दिन रमेश ने कमला को अपने घर में स्वच्छन्दता-पूर्वक न देखा था। आज उसे जब घर की अधिकारिणी के रूप में देखा तब उसके सौन्दर्य के साथ एक महत्त्व का भी चिह्न देखा।

कमला के पास आकर रमेश ने कहा—कमला, तुम क्या करती हो, थक जाओगी।

थोड़ी देर के लिए कमला अपने काम से हाथ खींचकर रमेश की ओर देख मीठी हँसी हँसकर बोली—नहीं, मैं न थकूँगी।

रमेश जो उसकी ख़बर लेने आया, इसको कृतज्ञता-स्वरूप स्वीकार कर वह फिर अपने काम में लग गई।

रमेश ने बहाना करके फिर उसके पास जाकर पूछा—कमला, तुमने कुछ खाया है या अभी तक भूखी हो?

कमला—खाया नहीं है तो क्या भूखी हूँ ? कभी की भोजन कर चुकी।

रमेश यद्यपि यह जानता था तथापि इस प्रश्न के व्याज से वह कमला का आदर किये बिना न रह सका। कमला भी रमेश के इस अनावश्यक प्रश्न से कुछ कम प्रसन्न न हुई।

रमेश ने फिर उसका मधुर भाषण सुनने की इच्छा से कहा—तुम अपने हाथ से कितना काम करोगी ? मुझे भी शामिल कर लो न।

कार्यकुशल लोगों में एक यह भारी दोष होता है कि वे दूसरे की कार्यकारिता पर विश्वास नहीं करते। उन्हें इस बात का भय लगा रहता है कि जो काम हम अपने हाथ से करेंगे वह दूसरा कोई ठीक उसी तरह न कर सकेगा—चौपट कर देगा। कमला ने हँसकर कहा—यह काम आप लोगों के करने का नहीं।

रमेश—पुरुष जाति पर तुम्हारी जो ऐसी अनादर-बुद्धि रहती है, उसे हम चुपचाप सह लेते हैं। क्योंकि पुरुष बड़े सहिष्णु होते हैं, अगर मैं तुम्हारी तरह स्त्री होता तो तुमसे ख़ूब लड़ता-झगड़ता। हाँ, चक्रवर्ती से तो काम लेने में तुम नहीं चूकतीं। क्या मैं इतना अकर्म्मण्य हूँ जो तुम्हारा कोई काम नहीं कर सकता ?

कमला—यह आप जानें ! किन्तु रसोईघर का धूवाँ और जाला आप साफ़ कर रहे हैं—यह सोचते ही मुझे हँसी आती है। आप यहाँ से जाइए, यहाँ धूल बहुत उड़ती है।

रमेश ने कमला के साथ बात बढ़ाने की इच्छा से कहा—धूल तो छोटे-बड़े का विचार नहीं करती। वह जिस आँख से मुझको देखती है उसी से तुमको भी देखती है!

कमला—मेरा काम है, इसलिए मैं धूल में रहूँगी। आप क्यों धूल में रहिएगा?

रमेश ने नौकरों के कान बचाकर धीमे स्वर में कहा—काम रहे, चाहे न रहे, तुम जो कष्ट सहोगी उसका अंश मैं अवश्य लूँगा।

कमला का चेहरा लाल हो गया। उसने रमेश की बात का कोई उत्तर न दे, वहाँ से जरा खिसककर, उमेश से कहा—"एक घड़ा पानी इस जगह क्यों नहीं डालता? देखता नहीं, यहाँ कितनी धूल जमी है।" यह कहकर आप ज़ोर से बुहारी देने लगी।

रमेश ने कमला को बुहारी लगाते देख घबड़ाकर कहा—ओफ़! कमला, यह क्या कर रही हो?

पीछे से किसी ने कहा—"क्यों रमेश बाबू! अन्याय का काम क्या हो रहा है? यदि घर झाड़ने का काम इतना छोटा जान पड़ता है तो नौकर के हाथ से ही क्यों नहीं बुहारी दिलवाते? मैं मूर्ख हूँ। अगर मुझसे पूछिए तो मैं यही कहूँगा कि बहूजी के हाथ में बुहारी की प्रत्येक सींक सूर्य की किरण की तरह उज्ज्वल दीख रही है।" (कमला की ओर देखकर) तुम्हारे बग़ीचे का कूड़ा-कचरा मैंने क़रीब-क़रीब साफ़ करा

दिया। उसमें अब कहाँ क्या लगाओगी, वह मुझे एक बार दिखा देना।

कमला—चक्रवर्तीजी, आप कृपा करके ज़रा ठहर जाइए। मेरा यह घर अब साफ़ हुआ जाता है।

यह कहकर कमला ने घर को अच्छी तरह साफ़ कर कमर में लपेटे हुए आँचल को कन्धे पर डाला और घूँघट सम्हालकर वह बाहर आई। फुलवाड़ी में कहाँ कौन पेड़-पौधे लगाने चाहिएँ, इस विषय पर वह चक्रवर्ती के साथ विचार करने लगी।

इन्हीं बातों में दिन समाप्त हो गया। अब भी दो-एक कमरे साफ़ करने को रह गये। मकान बहुत दिनों से सूना पड़ा था और बन्द था, इससे दो-चार दिन खिड़कियाँ और दरवाज़े खुले न रक्खे जायँ तो वह रहने योग्य न होगा।

यह सोचकर कमला ने साँझ होने पर चक्रवर्ती के घर में ही रहने का निश्चय किया। इससे रमेश का मन कुछ दुखी हुआ। आज दिन भर वह यही सोचता था कि कब साँझ होगी, घर में चिराग़-बत्ती जलाऊँगा और कमला की सलज्ज मृदु मुस्कुराहट के आगे अपना हृदय सम्पूर्ण रूप से निवेदन करूँगा। किन्तु नये घर में जाने में दो-चार दिन के विलम्ब की सम्भावना देखकर रमेश दूसरे दिन अपने वकालत-सम्बन्धी काम से इलाहाबाद चला गया।

पैंतीसवाँ परिच्छेद

आज कमला के नये मकान में अन्नपूर्णा को भोजन का निमन्त्रण था। विपिनविहारी भोजन के उपरान्त जब आफ़िस गया तब अन्नपूर्णा कमला के घर गईं। कमला के अनुरोध से चक्रवर्ती उस दिन स्कूल नहीं गये। अन्नपूर्णा ने अशोक पेड़ की छाँह में रसोई चढ़ा दी। चक्रवर्ती तरकारी बनाने बैठे। उमेश उन दोनों की सेवा-टहल करने लगा।

रसोई तैयार हो जाने पर दोनों ने तृप्तिपूर्वक भोजन किया। चक्रवर्ती पान-इलायची खाकर घर के भीतर जाकर सो रहे। इधर दोनों सखियाँ अशोक की छाँह में बैठकर वही पुरानी बातचीत करने लगीं। इस गप-शप में तन्मय हो जाने से कमला को यह नदी-तीर, यह जाड़े की मीठी धूप और यह वृक्ष की छाँह बड़ी सुन्दर लगने लगी। मेघ-विहीन नीले आकाश में दूर की ऊँची रेखा की तरह चील उड़ती है, कमला के हृदय की उद्देश-विहीन आकांक्षा भी उतनी ऊँची उड़ान भरने लगी।

तीन बजते-बजते अन्नपूर्णा घबरा उठी। उसके पतिदेव आफ़िस से आवेंगे। कमला ने कहा—क्या एक दिन भी तुम्हारा नियम भङ्ग नहीं हो सकता।

अन्नपूर्णा ने कुछ उत्तर न दिया, मुस्कुराकर कमला का चिबुक पकड़कर धीरे से हिला दिया। घर के भीतर जाकर पिता को जगाया और कहा, मैं जाती हूँ।

चक्रवर्ती ने कमला से कहा—बेटी, तुम भी चलो।

कमला—नहीं, अभी यहाँ कुछ काम बाक़ी रह गया है। उसे पूरा करके मैं चिराग़-बत्ती के समय आऊँगी।

चक्रवर्ती अपने पुराने नौकर और उमेश को कमला के पास छोड़कर आप अन्नपूर्णा को घर पहुँचाने गये। वहाँ उन्हें कोई काम था। कमला से कह गये कि मेरे लौटने में अधिक बिलम्ब न होगा।

कमला घर के शेष कार्य को सम्पन्न कर चुकी। तब भी थोड़ा दिन था। वह हाथ-पैर धोकर और एक कपड़ा ओढ़-कर अशोक के पेड़ के नीचे आकर बैठ गई। गङ्गा में बड़ी-बड़ी नावें इधर-उधर जा रही थीं। उनकी शोभा देखने लगी। देखते ही देखते सूर्यास्त हो गया।

इसी समय उमेश एक बहाना करके कमला के पास आ खड़ा हुआ। उसने कहा—"माँ, बड़ी देर से आपने पान नहीं खाया। चक्रवर्ती के घर से आते समय मैं पान लेता आया था।" यह कहकर उसने एक काग़ज़ में लपेटे हुए पान के बीड़े कमला को दिये।

तब कमला को चेत हुआ कि साँझ हो गई। वह झट उठ खड़ी हुई। उमेश ने कहा—चक्रवर्ती बाबू ने गाड़ी भेज दी है।

कमला गाड़ी मे बैठने के पूर्व एक बार घर देखने के लिए फिर भीतर गई।

बड़े कमरे में जाड़े के समय आग जलाने के लिए विलायती ढँग की एक अँगीठी बनी थी। उसके पास ही लम्प बल रहा था। कमला उसी मुड़े हुए काग़ज़ पर पान रखकर कुछ देखने जाती थी। उसी समय एकाएक उसकी नज़र मोड़े हुए काग़ज़ पर रमेश के हाथ के लिखे अपने नाम "कमला" पर पड़ी।

कमला ने उमेश से पूछा—यह काग़ज़ तुझे कहाँ मिला ?

उमेश—बाबू के कमरे के कोने में पड़ा था। मैंने झाड़ू देते समय उठा लिया था।

कमला उस काग़ज़ को खोलकर पढ़ने लगी।

यह वही सविस्तर चिट्ठी थी जो रमेश ने कलकत्ते में नलिनी के पास भेजने के लिए लिखी थी। भुलक्कड़ रमेश के हाथ से वह चिट्ठी कब कहाँ गिर गई, इसकी कुछ ख़बर उसे न थी।

कमला ने उसको पढ़ लिया। उमेश ने कहा—अम्माँ, आप इस तरह चुप होकर क्यों खड़ी हो रहीं ? रात हुई जाती है।

कमला कुछ न बोली, चित्रवत् खड़ी रही। कमला के चेहरे की ओर देखकर उमेश डर गया। उसने कहा—अम्माँ मेरी बात नहीं सुनी, घर चलो, रात हो गई !

कुछ देर के बाद चक्रवर्ती के नौकर ने आकर कहा—बहूजी, गाड़ी बहुत देर से खड़ी है। अब चलिए।

—

छत्तीसवाँ परिच्छेद

अन्नपूर्णा ने पूछा—कहो बहन, क्या आज तुम्हारी तबीयत अच्छी नहीं है? क्या सिर में दर्द-वर्द है?

कमला—नहीं, चक्रवर्तीजी को नहीं देखती, वे कहाँ गये?

अन्नपूर्णा—स्कूल में बड़े दिन की तातील है। माँ ने जीजी को देखने के लिए उनको इलाहाबाद भेजा है। कुछ दिन से वह बीमार है।

कमला—वे कब लौटेंगे?

अन्नपूर्णा—उनके लौटने में कम से कम एक सप्ताह लगेगा। तुम घर की सजावट के लिए दिन भर बेहद परिश्रम किया करती हो। आज तुम बहुत अनमनी देख पड़ती हो। जल्दी ब्यालू करके सो रहो।

अगर अन्नपूर्णा से कमला अपने मन की सब बात खोलकर कह देती तो उसके जी का बोझ कुछ हलका हो जाता, परन्तु वह कहने की बात न थी। "जिसको मैं इतने दिन से अपना स्वामी समझती थी वह मेरा स्वामी नहीं है" यह बात दूसरे से कही जाय तो कही भी जा सके, परन्तु अन्नपूर्णा से किसी तरह नहीं कही जा सकती।

कमला सोने के कमरे में गई और भीतर से किवाड़ बन्द करके फिर एक बार चिराग़ की रोशनी में रमेश की चिट्ठी पढ़ने

लगी। चिट्ठी जिसके पास भेजने को लिखी गई है उसका नाम चिट्ठी में नहीं है, और कुछ पता-ठिकाना भी नहीं लिखा है। किन्तु चिट्ठी से यह साफ़ ज़ाहिर होता था कि वह कोई स्त्री है, रमेश के साथ उसके ब्याह का प्रस्ताव हुआ था, परन्तु कमला के कारण यह प्रस्ताव तोड़ना पड़ा है। रमेश उसको हृदय से चाहता था, किन्तु दुर्दैव-दोष से कमला कहाँ से आकर उसके गले पड़ गई जिससे वह उस अनाथा के प्रति दया करके उस प्रेम-बन्धन को सदा के लिए तोड़ने को उद्यत हुआ है। यह बात भी चिट्ठी में लिखी थी।

नदी में नाव डूबने के अनन्तर उस नदी की रेत में जो उसकी रमेश से पहली भेंट हुई थी, तब से लेकर ग़ाज़ीपुर आने तक जो-जो घटनाएँ हुई थीं सब एक-एक कर कमला को स्मरण हो आईं। जिन घटनाओं की स्मृति अस्पष्ट थी वह स्पष्ट हो गई।

रमेश जब बराबर उसको दूसरे की स्त्री जानता है और मन ही मन चिन्तित हो रहा है कि उसे लेकर क्या करूँगा तब कमला जो उसे अपना पति जानकर निःसंकोच भाव से उसके साथ रहकर सदा के लिए गृहस्थी चलाने को तैयार है, इसकी लज्जा बर्छी की भाँति कमला के हृदय को बेधने लगी। प्रति दिन की विचित्र घटनाएँ याद करके वह मारे लज्जा के अधमरी सी हो गई! यह लज्जा उसके जीवन के साथ इस तरह मिल गई है कि कभी अलग होने की नहीं।

कमला दरवाज़ा खोलकर बाग़ के भीतर एक पेड़ के नीचे जा बैठी। एक तो जाड़े की रात, दूसरे सर्वत्र अन्धकार छाया था। केवल आकाश में तारे चमक रहे थे।

सामने क़लमी आमों के पेड़ खड़े-खड़े अन्धकार को और भी सघन कर रहे हैं। कमला कुछ भी सोचकर स्थिर न कर सकी। वह ठंडी घास पर बैठ गई। कठपुतली की भाँति अकेली बैठकर न मालूम मन ही मन क्या सोचने लगी। उसकी आँखों में इस समय नाम लेने को भी आँसू नहीं।

इस तरह वह न-जाने कितनी देर तक बैठी रहती, किन्तु जब कड़े शीत ने उसके हृत्पिण्ड को कँपा दिया, जब उसका सारा शरीर थर-थर काँपने लगा, गहरी रात में अँधेरे पक्ष के चन्द्रोदय ने जब बाग़ के एक प्रान्त के अन्धकार को कुछ-कुछ दूर किया तब कमला ने धीरे-धीरे उठकर घर के भीतर जाकर दरवाज़ा बन्द कर दिया।

सबेरे कमला ने आँख खोलकर देखा कि अन्नपूर्णा चार-पाई के पास खड़ी है। दिन बहुत चढ़ गया जानकर कमला लज्जित होकर झट उठ बैठी।

अन्नपूर्णा ने कहा—नहीं बहन, तुम अभी मत उठो, कुछ देर और सोओ। सचमुच ही तुम्हारा जी अच्छा नहीं है। तुम्हारा चेहरा एकदम उतर गया है। आँखें धँस गई हैं। मालूम होता है, जैसे बहुत दिन की बीमार हो। क्या है, मुझसे कहतीं क्यों नहीं?—यह कहकर अन्नपूर्णा उसके गले से लिपट गई।

कमला का हृदय फटने लगा। उसकी आँखों से आँसू अब रोके न रुके। अन्नपूर्णा के कन्धे पर मुँह रखकर वह रोने लगी। अन्नपूर्णा ने उससे कुछ कहा नहीं, दोनों बाँहों से पकड़कर उसे छाती से लगा लिया।

कुछ ही देर में कमला अन्नपूर्णा का बाहु-बन्धन छुड़ाकर खड़ी हुई और आँखें पोंछकर ज़बर्दस्ती हँसने लगी। अन्नपूर्णा ने कहा—"चलो रहने दो, अब बहुत मत हँसो। बहुत स्त्रियों को देखा है, पर तुम्हारी जैसी औरत मैंने नहीं देखी। तुम्हारे दिल का भेद ही नहीं मिलता। तुम समझती हो कि मैं तुम्हारा हाल कुछ जानती ही नहीं। मुझे ऐसी बेवक़ूफ़ मत समझो। कहो तो मैं अभी तुम्हारे मन की बात बतला दूँ। रमेश बाबू जब से इलाहाबाद गये हैं तब से उन्होंने तुमको एक भी चिट्ठी नहीं लिखी, इसी का तुम्हें रञ्ज है। तुम अभिमानिनी हो। तुम्हें समझना चाहिए, वे वहाँ काम से गये हैं। दो दिन में ही आवेंगे, इसमें क्या है। अगर उनके आने में दो दिन की देरी हो जाय तो क्या उन पर इतना क्रोध करना ठीक है? छिः! सुनो बहन, तुमको आज इतना उपदेश देती हूँ। अगर मुझ पर यह आफ़त आती तो मैं भी ऐसा ही करती। "परोपदेशे पाण्डित्यम्" की बात चरितार्थ होती है। ऐसी झूठ-मूठ बातों में स्त्रियाँ तुरन्त रो देती हैं, परन्तु रुलाई बन्द हो जाने पर फिर हँसते देर नहीं होती। उस क्रोध का भाव मन से एकदम मिट जाता है।" यह कहकर अन्नपूर्णा ने

कमला का हाथ पकड़कर पूछा—सच कहो आज तुमने मन में यही निश्चय किया है न कि रमेश बाबू आवेंगे तो उन्हें कभी माफ़ न करूँगी। क्यों यही बात है न ?

कमला—हाँ, यही बात है।

अन्नपूर्णा ने कमला के गाल पर एक हलकी चपत लगाकर कहा—पगली ! इसलिए इतना मान ठाने बैठी हो ? अच्छा, देखा जायगा। अभी उठकर मुँह-हाथ धो लो।

अन्नपूर्णा ने दूसरे दिन अपने बाप को चिट्ठी लिखी। उसमें लिखा—रमेश बाबू के हाथ की कोई चिट्ठी न पाकर कमला अत्यन्त चिन्तित है। एक तो वह विदेश आई है। दूसरे रमेश बाबू उसे छोड़कर जब-तब चले जाते हैं, चिट्ठी-पत्री भी नहीं लिखते। इससे उसे कितना कष्ट होता है, यह लिखा नहीं जा सकता। क्या उनका इलाहाबाद का काम ख़तम न होगा ? काम सभी को रहता है। तो क्या इसी से कोई दो अक्षर लिखने का श्रम स्वीकार नहीं करता ?

चक्रवर्ती ने इलाहाबाद में रमेश से मिलकर अपनी कन्या के पत्र का विशेष अंश सुनाकर उन्हें ख़ूब फटकारा।

कमला की ओर रमेश के मन का झुकाव ज़्यादा हो गया था, इसमें सन्देह नहीं, किन्तु इस झुकाव से उसका मन और भी दुविधा के झूले में झूलने लगा।

इसी दुविधा में पड़कर रमेश किसी तरह इलाहाबाद से लौटना न चाहता था। इसी अवसर पर उसने चक्रवर्ती के मुँह से अन्नपूर्णा की चिट्ठी सुनी।

अन्नपूर्णा की चिट्ठी से रमेश को अच्छी तरह मालूम हो गया कि मेरे लिए कमला विशेष रूप से उत्कण्ठित है। वह केवल लज्जा से स्वयं कुछ नहीं लिख सकती।

अब रमेश के हृदय से क्रमशः द्विधाभाव घटने लगा। इतने दिन तक उसके मन में सन्देह था कि कमला शायद मुझे हृदय से नहीं चाहती पर अब उसके मन से यह सन्देह जाता रहा। कमला भी उसे चाहती है। विधाता ने नदी के सूने तट में सिर्फ़ उन दोनों को मिला ही नहीं दिया बल्कि उन दोनों के हृदय को भी एक कर दिया है।

रमेश ने क्षण मात्र भी विलम्ब न करके कमला को एक पत्र लिखा—

प्रियतमे !

"ऊपर जिस शब्द से मैंने सम्बोधन किया है उसे यह मत समझना कि चिट्ठी में लिखने का यह एक प्रचलित ढङ्ग है। अगर आज मैं तुमको संसार में सबकी अपेक्षा प्रिय न जानता तो कभी तुम्हारे लिए "प्रियतमा" शब्द का प्रयोग न करता। यदि तुम्हारे मन में कभी मुझ पर किसी तरह का सन्देह उत्पन्न हुआ हो, यदि तुम्हारे कोमल हृदय में मैंने कभी कुछ चोट पहुँचाई हो, तो आज जो मैंने शुद्ध भाव से तुमको "प्रियतमा" कहकर पुकारा है इससे तुम्हें चाहिए कि आज से तुम अपने मन के सारे सन्देहों और यन्त्रणाओं को धो बहाओ। तुम्हें विश्वास दिलाने के लिए इससे बढ़कर और कौन बात

लिखूँ। इसके पूर्व तुम्हारे साथ मैंने सचमुच ऐसा आचरण अनेक बार किया है जिससे तुम्हें कष्ट हुआ होगा। इसके लिए यदि तुम मन ही मन मेरे विरुद्ध कुछ विचार कर रही हो तो मैं उसका कुछ भी प्रतिवाद न करूँगा। मैं इतना ही कहूँगा कि "तुम मेरी प्रियतमा हो, और तुमसे बढ़कर मुझे कोई प्यारा नहीं है।" इससे भी यदि मेरे समस्त अपराधों और विरुद्ध आचरणों की पूरी सफ़ाई न हो तो और किसी तरह होना सम्भव नहीं।

"अतएव आज तुमको "प्रियतमा" कहकर मैंने सब संशयों को दूर कर दिया। इस सम्बोधन से हमारे-तुम्हारे प्रेम का बीज अङ्कुरित हो चला। तुमसे मेरी यही बिनती है कि तुम मेरी प्रियतमा हो, इसमें अब कुछ सन्देह न करो। मेरे कथन पर पूरा विश्वास करो। अगर तुम मेरी इस बात को मन से क़बूल कर लोगी तो मुझसे किसी संशयात्मक विषय पर कुछ पूछने का प्रयोजन न रहेगा।

"इसके अनन्तर यह पूछने का मुझे साहस नहीं होता कि तुम मुझे चाहती भी हो या नहीं। मैं पूछूँगा भी नहीं। इस मूक प्रश्न का उचित उत्तर एक न एक दिन तुम्हारा हृदय मेरे हृदय को गुप्त रीति से दे ही देगा, इसमें मुझे सन्देह नहीं। यह मैं अपने प्रेम के विश्वास से कहता हूँ। मैं अपनी योग्यता का अहङ्कार नहीं करता किन्तु मेरी साधना सार्थक क्यों न होगी?

"मैं भली भाँति समझता हूँ कि मैं जो कुछ लिख रहा हूँ वह स्वाभाविक सा नहीं जान पड़ता, बनावटी सा जान पड़ता है। जी चाहता है कि इस चिट्ठी को फाड़कर फेंक दूँ! किन्तु जो पत्र मेरी पसन्द लायक़ होगा वह अभी मुझसे लिखा न जा सकेगा। क्योंकि पत्र दो व्यक्तियों की वस्तु है, जब एक ओर से पत्र लिखा जाता है तब उसमें सब बातें ठीक-ठीक लिखते नहीं बनतीं। जिस दिन मेरे और तुम्हारे मन में कुछ अन्तर न रहेगा उस दिन वास्तविक चिट्ठी लिख सकूँगा। जब आमने-सामने का दरवाज़ा खुला रहता है तभी बेरोक हवा आती-जाती है। प्यारी कमला, नहीं कह सकता, मैं कब तुम्हारे हृदय को सम्पूर्ण रूप से उद्घाटित कर सकूँगा!

"इन बातों का निर्णय धीरे-धीरे ही होगा—घबराने की ज़रूरत नहीं। जिस दिन तुमको यह चिट्ठी मिलेगी उसके दूसरे दिन सबेरे ही मैं ग़ाज़ीपुर पहुँच जाऊँगा। तुमसे मेरा यही अनुरोध है कि ग़ाज़ीपुर आते ही मैं तुमको अपने नये मकान में देख सकूँ। हम लोग बहुत दिन मारे-मारे फिरे। अब मैं अधीर हो गया हूँ। मैं अब नये घर में प्रवेश कर हृदय की लक्ष्मी को गृह-लक्ष्मी के स्वरूप में देखूँगा। मैं तुम्हारी प्रेमपगी दृष्टि से अपने चिरसन्तप्त हृदय को शीतल करना चाहता हूँ। शायद तुम्हें वह दिन याद होगा? उस चाँदनी रात में, उस नदी के किनारे, उस निर्जन बालुकामयी भूमि पर जो तुमसे मेरी प्रथम बार भेट हुई थी। न वहाँ छत थी, न दीवाल

थी, और न भाई-बन्धु, कुल-परिवार का कोई आदमी ही था। वह मिलन घर के बिलकुल ही बाहर था। वह अब स्वप्न सा जान पड़ता है। वह असत्यवत् प्रतीत होता है। इसी लिए एक दिन सबेरे के स्निग्ध निर्मल प्रकाश में, घर के भीतर, उस मिलन को सम्पूर्ण रूप से सच कर लेने की अभिलाषा है। मैं एक बार अपने घर के द्वार पर तुम्हारी सरल सहास्य मूर्ति को देख चिरकाल के लिए अपने हृदय-पट पर अङ्कित कर लूँगा। इसके निमित्त मेरे मन में बड़ी लालसा है। प्रियतमे, मैं तुम्हारे हृदय-मन्दिर के द्वार पर अतिथि हूँ, मुझे विमुख न करना।

प्रेम-भिखारी,

रमेश"

सैंतीसवाँ परिच्छेद

अन्नपूर्णा ने कमला को उदास देख उसका जी बहलाने की इच्छा से कहा—आज तुम अपने नये बँगले में न जाओगी?

कमला—नहीं, अब वहाँ जाने की ज़रूरत नहीं।

अन्न०—घर को बिलकुल दुरुस्त कर लिया? सब चीज़ यथास्थान रख दी?

कमला—हाँ।

कुछ देर के बाद अन्नपूर्णा ने फिर आकर कमला से कहा—अगर तुम्हें एक चीज़ दूँ तो तुम मुझे क्या दोगी?

कमला—मेरे पास क्या है जो दूँगी?

अन्न०—कुछ भी नहीं है?

कमला—कुछ भी नहीं।

अन्नपूर्णा ने कमला के गाल पर हलकी चपत लगाकर कहा—"सच कहती हो। जो कुछ तुम्हारे पास था, जान पड़ता है वह एक व्यक्ति को दे चुकी हो। यह क्या है बतलाओ?" यह कहकर अन्नपूर्णा ने आँचल के भीतर से एक पत्र निकाला।

लिफ़ाफ़े पर रमेश के अक्षर देखकर कमला का मुँह विवर्ण हो गया। उसने ज़रा मुँह फेर लिया।

अ पूर्णा ने कहा—वाह! इसी का नाम नखरा है! बहुत हुआ, अब शान्त हो। मैं तुम्हारे मन की सब बात जानती हूँ। इधर तो चिट्ठी झपटकर लेने के लिए तुम मन ही मन अकुला रही हो उधर मुँह भी फेरती हो। जब तक मुँह से पत्र न माँगोगी मैं कभी न दूँगी। देखूँ, कब तक तुम धीरज धर सकती हो।

इसी समय उमा साबन के डिब्बे में रस्सी बाँधे उसे खींचती हुई वहाँ आई और बोली—मौसी!

कमला झट उसको गोद में लेकर बारम्बार उसका मुँह चूमती हुई अपने सोने के कमरे में चली गई। गाड़ी खींचने में इस तरह रुकावट होने के कारण उमा चिल्लाने लगी। किन्तु कमला ने उसे नहीं छोड़ा। उसे भीतर ले जाकर नाना प्रकार के प्रलाप-वाक्यों से वह उसका जी बहलाने की चेष्टा करने लगी।

अन्नपूर्णा ने आकर कहा—मैंने हार मानी। तुम्हारी ही जीत हुई। मैं तो इतनी देर अपने को न रोक सकती। तुम धन्य हो। तुम्हारी जैसी औरत मैंने नहीं देखी। यह लो, वृथा मैं क्यों तुम्हें सताऊँ?

यह कहकर अन्नपूर्णा उसके बिछौने पर रमेश की चिट्ठी फेंककर और उसकी गोद से उमा को लेकर चली गई।

लिफ़ाफ़े को हाथ में लेकर कमला देर तक सोचती रही। फिर उसने अछता-पछताकर लिफ़ाफ़ा खोला। चिट्ठी की

प्रथम दो-चार पंक्तियों पर दृष्टि पड़ते ही उसका मुँह लाल हो गया। लज्जा और क्रोध से उसने चिट्ठी को नीचे पटक दिया। जब कुछ देर में उसका चित्त शान्त हुआ तब उसने धरती से चिट्ठी को उठाकर पढ़ डाला। सब बातें उसकी समझ में आईं या नहीं यह भगवान् जाने, किन्तु वह चिट्ठी उसके हाथ में बोझ सी जान पड़ी। उसने फिर चिट्ठी को मरोड़कर दूर फेंक दिया। जो पुरुष मेरा स्वामी नहीं है, उसी के घर में मुझे गृहिणी बनकर रहना होगा। इसी के लिए यह आह्वान है! रमेश ने जान-बूझकर इतने दिन बाद उसका यह अपमान किया है! कमला ने ग़ाज़ीपुर आकर जो रमेश की ओर अपने हृदय को इतना अग्रसर किया था वह रमेश जानकर नहीं, बल्कि अपना पति समझकर। रमेश उसी पर भूला हुआ था, इसी लिए उस अनाथिनी के ऊपर दया करके उसने यह प्रेमपत्र लिखा है। अज्ञानतः कमला ने रमेश पर जो कुछ स्नेह का भाव प्रदर्शित किया था उसे अब वह कैसे लौटा सकेगी। यही उसके मन में भारी चिन्ता हुई। ऐसी लज्जा और सन्ताप का विषय क्यों उसके भाग्य में लिखा था। उसने जन्म लेकर तो किसी का कुछ अपराध किया न था, एकाएक ऐसा कठिन संकट क्यों उसके ऊपर आ पड़ा? गृहस्थी नाम की एक बीभत्स वस्तु उसे निगलने आ रही है, कमला इस आफ़त से क्योंकर अपने को बचा सकेगी। रमेश उसके लिए ऐसा भयानक हो उठेगा, दो दिन पहले कमला को इसका स्वप्न में भी सन्देह न था।

इसी समय द्वार के पास आकर उमेश खाँसने लगा। कमला की कुछ आहट न पाकर उसने धीरे-धीरे पुकारा—"माँ"। कमला द्वार के पास आई। उमेश ने सिर खुजलाकर कहा—श्रीपति बाबू ने लड़की के व्याह में कलकत्ते से एक भजन-मण्डली-वालों को बुलवाया है।

कमला—अच्छा तो तुम गाना सुनने जाओ।

उमेश—कल सबेरे क्या आपको कुछ फूल चाहिए?

कमला—नहीं, नहीं, फूल-ऊल की कुछ ज़रूरत नहीं?

उमेश जब जाने लगा तब कमला ने उसे पुकारकर कहा—"सुनो उमेश! तुम गाना सुनने जाते हो तो यह लेते जाओ।" यह कहकर उसने उमेश के हाथ में पाँच रुपये रख दिये।

उमेश को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसे मालूम न हुआ कि गाना सुनने के लिए पाँच रुपये देने की क्या ज़रूरत है। उसने कहा—क्या बाज़ार से आपके लिए कोई चीज़ खरीदकर ले आऊँ?

कमला—नहीं, मेरे लिए कुछ लाने की ज़रूरत नहीं। मुझे कुछ न चाहिए। यह तुम अपने पास रख लो, इसे अपने काम में लाना।

उमेश को जाते देख कमला ने फिर उसे पुकारकर कहा—उमेश, क्या तुम यही कपड़े पहने गाना सुनने जाओगे? तुम्हें लोग क्या कहेंगे?

लोग उसका ऐसा भेस देखकर हँसेंगे, उमेश इस बात को न जानता था। इसी से वह सफ़ेद धोती और कुर्ता पहनकर तमाशा देखने के लिए जाना ज़रूरी न समझता था। कमला का प्रश्न सुनकर वह कुछ न बोला, सिर्फ़ उसके होठों पर हँसी का चिह्न दिखाई दिया।

कमला ने दो जोड़ी धोतियाँ निकालकर उमेश के आगे फेंक दीं और कहा—यह ले, यही पहनकर तमाशा देखने जाना।

धोती की चौड़ी और उमदा किनार देखकर उमेश का हृदय आनन्द से उमँग उठा। उसने मारे ख़ुशी के कमला के पैरों पर माथा रखकर प्रणाम किया। फिर हँसता हुआ धीरे-धीरे वहाँ से चल दिया। उसके चले जाने पर कमला खिड़की के पास चुपचाप आँसू पोंछकर खड़ी हो गई।

अन्नपूर्णा ने घर में प्रवेश करके कहा—बहन, अपनी चिट्ठी मुझे न दिखलाओगी?

कमला से तो अन्नपूर्णा की कोई बात छिपी न थी। इसी से अन्नपूर्णा ने, इतने दिनों के उपरान्त, सुयोग पाकर यह बात कही।

कमला ने "यही तो है, देख न लो" कहकर उँगली से, ज़मीन पर पड़ी, चिट्ठी दिखा दी। अन्नपूर्णा ने आश्चर्य-युक्त होकर मन में कहा—"पति पर इतना क्रोध! अब भी इसके मन में क्रोध बना है।" उसने धरती पर से पत्र उठाकर सब

पढ़ डाला। पत्र प्रेम की बातों से परिपूर्ण है, तो भी यह पत्र किस ढँग का है कुछ समझ में नहीं आता। कोई पुरुष इस तरह अपनी स्त्री को भला चिट्ठी लिखता है! यह तो विचित्र चिट्ठी जान पड़ती है। अन्नपूर्णा ने पूछा—बहन, तुम्हारे पति कोई उपन्यास तो नहीं लिख रहे हैं?

'पति' शब्द सुनते ही कमला का चेहरा फिर उदास हो गया। उसने कहा—मैं नहीं जानती।

अन्न०—तो आज तुम अपने नये घर में जाओगी?

कमला ने सिर हिलाकर जताया—हाँ।

अन्न०—मैं आज साँझ तक ख़ुशी से तुम्हारे साथ बनी रहती, परन्तु तुम जानती ही हो, आज नरसिह बाबू की स्त्री आनेवाली हैं। तुम्हारे साथ अम्माँ जा सकती हैं।

कमला—घबराकर बोली—नहीं, नहीं, माँ के जाने की कोई ज़रूरत नहीं। वहाँ नौकर तो हई हैं।

अन्नपूर्णा ने हँसकर कहा—और तुम्हारा वाहन उमेश तुम्हारे साथ रहेगा, तुम्हें डर ही किस बात का है?

उस समय उमा कहीं से एक पेन्सिल लाकर स्लेट पर उलटी-सीधी लकीरें खींच रही थी और ख़ूब ज़ोर से चिल्ला-चिल्लाकर मनमानी भाषा का उच्चारण कर रही थी। अपनी जान में वह पढ़ रही थी। अन्नपूर्णा ने उसके हाथ से स्लेट पेन्सिल छीनकर उसकी इस साहित्य-रचना में बाधा डाल दी। इससे क्रुद्ध होकर वह बेतरह रोने-चिल्लाने लगी। तब कमला

ने उसे गोद में उठाकर कहा—चुप हो, चलो, तुझे एक बहुत बढ़िया चीज़ देती हूँ।

यह कहकर उसे अपने शयनगृह में ले जाकर बिछौने पर बिठा दिया और लाड़-प्यार करके थोड़ी ही देर में उसको राज़ी कर लिया। जब वह प्रतिज्ञात वस्तु माँगने लगी तब कमला ने अपना सन्दूक़ खोलकर एक जोड़ा सोने की ब्रेसलेट (पहुँची) निकाली। यह उमदा खिलौना पाकर उमा बहुत ख़ुश हुई। मौसी ने उसके दोनों हाथों में वे पहना दीं। ढीली पहुँची पहने, हाथों को ऊपर उठाये, मारे ख़ुशी के उछलती हुई वह अपनी माँ को दिखलाने गई। माँ उसके हाथों में सोने की पहुँची देखकर चकित हुई और झट उसके हाथ से पहुँची निकालकर कमला से बोली—तुम्हारी बुद्धि कैसी हो गई है? यह चीज़ इसके हाथ में क्यों देती हो?

अपनी माँ का यह कठोर व्यवहार देखकर उमा रोने लगी। कमला ने पास आकर अन्नपूर्णा से कहा—बहन, यह पहुँची का जोड़ा मैंने उसी को दे दिया।

अन्न०—तुम पागल तो नहीं हो गई?

कमला—मैं शपथपूर्वक कहती हूँ, यह पहुँची अब मैं न लूँगी। इसे तुड़ाकर उसी का कण्ठा उमा को बनवा देना।

अन्न०—नहीं। मैं सच कहती हूँ, तुम्हारी सी पगली औरत मैंने नहीं देखी।

यह कहकर वह कमला के गले से लिपट गई। कमला ने आँखों में आँसू भरकर कहा—बहन, तुम्हारे यहाँ से आज मैं बिदा होती हूँ। यहाँ मैं बड़े आराम से थी। ऐसा सुख मैंने अपने जीवन में कभी नहीं पाया।—वह और कुछ बोल न सकी। उसकी आँखों से आँसू टपकने लगे।

अन्नपूर्णा की आँखों में भी आँसू उमड़ आये। वह धीरज धरकर बोली—तुम एकदम इतनी अधीर क्यों हो उठीं? तुम्हारे मुँह का भाव देखने से जान पड़ता है, मानों तुम बड़ी दूर जा रही हो। जिस सुख में तुम यहाँ थीं वह कहना न होगा। मैं सब जानती हूँ। अब तुम्हारी सब विघ्न-बाधा दूर हुई, अपने घर में जाकर स्वतन्त्रता से राज्य करोगी। हम कभी संयोग से पहुँच जायँगी तो तुम यही समझोगी कि कहाँ से यह आफ़त मेरे सिर आ गई।

बिदा होते समय कमला ने अन्नपूर्णा को प्रणाम किया। अन्नपूर्णा ने आशीर्वाद देकर कहा—कल दोपहर को मैं तुम्हारे घर आऊँगी।

कमला कुछ न बोली।

नये मकान में आकर उसने उमेश को उपस्थित देखकर कहा—क्या तुम गाना सुनने न जाओगे?

उमेश—आज आप यहाँ रहेंगी। मैं आपको अकेली छोड़—

कमला—इसके लिए तुम चिन्ता न करो। तुम गाना सुनने जाओ। यहाँ रामधन है। तुम जाओ, अब देर मत करो।

उमेश—अभी तमाशा आरम्भ होने में विलम्ब है।

कमला—इससे क्या, वहाँ लड़की के ब्याह में अनेक उत्सव होते होंगे। अच्छी तरह देख न आ।

इस विषय में उमेश को अधिक उत्साहित करने की आवश्यकता न थी। जब वह जाने लगा तब कमला ने फिर उसे पुकारकर कहा—देखो, चक्रवर्तीजी के आने पर तुम—

इसके आगे वह और कुछ कहना चाहती थी, पर कह न सकी। उमेश सुनने के लिए खड़ा रहा। कमला कुछ देर सोचकर बोली—याद रक्खो, चक्रवर्तीजी तुमको हृदय से चाहते हैं। तुम्हें जब जिस चीज़ की ज़रूरत हो, उनसे माँगना। वे अवश्य देंगे। उनको मेरा प्रणाम कहना। भूलना नहीं।

उमेश इस नसीहत का कुछ अर्थ न समझ "बहुत अच्छा" कहकर चला गया।

पिछले पहर कमला को जाते देख रामधन ने पूछा—माँ जी, आप कहाँ जाती हैं?

कमला—गङ्गा-स्नान करने।

रामधन—मैं भी साथ चलूँ?

"नहीं, तुम यहीं रहकर घर की निगरानी करो।" कहकर कमला रामधन के हाथ में निष्प्रयोजन एक रुपया देकर, गङ्गातट की ओर चली गई।

अड़तीसवाँ परिच्छेद

एक दिन चार बजे के लगभग नलिनी के साथ एकान्त में चाय पीने की इच्छा से घनानन्द बाबू उसकी तलाश में कोठे पर गये। वह ऊपर के कमरे में न मिली। सोने के कमरे में जाकर देखा, वहाँ भी न थी। नौकर को बुलाकर पूछने से मालूम हुआ कि वह कहीं बाहर भी नहीं गई। तब वे हड़-बड़ाकर छत पर गये।

उस समय कलकत्ता शहर के अनेक आकार के लम्बे-चौड़े दूर तक फैले हुए मकानों की छतों पर हेमन्त ऋतु की धूप म्लान हो रही थी—सन्ध्या समय की हलकी हवा ठहर-ठहरकर अठखेलियाँ कर रही थी। ऊपरवाली छत की छाँह में चुपचाप नलिनी बैठी थी।

घनानन्द बाबू कब उसके पीछे आकर खड़े हुए, यह उसने न जाना। आख़िर घनानन्द बाबू ने जब धीरे-धीरे उसके पास आकर उसकी पीठ पर हाथ रक्खा तब वह चौंक उठी और पिता को पीछे खड़ा देख लज्जा से सिमट गई। वह चटपट उठना चाहती थी परन्तु घनानन्द बाबू उठने के पहले ही उसके पास बैठकर एक दीर्घ निःश्वास त्यागकर कहने लगे—बेटी! अगर इस समय तुम्हारी माँ जीती रहती तो तुम्हें कोई कष्ट न होने देती। बेटी!' मैं तेरे किसी भी काम न आया।

वृद्ध के मुँह से यह करुणाभरी वाणी सुनकर नलिनी मानो मूर्च्छा के भीतर से एकाएक जाग उठी। उसने एक बार पिता के मुँह की ओर देखा। उस मुँह पर स्नेह, करुणा और शोक का चिह्न एक साथ देखने में आया। इन कई दिनों में उनके चेहरे की अजब हालत हो गई है! नलिनी के लिए जो बखेड़ा खड़ा हुआ है उसके विरुद्ध वे अकेले खड़े हुए हैं, कोई उनका सहायक नहीं। कन्या के आहत हृदय के समीप बार-बार आते हैं। नलिनी को सान्त्वना देने में अपने को सर्वथा असमर्थ जान आज उन्हें उसकी माँ का स्मरण हो आया। उनके असमर्थ स्नेह की भीतरी तह से ठण्डी साँस निकलती है— आज एकाएक नलिनी के समीप मानो गाज की रोशनी में यह सब प्रकट हो गया।

कुछ देर नलिनी लज्जा से सिर नीचा किये बैठी रही, फिर उसने अपने मन के सब झंझटों को हटाकर पिता से पूछा— आपका स्वास्थ्य कैसा है?

स्वास्थ्य! स्वास्थ्य जो एक आलोच्य विषय है, यह कई दिनों से घनानन्द बाबू एकदम भूल गये थे। उन्होंने कहा— "मेरा स्वास्थ्य तो अच्छा है। अभी तुम्हारा जैसा चेहरा देखता हूँ, तुम्हारा दुर्बल शरीर देखता हूँ, उसी की बड़ी चिन्ता है। मेरा शरीर बहुत पुराना है, बुढ़ापे का समय आ गया, तो भी एक प्रकार से शरीर की हालत अच्छी है। लेकिन तुम्हारी उम्र कम है, डर लगता है कि तुम कहीं सख़्त बीमार न हो

जाओ।" यह कहकर वे धीरे-धीरे उसकी पीठ पर हाथ फेरने लगे।

नलिनी ने पूछा—अच्छा बाबूजी, माँ जब मरी थी तब मैं कै वर्ष की थी?

घनानन्द—तब तुम तीन वर्ष की बच्ची थीं। कुछ-कुछ बोलना सीख गई थीं। मुझे ख़ूब याद है, तुमने मुझसे पूछा था—"माँ कहाँ है?" मैंने कहा—"तुम्हारी माँ अपने बाप के पास गई है।" तुम्हारा जन्म होने के पूर्व ही तुम्हारे नाना संसार से चल बसे थे। तुम्हें उनके दर्शन का सौभाग्य प्राप्त न हुआ था। मेरी बात सुनकर तुम चुपचाप मेरे मुँह की ओर देखने लगीं। मैंने जो कहा, वह तुम न समझ सकीं। कुछ देर के बाद तुम मेरा हाथ पकड़कर अपनी माँ के सूने घर की ओर खींचकर ले जाने लगीं। तुम्हें विश्वास था कि मैं उस घर में जाकर तुम्हारी माता का सच्चा ठिकाना तुम्हें बता दूँगा और उससे तुम्हारी भेंट करा दूँगा। तुम समझती थीं कि तुम्हारा बाप सब कुछ जानता है; पर यह न जानती थीं कि असल बात कहने में तुम्हारा बाप भी बच्चों की भाँति अज्ञ और असमर्थ है। आज भी वह बात याद आती है। जो मैं पहले था वही अब भी हूँ। ईश्वर ने तुम्हारे बाप के मन में स्नेह दिया है, दया भी दी है; पर कुछ सामर्थ्य नहीं दिया।

यह कहकर उन्होंने अपना दहना हाथ नलिनी के मस्तक पर रक्खा।

नलिनी ने पिता के वात्सल्यभाव से पुलकित होकर कहा—माँ की मुझे बहुत ही कम याद है। कुछ-कुछ स्मरण होता है, दोपहर को वे चारपाई पर लेटकर किताब पढ़ती थीं। वह मुझे अच्छा नहीं लगता था। मैं उनके हाथ से किताब छीनकर खेलना चाहती थी।

इस तरह वार्तालाप होते-होते उस समय की अनेक बातें छिड़ गईं। माँ कैसी थी, क्या करती थी, तब क्या होता था इत्यादि बातों की आलोचना होते-होते सूर्यास्त हो गया। कलकत्ते के सब लोग अपने सायंकृत्य में लग पड़े। सिर्फ यही दोनों बाप-बेटी मिलकर छत के एक कोने में अपने दुःख-सुख की समालोचना कर रहे थे।

इसी समय ज़ीने पर एकाएक योगेन्द्र के पैरों की आहट सुनकर दोनों का वार्तालाप रुक गया। दोनों तुरन्त उठ खड़े हुए। योगेन्द्र वहाँ आया और उन दोनों को कड़ी निगाह से देखकर बोला—मालूम होता है, नलिनी की सभा अब इस छत पर ही होने लगी है।

योगेन्द्र रुष्ट हो गया था। घर में दिन-रात शोक की घटा छाई रहती थी, इससे वह घर में बहुत कम रहता था। और, इष्ट-मित्रों के घर जाता था तो वहाँ नलिनी के ब्याह की जवाब-देही में पड़ जाता था। इसलिए कहीं भी उसको चैन न था। घर-बाहर दोनों ही उसके लिए दुःखदायी हो रहे थे। वह बार-बार यही कहता था—नलिनी अब बहुत 'अति' कर

रही है, स्त्रियों को अँगरेज़ी उपन्यास पढ़ने देने से ऐसे ही बखेड़े खड़े होते हैं। नलिनी सोचती है, 'रमेश ने जब मुझे छोड़ दिया है तब मेरा जीना व्यर्थ है, मेरा हृदय टूक-टूक हो जाना चाहिए'। इसी लिए वह आज बड़े समारोह के साथ अपने हृदय को खण्ड-खण्ड करने बैठी है। नाविल (उपन्यास) पढ़कर कितनी स्त्रियाँ प्रेम के नैराश्य में अपने जीवन से हाथ धोने बैठ जाती हैं ?

योगेन्द्र के कठोर वाक्य-प्रहार से नलिनी को बचाने के लिए घनानन्द बाबू ने बड़ी शीघ्रता से कहा—"मैं नलिनी से कुछ बातें कर रहा था।" मानो वही उसको बातें करने के लिए छत पर ले आये हैं। वह अपने मन से वहाँ सभा करने नहीं आई है।

योगेन्द्र—यह क्यों ? क्या चाय की टेबल के पास बैठ-कर बातें नहीं हो सकतीं ? बाबूजी, आप नलिनी को पगली बनाने की चेष्टा कर रहे हैं ! ऐसा होगा तो फिर घर में कैसे रहेंगे ?

नलिनी चकित होकर बोली—पिताजी, क्या अभी चाय नहीं पी है ?

योगेन्द्र—चाय कवि की कल्पना नहीं है जो सूर्यास्त समय के रागरञ्जित आकाश से अपने आप टपक पड़ेगी। छत के कोने में बैठे रहने से चाय का प्याला आप ही आप न भर जायगा। भला यह बात भी कहनी पड़ेगी।

न हुआ। उसने कहा—"चलिए पिताजी, चाय पीने चलिए।" उसी घड़ी घनानन्द बाबू निद्रा न आने की बात भूलकर चाय की टेबल की तरफ़ लपके।

चायवाले कमरे में प्रवेश करते ही घनानन्द बाबू ने देखा कि वहाँ अक्षयकुमार बैठा है। इससे उनके मन में कुछ खटका हुआ। उन्होंने सोचा, नलिनी का चित्त आज कुछ प्रसन्न है, अक्षय को देखते ही उसकी तबीयत कहीं फिर ख़राब न हो जाय। पर अब तो इसका कोई उपाय नहीं है। पल भर में ही नलिनी भी वहाँ आ पहुँची। अक्षय देखते ही उठ खड़ा हुआ और बोला—योगेन्द्र, अब मैं रुख़सत होता हूँ।

नलिनी ने कहा—क्यों अक्षय बाबू! इतनी जल्दी क्या है? घर पर क्या कोई काम है? एक प्याला चाय पी लीजिए, तो जाइएगा।

नलिनी की इस अभ्यर्थना से घर के सब लोग अचम्भे में आ गये। अक्षय ने फिर आसन ग्रहण करके कहा—आपकी अनुपस्थिति में दो प्याले चाय मैं पी चुका हूँ। अगर आग्रह किया जाय तो और भी दो प्याले चाय पी सकता हूँ।

नलिनी ने मुसकुराकर कहा—चाय पीने के लिए तो किसी दिन आपसे आग्रह करना नहीं पड़ा।

अक्षय—प्रयोजन न रहने पर भी अच्छी चीज़ का मैं सहसा निरादर नहीं करता। ईश्वर ने इतनी बुद्धि मुझे दी है।

योगेन्द्र ने कहा—तुम्हारी ऐसी श्रद्धा देखकर मैं तुमको यह आशीर्वाद देता हूँ कि अच्छी चीज़ भी तुम्हें अनावश्यक समझकर कभी तुम्हारा अपमान न करे।

बहुत दिनों में आज घनानन्द बाबू की चाय की टेबल के पास बातचीत का ठाट जमा है। और दिन नलिनी, हँसी की बात निकल आने पर भी, केवल कुछ मुस्कुरा देती थी; उसकी हँसी होठों से बाहर न होने पाती थी। आज वह बात-बात में खिलखिला उठती है। वह अक्षय बाबू का ठट्ठा करके बोली—बाबूजी, अक्षय बाबू का यह अन्याय तो देखिए, आपकी गोली कई दिन से नहीं खाई फिर भी हट्टे-कट्टे बने हैं। यदि उसकी कुछ भी कृतज्ञता इनके मन में बनी रहती तो ये कम से कम सिर के दर्द का तो नाम लेते।

योगेन्द्र—इसी को कहते हैं गोली के साथ कृतघ्नता!

घनानन्द बाबू अत्यन्त प्रसन्न होकर हँसने लगे। बहुत दिनों के बाद आज उनकी गोलियों की फिर समालोचना होने लगी है। इसको वे पारिवारिक स्वास्थ्य का चिह्न जानकर निश्चिन्त हुए। उनके मन से एक बोझ उतर गया। उन्होंने कहा—इसको कहते हैं लोगों के विश्वास पर हस्तक्षेप करना। मेरी गोली खानेवाला यही एक अक्षय है सो इसे भी फोड़ने की चेष्टा हो रही है।

अक्षय ने कहा—आप इसकी चिन्ता न कीजिए। अक्षय को फोड़ लेना जरा मुश्किल है।

योगेन्द्र—सही है, फोड़ने से—जिस तरह खोटे रुपये को भुनाते—फोड़ते—समय पुलिस दस्तन्दाज़ी करती है उसी तरह इसमें भी पुलिस-केस चलने की सम्भावना है।

इस प्रकार विनोदभरी बातें होने से घनानन्द बाबू की चाय की टेबल पर से मानो बहुत दिनों का वैमनस्य-रूपी भूत भाग गया।

आज यह चाय-पान की सभा शीघ्र भङ्ग न होती, किन्तु नलिनी ने आज यथासमय बाल न सँवारे थे इसलिए वह बाल सँवारने चली गई। अक्षय भी एक ज़रूरी काम की याद आ जाने के कारण चला गया।

योगेन्द्र ने घनानन्द बाबू से कहा—बाबूजी, अब विलम्ब न कीजिए। जैसे हो, नलिनी को ब्याह दीजिए।

घनानन्द बाबू कुछ उत्तर न दे योगेन्द्र के मुँह की ओर देखने लगे। योगेन्द्र ने कहा—रमेश के साथ नलिनी का ब्याह क्यों न हुआ, इस बात पर समाज में तरह-तरह की गप्पें उड़ रही हैं। मैं कहाँ तक किसका मुँह बन्द करता फिरूँगा, मैं अकेला कितने लोगों के प्रश्नों का उत्तर दे सकूँगा। अगर सब बात ख़ुलासा कहने में कोई बाधा न होती तब तो मैं सबका मुँह-तोड़ जवाब दे देता, लेकिन नलिनी का ख़याल करके चुप हो रहना पडता है। अब युक्ति से काम निकालना होगा। उस दिन मैंने अखिलचन्द्र को ख़ूब ही फटकारा था। सुना है, वह नलिनी के विषय में जो चाहे बकता फिरता था।

अगर नलिनी का विवाह शीघ्र हो जाय तो सब बखेड़ा मिट जाय। फिर मुझे किसी से झगड़ना न पड़े। मेरी बात सुनिए, अब विलम्ब न कीजिए।

घनानन्द—ब्याह किसके साथ होगा योगेन्द्र ?

योगेन्द्र—एक व्यक्ति है। जो घटना सर्वत्र ख्यात हो चुकी है और जैसी बातें फैली हुई हैं उन्हें देखते हुए वर मिलना असम्भव है। एक अक्षय बेचारा है, उसे कोई उज़्र न होगा। उसे गोली खाने को कहिएगा तो गोली खायगा, और ब्याह करने को कहिएगा तो ब्याह करेगा।

घनानन्द—योगेन्द्र, तुम पागल तो नहीं हो गये ? अक्षय-कुमार के साथ नलिनी कभी ब्याह कर सकेगी ?

योगेन्द्र—अगर आप कुछ न बोलें तो मैं उसे राज़ी कर सकता हूँ।

घनानन्द घबराकर बोले—नहीं योगेन्द्र ! तुम नलिनी को नहीं पहचानते। तुम उसे भय दिखाकर या कष्ट देकर अस्थिर मत करो। अभी कुछ दिन उसे स्थिर रहने दो। वह बेचारी जन्म ही की दुखिया है। बहुत कष्ट भोग चुकी है। विवाह के लिए अभी बहुत समय है।

योगेन्द्र—मैं उसे कुछ भी कष्ट न दूँगा। जहाँ तक हो सकेगा, बड़ी सावधानी और कोमलता के साथ काम लूँगा। क्या आप समझते हैं, मैं बिना झगड़ा किये कोई बात बोल ही नहीं सकता ?

योगेन्द्र बहुत जल्दबाज़ आदमी है। उसी दिन सन्ध्या समय जब नलिनी ब़ाल बाँधकर बाहर आई तब योगेन्द्र ने उसे पुकारकर कहा—नलिनी, तुमसे एक बात कहनी है।

यह सुनते ही नलिनी की छाती धड़कने लगी। वह योगेन्द्र के पीछे धीरे-धीरे आकर बैठक में बैठी। योगेन्द्र ने कहा—नलिनी! बाबूजी के शरीर की अवस्था कैसी दिन पर दिन ख़राब होती जाती है, यह तुम देख ही रही हो।

नलिनी के मुँह पर कुछ उद्वेग का चिह्न दिखाई दिया। वह कुछ बोली नहीं।

योगेन्द्र—अगर विशेष यत्न न किया जायगा तो वे स.ख्त बीमार हो पड़ेंगे।

नलिनी समझ गई कि पिता के इस अस्वास्थ्य का दोष मेरे ही माथे मढ़ा जाता है। वह सिर नीचा करके धोती की किनार को खींचने लगी।

योगेन्द्र ने कहा—जो हो गई सो हो गई, "बीती ताहि बिसारि दे आगे की सुधि लेहु।" उन बातों की चर्चा करना ही हम लोगों के लिए लज्जा की बात है। अगर अब तुम बाबूजी के मन को बिलकुल स्वस्थ रखना चाहो तो जहाँ तक जल्दी हो सके, इस अप्रिय झगड़े को बिलकुल मेट डालो।

यह कहकर योगेन्द्र उत्तर पाने की आशा से नलिनी के मुँह की ओर देखने लगा।

नलिनी लज्जा से सिर झुकाये हुए बोली—इन बातों के लिए बाबूजी को मैं कभी नाराज़ करूँ, यह सम्भव नहीं।

योगेन्द्र—माना कि तुम उन्हें नाराज़ न करोगी, किन्तु इससे और लोग तो चुप न रहेंगे।

नलिनी—इसके लिए मैं क्या कर सकती हूँ, आप ही कहिए।

योगेन्द्र—चारों ओर जो ये भाँति-भाँति की ग़प्पें उड़ रही हैं, उनके रोकने का एक मात्र उपाय है।

योगेन्द्र ने जो उपाय मन में सोच रक्खा है उसका अनुभव कर नलिनी झट बोल उठी—कुछ दिन के लिए बाबूजी को लेकर पश्चिम प्रदेश में भ्रमण करना क्या लाभदायक न होगा? दो-चार महीने इधर-उधर घूम आने से सब बातों पर धूल पड़ जायगी।

योगेन्द्र—इससे भी जैसा चाहिए फ़ायदा न होगा। तुम्हारे मन में कोई दुःख नहीं है, इस बात का जब तक बाबूजी को पूरा निश्चय न होगा तब तक उनके मन में बर्छी सी छिदती रहेगी। उतने दिन वे किसी प्रकार बेफ़िक्र नहीं हो सकते।

नलिनी की आँखों में आँसू भर आये। उसने झट आँखें पोंछकर कहा—तो मुझसे क्या करने को कहते हो?

योगेन्द्र—मैं जानता हूँ कि वह बात सुनने में तुम्हें कठोर मालूम होगी, परन्तु यदि तुम सब तरफ़ की भलाई चाहती हो तो अब अपना विवाह कराने में विलम्ब न करो।

नलिनी कुछ न बोली, चुपचाप बैठी रही। योगेन्द्र अपनी अधीरता को न रोक सका। वह बोला—नलिनी! तुम कल्पना के द्वारा मामूली बात को बड़ी करने ही को अच्छा समझती हो। तुम्हारे व्याह के सम्बन्ध में जैसा कुछ गोलमाल हुआ है वैसा कितनी ही स्त्रियों के विवाह में होता है परन्तु वह झट-पट निवट जाता है। जो ऐसा न हो, जब बात-बात में घर-घर उपन्यास बनने लगें तब फिर काहे को किसी की जान बचे। 'ज़िन्दगी भर के लिए संन्यासिनी बनकर छत पर बैठी-बैठी आकाश की ओर ताकती रहूँगी और अपने हृदय-मन्दिर में उस मिथ्याचारिता की स्मृति को स्थापित कर पूजा किया करूँगी'—दुनिया के आगे ऐसी कविता लिखने में तुम्हें लज्जा न लगे तो न सही; पर हम तो किसी को मुँह दिखाने लायक़ न रह जायँगे। इसलिए भले घर में विवाह करके इस काव्य को समाप्त कर दो।

दुनिया के सामने काव्य बन जाने में कितनी शर्म है, इसके मर्म को नलिनी भली भाँति जानती थी। इसी लिए योगेन्द्र का यह चिढ़ाना उसके हृदय में छुरी की तरह लगा। वह बोली—भैया, मैं कब कहती हूँ कि मैं कौमार व्रत धारण कर संन्यास ग्रहण करूँगी?

योगेन्द्र—अगर यह नहीं चाहती तो व्याह कर लो। स्वर्गपुरी के राजा इन्द्र को छोड़ तुम्हें दूसरा व्यक्ति पसन्द न आवे तब तो संन्यास व्रत ग्रहण करना ही ठीक है। संसार

में इच्छा के अनुसार सब पदार्थ किसे प्राप्त होते हैं? जिसे जो मिल जाता है उसी के अनुसार अपने मन को सङ्कुठित कर सुखी होना चाहिए। मैं तो यही कहता हूँ। मनुष्य का यथार्थ महत्त्व इसी में है।

नलिनी ने मर्माहत होकर कहा—भैया, आप ऐसी पैनी बात क्यों बोलते हैं! मैंने आपसे पसन्द या नापसन्द की कोई बात कभी कही है?

योगेन्द्र—कही तो नहीं है, पर मैं कभी-कभी देखता हूँ कि तुम निष्कारण या किसी अन्याय्य कारण-वश अपने किसी हितैषी बन्धु पर तुरन्त बिगड़ बैठती हो, उस पर विद्वेष भाव प्रकट करने में तुम ज़रा भी कुण्ठित नहीं होतीं। किन्तु यह बात तुम्हें स्वीकार करनी पड़ेगी कि अब तक जितने लोगों से तुम्हारी मुलाक़ात हुई है उनमें एक ही श़ख्स ऐसा है जो सुख-दुःख और मान-अपमान में सदा एक सा बर्ताव रखता है। इस कारण मैं उस पर मन ही मन बड़ी श्रद्धा करता हूँ। वह तुमको सुखी करने के लिए प्राण तक दे सकता है। यदि ऐसा स्वामी चाहो तो वह कहीं खोजना न होगा और काव्य का नायक चाहो तो—

नलिनी खड़ी होकर बोली—यह आप क्या कहते हैं? मुझसे ऐसी बात न कहिए! बाबूजी मुझे जो आज्ञा देंगे—जिसके साथ विवाह करने को कहेंगे—उसका मैं अवश्य पालन करूँगी। यदि उनकी बात न मानूँगी तो आप भले ही काव्य की बात छेड़िएगा।

योगेन्द्र ने तुरन्त कोमल स्वर में कहा—बहन, क्रोध मत करो। तुम जानती ही हो, जब मेरी तबीयत बिगड़ती है तब मेरा दिमाग़ ठीक नहीं रहता। जो मेरे जी में आता है, बक जाता हूँ। मैं बचपन से ही तुम्हें देखता आता हूँ। क्या मैं नहीं जानता कि लज्जा का अंश तुममें कितना अधिक है और बाबूजी पर तुम्हारी कितनी श्रद्धा और भक्ति है।

यह कहकर योगेन्द्र घनानन्द बाबू में कमरे में गया। योगेन्द्र अपनी बहन के साथ न मालूम कैसी ज़बर्दस्ती कर रहा है, इस बात को घनानन्द बाबू अपने कमरे में बैठे मन ही मन सोचकर उद्विग्न हो रहे थे; और उन दोनों में क्या बात-चीत हो रही है, यह जानने के लिए वे वहाँ जाना ही चाहते थे। इतने में योगेन्द्र उनके सामने जा खड़ा हुआ। घनानन्द उसका मुँह देखने लगे।

योगेन्द्र ने कहा—नलिनी ब्याह करने को राज़ी है। आप समझते होंगे, मैंने ज़िद करके उसे राज़ी किया है पर आप ऐसा ख़याल न करें। अब आप एक बार उससे कह भर दीजिए, बस फिर वह अक्षय के साथ ब्याह करने में कोई उज्र. न करेगी।

घनानन्द—मुझे कहना पड़ेगा ?

योगेन्द्र—आप न कहेंगे तो क्या वह स्वयं आकर कहेगी कि "मैं अक्षयकुमार से ब्याह करूँगी ?" अच्छा, आप अपने मुँह से कहने में शरमाते हों तो मुझे हुक्म दीजिए, मैं आपकी आज्ञा उसे सुना दूँ।

घनानन्द बाबू व्यग्र होकर बोले—नहीं, नहीं, जो बात मुझे कहनी होगी मैं स्वयं कहूँगा। इतनी जल्दी करने की क्या ज़रूरत है? मेरी राय में तो कुछ दिन और ब्याह-शादी की बात मुलतवी रक्खो।

योगेन्द्र—नहीं बाबूजी, अब विलम्ब करने में कुशल नहीं। इस तरह बहुत दिन न चलेगा। अनेक विघ्न उपस्थित होंगे।

योगेन्द्र की ज़िद के आगे घर में किसी का कुछ वश नहीं चलता। वह जिस काम पर अड़ जाता है उसे किये बिना नहीं छोड़ता। इस कारण घनानन्द मन ही मन उससे डरते थे। उन्होंने बात टाल देने की इच्छा से कहा—अच्छा, मैं कह दूँगा।

योगेन्द्र—कहने का आज ही अच्छा मौक़ा है। वह आपकी आज्ञा के इन्तज़ार में बैठी है। जो हो, आज ही इस विषय का फ़ैसला कर डालिए।

घनानन्द सोचने लगे। योगेन्द्र ने कहा—बाबूजी, सोचने से काम न चलेगा। एक बार नलिनी के पास चलिए।

घनानन्द—तुम यहीं रहो; मैं अकेला उसके पास जाता हूँ।

योगेन्द्र—बहुत अच्छा, मैं यहीं बैठता हूँ, आप जाइए।

घनानन्द बाबू ने नलिनी की बैठक को बाहर से झाँककर देखा, भीतर अँधेरा था। उनके पैरों की आहट पाकर वह कोच पर से, हड़बड़ाकर उठी और करुणा-भरे स्वर में बोली—बाबूजी, रोशनी बुझ गई है। आप बैठिए, मैं बेहरे को पुकारकर बत्ती जलवाये देती हूँ।

घनानन्द बाबू समझ गये कि कमरे में अँधेरा क्यों है। इसलिए उन्होंने कहा—'बत्ती जलाने की कोई ज़रूरत नहीं।' वे टटोलकर नलिनी के पास जा बैठे।

नलिनी—बाबूजी! आप अपने शरीर की कुछ परवा नहीं करते?

घनानन्द—बेटी! इसका विशेष कारण है। शरीर की दशा अच्छी है, यही समझकर कुछ यत्न नहीं करता। तुम अपनी तन्दुरुस्ती की ओर एक बार क्यों नहीं ध्यान देतीं?

नलिनी अनमनी होकर बोली—आप लोग एक स्वर से यही बात कहते हैं, यह बड़ा अन्याय है। मैं तो बहुत अच्छी हूँ। मुझे शरीर की अवहेला करते कभी देखा हो तो कहिए। अगर आप समझें कि मेरे शारीरिक स्वास्थ्य के लिए कुछ करना आवश्यक है तो वह आप मुझसे कहते क्यों नहीं? जो आपकी आज्ञा होगी वह मैं अवश्य करूँगी। मैंने आपकी आज्ञा के विरुद्ध कभी कोई काम किया है?—अन्तिम बात कहते समय नलिनी का कण्ठ-स्वर और भी आर्द्र सुन पड़ा।

घनानन्द—नहीं, कभी नहीं। तुमसे कभी कुछ कहना भी नहीं पड़ा। तुम मेरी सन्तान हो, इससे तुम मेरे हृदय की बात जानती हो। तुम मेरे मन का आशय समझकर ही काम करती हो। यदि मेरा आशीर्वाद व्यर्थ न हो तो ईश्वर तुम्हें अवश्य चिरसुखी करेंगे।

नलिनी—पिताजी! क्या अब आप मुझे अपने पास न रक्खेंगे?

घनानन्द—क्यों न रक्खूँगा?

नलिनी—जब तक भाभी नहीं आती तब तक तो मैं आपको किसी भी तरह नहीं छोड़ सकती। मैं न रहूँगी तो आपकी सेवा कौन करेगा?

घनानन्द—मेरी सेवा की क्या पूछती हो? मेरा वैसा भाग्य कहाँ जो तुम मेरी सेवा के लिए मेरे पास रह सको।

नलिनी—"यहाँ बड़ा अँधेरा है, चिराग़ ले आती हूँ" यह कहकर वह पासवाले कमरे से लालटेन ले आई। पिता से कहा—इधर कई दिनों से गड़बड़ रहने के कारण सन्ध्या समय आपको समाचारपत्र नहीं सुना सकी। आज का अख़बार आपको सुनाऊँ?

"अच्छा, तुम ज़रा बैठो, मैं अभी आकर सुनता हूँ।" यह कहकर घनानन्द बाबू योगेन्द्र के पास गये। मन में यह सोचकर आये थे कि योगेन्द्र से कहेंगे "आज बात नहीं हो सकी, फिर किसी दिन होगी।" किन्तु ज्योंही वे कमरे में आये त्योंही योगेन्द्र ने पूछा—"कहिए, क्या हुआ? ब्याह की बात आपने उससे कही?" उन्होंने उत्तर दिया, "हाँ कही है।" उन्हें इस बात का डर था कि जो मैं ऐसा न कहूँगा तो फिर यह स्वयं जाकर कहीं उस बेचारी को सतावे नहीं।

योगेन्द्र—वह आपकी बात पर ज़रूर राज़ी हो गई होगी?

घनानन्द—हाँ, एक तरह से राजी कर आया हूँ।

योगेन्द्र—तो मैं अक्षय बाबू से कह आऊँ?

घनानन्द व्यग्र होकर बोले—नहीं, नहीं, अभी अक्षय से कुछ न कहो। इतनी शीघ्रता करने से सब बात बिगड़ जायगी। अभी किसी से कुछ कहने की ज़रूरत नहीं। बल्कि इस बीच हम सब एक बार पच्छिम घूम आते हैं। इसके बाद देखा जायगा।

योगेन्द्र इसका कुछ उत्तर दिये बिना ही चला गया। वह कन्धे पर एक चादर रखकर सीधा अक्षय बाबू के घर पहुँचा। अक्षयकुमार उस समय अँगरेजी महाजनी हिसाब की बही लिये 'बुक-कीपिंग' सीख रहा था। योगेन्द्र ने उसके काग़ज़-पत्तर अलग हटाकर कहा—यह सब पीछे होगा। अभी अपने ब्याह का दिन स्थिर करो।

अक्षय ने चकित होकर कहा—अजी कहते क्यां हो?

उनतालीसवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन नलिनी सबेरे उठकर जब बाहर आई तब देखा, घनानन्द बाबू अपने सोने के कमरे की खिड़की के पास एक आराम-कुरसी पर चुपचाप बैठे हैं। कमरे में बहुत असबाब न था। एक चारपाई और एक कोने में एक आलमारी थी। सामने दीवाल में घनानन्द बाबू की स्वर्गीय धर्मपत्नी का बहुत पुराना चित्र टँगा था और उसके पास ही उनकी स्त्री के हाथ के बनाये पशम के गुलूबन्द आदि रक्खे थे। स्त्री की जीवित अवस्था में आलमारी में जो शौक़ की सामग्री जिस तरह रक्खी थी वह अब भी उसी तरह रक्खी है।

नलिनी, पिता के पीछे, उनके पके हुए बाल चुनने के बहाने माथे पर उँगली फेरती हुई बोली—चलिए, आज ज़रा सबेरे-सबेरे चाय पी आवें। फिर आपके कमरे में बैठकर कल की तरह आपकी पुरानी बातें सुनूँगी। वे बातें मुझे बहुत अच्छी लगती हैं।

नलिनी के विषय में घनानन्द बाबू की ज्ञान-शक्ति इन दिनों ऐसी प्रखर हो उठी है कि आज उसके चाय पीने के हेतु इतनी जल्दी करने का कारण समझने में उन्हें कुछ भी विलम्ब न लगा। कुछ ही देर में अक्षय भी चाय की टेबल के पास आ पहुँचेगा। उसके आने के पहले ही नलिनी झटपट चाय पीकर पिता के कमरे में एकान्त में आश्रय लेना चाहती है—

उसके इस आशय को घनानन्द बाबू तुरन्त समझ गये। व्याध के भय से जैसे हरिणी डरा करती है वैसे ही उनकी लड़की भी सदा भयभीत रहती थी, यह जानकर उनके मन में बड़ा दुःख होता था।

उन्होंने नीचे जाकर देखा, नौकर ने अब तक चाय नहीं बनाई। इसलिए वे उस पर बहुत ख़फ़ा हुए। नौकर ने यह समझाने की वृथा चेष्टा की कि आज नियत समय से पूर्व ही चाय की तलब हुई है, पर उसकी चेष्टा व्यर्थ हुई। वे उसकी बात अनसुनी कर कहने लगे, "मेरे नौकर नव्वाब हो गये हैं। उनको जगाने के लिए और नौकर की ज़रूरत हुई है।" इस तरह वे कितनी ही बातें बक गये।

नौकर झटपट चाय तैयार कर उनके सामने ले आया। घनानन्द बाबू और दिन जिस तरह बात-चीत करते-करते बड़ी शान्ति से चाय का रसास्वादन करते हुए चाय पीते थे आज वैसा न करके एक ही दम में प्याला ख़ाली करने लगे। नलिनी कुछ आश्चर्य करके बोली—बाबूजी, क्या आज आपको कहीं बाहर जाना है?

घनानन्द—नहीं तो। जाड़े के दिनों में गरम चाय एकदम पी लेने से तुरन्त पसीना निकल आता है। इससे शरीर हल्का हो जाता है।

लेकिन घनानन्द बाबू के शरीर में पसीना आने के पहले ही योगेन्द्र अक्षय को लिये वहाँ आ पहुँचा। आज अक्षय का वेष-

विन्यास और दिनों की अपेक्षा विलक्षण था। हाथ में चाँदी की मूठवाली छड़ी, और सीने के एक ओर घड़ी की सुनहरी चेन झूल रही थी। उसके बायें हाथ में एक बादामी काग़ज़ में लपेटी हुई किताब थी। और दिन अक्षय टेबल के जिस भाग में बैठता था, आज वह वहाँ न बैठा। आज वह नलिनी के पास ही एक कुरसी खींचकर बैठ गया और मुस्कुराकर कहने लगा—आज आपकी घड़ी कुछ तेज़ चलती है!

नलिनी ने न अक्षय के मुँह की ओर देखा और न उसकी बात का कुछ जवाब ही दिया। घनानन्द ने नलिनी से कहा—"बेटी! ऊपर तो चलो, मेरी गरम पोशाक को एक बार धूप दिखा दो।" योगेन्द्र ने कहा—बाबूजी! धूप तो कहीं भागी नहीं जा रही है। फिर इतनी जल्दी क्यों? नलिनी, अक्षय को एक प्याला चाय दो। मुझे भी चाहिए, पर पहले अतिथि का सत्कार होना उचित है।

अक्षय ने हँसकर नलिनी से कहा—कर्तव्य-पालन के लिए आपने इतना बड़ा आत्मत्याग देखा है? ये तो दूसरे सर फ़िलिप सिडनी हैं!

नलिनी ने अक्षय की बात पर कुछ भी ध्यान न देकर दो प्यालों में चाय भरी; एक योगेन्द्र को दिया और दूसरा प्याला अक्षयं के आगे ज़रा बढ़ाकर घनानन्द बाबू के मुँह की ओर देखा। घनानन्द ने कहा—धूप तेज़ हो जाने पर कष्ट होगा। अब चलो!

योगेन्द्र—कपड़ों को फिर कभी धूप दिखा देना! अक्षय बाबू आये हैं—

घनानन्द बाबू कुछ तीव्र होकर बोले—तुम सब बातों में दख़ल देते रहते हो। तुम अपनी ज़िद के आगे दूसरे का भला-बुरा कुछ नहीं समझते। दूसरे को मर्मान्तिक कष्ट देकर भी अपनी बात रखने में बहादुरी समझते हो। मैं बहुत दिनों तक चुपचाप सहन करता रहा पर अब मुझसे बरदाश्त न हो सकेगा। चलो बेटी! कल से हम-तुम ऊपरवाले कमरे में ही चाय पियेंगे।

यह कहकर घनानन्द बाबू नलिनी को साथ ले ऊपर जाने को उद्यत हुए। नलिनी ने गम्भीरतापूर्वक कहा—बाबूजी, ज़रा और बैठिए, आज आपने अच्छी तरह चाय नहीं पी। अक्षय बाबू, क्या मैं पूछ सकती हूँ कि काग़ज़ में मोड़ा हुआ यह क्या रहस्य है?

"सिर्फ़ पूछ ही नहीं सकतीं, बल्कि आप उसे खोल भी सकती हैं।" यह कहकर अक्षय ने वह काग़ज़ में लिपटी हुई किताब नलिनी के आगे कर दी।

नलिनी ने खोलकर देखा, वह 'टेनीसन' का काव्य था। बहुत बढ़िया जिल्द थी। देखते ही वह भौंचक सी हो रही। उसका चेहरा ज़र्द हो गया। ठीक ऐसी ही पुस्तक—और ऐसी ही जिल्दवाली—वह रमेश से पहले उपहार में पा चुकी है। वह आज भी नलिनी के सोने के कमरे की दराज़ में, बड़े आदर के साथ, गुप्त रीति से रक्खी है।

योगेन्द्र ने कुछ हँसकर कहा—"रहस्य अब भी प्रकट नहीं हुआ।" फिर उसने किताब का सादा पेज खोलकर उसके हाथ में दिया। उस पर लिखा था—"श्रीमती नलिनी देवी के प्रति अक्षय श्रद्धा का उपहार।"

उसी दम नलिनी के हाथ से किताब छुटकर नीचे गिर गई और इस पर कुछ लक्ष्य दिये बिना ही वह पिता से बोली—चलिए बाबूजी।

दोनों कमरे से बाहर हो गये। योगेन्द्र की आँखें मारे क्रोध के लाल हो गईं। शरीर थर-थर काँपने लगा। उसने कहा—अब मैं यहाँ नहीं रह सकता। यहाँ का रहना अब मेरे लिए कठिन हो गया। मुझे कहीं स्कूल की नौकरी मिल जाय तो फ़ौरन् यहाँ से चला जाऊँ।

अक्षय—भाई, तुम वृथा क्रोध कर रहे हो। मैंने तो तभी तुमसे कह दिया था कि तुम भूलते हो, तुमने ठीक नहीं समझा। बार-बार तुम्हारे आश्वासन देने और आग्रह करने पर मैं अपने सिद्धान्त से विचलित हुआ। परन्तु मैं तुमसे सच कहता हूँ कि नलिनी का मन कभी मेरे अनुकूल नहीं हो सकता। वह कभी मुझे अङ्गीकार न करेगी, यह तुम निश्चय जानो। उस आशा को छोड़ दो। अब ऐसा यत्न करो जिसमें नलिनी रमेश को भूल जाय।

योगेन्द्र—कर्तव्य की बात तो तुमने कह दी, पर इसका कुछ उपाय भी तो होना चाहिए।

अक्षय—मुझे छोड़ क्या संसार में वर होने योग्य कोई और युवा पुरुष नहीं है? जैसे हो सके, एक अच्छा सा वर खोजना चाहिए जिसे देखकर झटपट धूप में कपड़ा डालने की उनकी इच्छा प्रबल न हो उठे।

योगेन्द्र—वर तो ऐसी वस्तु नहीं है जो इच्छा करते ही मिल जाय।

अक्षय—तुम थोड़े ही में घबराकर क्यों इस तरह निरुद्यम हो बैठते हो? "उद्यमेन हि सिद्ध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः।" मैं तुमको योग्य वर का पता बता सकता हूँ, परन्तु शीघ्रता करने से कोई काम न होगा। पहले ही से विवाह का प्रस्ताव सुनाकर कन्या और वर को सशङ्कित करने से काम न चलेगा। पहले धीरे-धीरे दोनों में घनिष्ठता होने दो। फिर दोनों के मन का भाव समझकर ब्याह का दिन स्थिर करना।

योगेन्द्र—उपाय तो तुमने बहुत अच्छा बताया, अब वर का भी नाम बता दो।

अक्षय—तुम उन्हें अच्छी तरह नहीं जानते। सिर्फ़ देखा होगा। वही कमलनयन डाक्टर।

योगेन्द्र—कमलनयन बाबू!

अक्षय—चौंकते क्यों हो? उनके कारण ब्रह्म-समाज में बड़ी हलचल मची है। मची रहने दो, क्या इससे ऐसे उपयुक्त वर को हाथ से छोड़ दोगे?

योगेन्द्र—अगर मेरे किये होता तो मैं कभी उन्हें हाथ से न जाने देता। तथापि यत्न करूँगा। कमलनयन बाबू ब्याह कराने को राज़ी हो जायँगे?

अक्षय—आज ही हो जायँगे, यह मैं नहीं कह सकता, किन्तु समय पाकर हो क्या नहीं सकता? तुम मेरी बात सुनो। कल कमलनयन बाबू की वक्तृता होगी। उस वक्तृता में नलिनी को ले चलो। उनकी वक्तृता बड़ी मनोहारिणी होती है। स्त्रियों का चित्त आकर्षित करने के लिए वक्तृता-शक्ति बड़े काम की चीज़ है। हाय! अज्ञ स्त्रियाँ यह नहीं समझतीं कि वक्ता पति की अपेक्षा श्रोता पति कहीं अच्छा होता है।

योगेन्द्र—अच्छा, कमलनयन के कुल-शील का परिचय भी तो दो।

अक्षय—देखो योगेन्द्र, यदि उनके कुल-शील के इतिहास में कुछ खोट भी हो तो उसके लिए तुम विशेष चिन्तित न होना। एक छोटा सा नुक्स होने से बड़े-बड़े मूल्यवान् पदार्थ सुलभ हो जाते हैं। मैं तो उसे लाभ ही समझता हूँ।

अक्षय ने कमलनयन के कुल-शील का जो वर्णन किया उसका संक्षिप्त वृत्तान्त इतना ही है कि कमलनयन के बाप राजवल्लभ फ़रीदपुर ज़िले के एक छोटे से ज़मींदार थे। तीस वर्ष की उम्र में उन्होंने ब्राह्मधर्म की दीक्षा ले ली। परन्तु उनकी स्त्री ने किसी तरह स्वामी का वह नूतन धर्म स्वीकार न किया, और आचार-विचार के सम्बन्ध में वह बड़ी सावधानी

से पति के साथ स्वतन्त्रता की रक्षा करके चलने लगी। उसका यह व्यवहार राजवल्लभ को अच्छा नहीं लगा। उनके पुत्र कमलनयन ने धर्मप्रचार के उत्साह और वक्तृत्व-शक्ति के द्वारा युवावस्था प्राप्त होते न होते ब्रह्म-समाज में ख़ासा नाम पैदा कर लिया। फिर वे सरकारी डाक्टर के पद पर नियुक्त होकर वङ्ग देश के अनेक स्थानों में गये और हर जगह सच्चरित्रता और चिकित्सा की निपुणता तथा अच्छे कामों के अनुष्ठान से अपना सुयश फैलाने लगे।

इसी बीच एक नई घटना हो गई। वृद्धावस्था में राजवल्लभ एक विधवा के साथ व्याह करने के लिए सहसा उन्मत्त हो उठे। कोई उन्हें रोक न सका। वे कहने लगे, मेरी वर्तमान स्त्री सच्ची सहधर्म्मिणी नहीं है। जिसके साथ धर्म में, मत में, व्यवहार में और मानसिक विचार में मिलान है, हृदय की एकता है, उसको स्त्री-रूप में ग्रहण न करें तो बड़ा अन्याय होगा।

बस राजवल्लभ ने, सर्वसाधारण से धिक्कारे जाने पर भी, उस विधवा के साथ हिन्दू मत की विधि से व्याह कर ही लिया।

इसके अनन्तर कमलनयन की माता घर छोड़कर काशी जाने को उद्यत हुई। कमलनयन को जब यह हाल मालूम हुआ तब वे डाक्टरी छोड़कर रङ्गपुर से चले आये। उन्होंने कहा—माँ, मैं भी तुम्हारे साथ चलूँगा!

माँ ने रोकर कहा—बेटा, मेरे साथ तुम सबों का किसी भी बात में मेल नहीं। मेरा आचार-व्यवहार तुम्हारे व्यवहार

से भिन्न है। ऐसी अवस्था में तुम मेरे साथ जाकर क्यों वृथा कष्ट सहोगे ?

कमलनयन ने कहा—माँ, अब तुम्हारा और मेरा व्यवहार एक ही सा रहेगा।

कमलनयन ने अपनी पति-परित्यक्त अपमानित माता को सुखी रखने का दृढ़ सङ्कल्प किया। वह माता के साथ काशी गया। माँ ने कहा—बेटा, क्या मुझे बहू का मुँह न दिखाओगे ?

कमलनयन बड़े सङ्कट में फँसा, बोला—अभी क्या ज़रूरत है। समय आने पर देखा जायगा।

माँ ने समझा, बेटा बहुत कुछ त्याग स्वीकार कर साथ देने आया है। किन्तु ब्रह्म-समाज के बाहर ब्याह करना नहीं चाहता। तब उसने व्यथित होकर कहा—वत्स ! मेरे लिए तुम संन्यासी होकर रहो, यह कभी नहीं हो सकता। तुम्हारी जहाँ ब्याह करने की इच्छा हो, करो, मैं कभी उसमें बाधा न दूँगी।

कमलनयन ने दो-एक दिन सोच-विचारकर कहा—माँ, तुम जैसी चाहती हो वैसी ही बहू लाकर मैं तुम्हारी सेवा में नियत कर दूँगा। मैं ऐसी बहू कभी घर में न लाऊँगा जो तुम्हारी बात न सुने और तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध काम कर तुम्हें दुःख दे।

यह कहकर कमलनयन अच्छी कन्या की खोज में अपने देश को गया। इसके बाद उसके इतिहास में कुछ गड़बड़ है।

कोई कहता उसने देश आकर चुपचाप एक अनाथ बालिका के साथ ब्याह किया था, परन्तु ब्याह होते ही स्त्री समाप्त हो गई। कोई-कोई इसमें सन्देह करते हैं। अक्षय का विश्वास है कि विवाह करने जाकर उसने अन्त में इन्कार कर दिया था।

जो हो, अक्षय की राय है कि, कमलनयन अब जिसे पसन्द करके ब्याह करेगा, उसी को उसकी माता प्रसन्नतापूर्वक बहू बना लेगी। नलिनी सदृश गुणवती कुमारी कमलनयन को कहाँ मिलेगी! नलिनी का कोमल मधुर स्वभाव है, वह अपनी सास की यथेष्ट सेवा-शुश्रूषा करेगी, कभी उसे कोई तकलीफ़ न देगी। उसकी आज्ञा मानकर सब काम करेगी। कमलनयन बाबू दो ही एक दिन में नलिनी के शील-स्वभाव से भली भाँति परिचित हो जायँगे। इसलिए मेरी राय यही है कि किसी तरह दोनों का परस्पर परिचय करा दिया जाय।

चालीसवाँ परिच्छेद

अक्षय के चले जाने पर योगेन्द्र दोमंज़िले पर गया। देखा, ऊपर के कमरे में घनानन्द बाबू बैठे नलिनी से बातें कर रहे हैं। योगेन्द्र को देख घनानन्द ज़रा लज्जित हुए। आज चायवाले कमरे में उनका स्वाभाविक शान्त भाव नष्ट होकर एकाएक क्रोध प्रकट हुआ था, इसका भी उनके मन में खेद था। इसी से उन्होंने विशेष उत्कण्ठा के साथ कहा—आओ योगेन्द्र, बैठो।

योगेन्द्र—बाबूजी, आपने बाहर सभा-सोसाइटियों में जाना-आना एकदम छोड़ दिया है। दोनों जने दिन-रात घर के भीतर बैठे रहते हो। क्या यह ठीक है?

घनानन्द—बेटा, मैंने तो इसी तरह घर के कोने में बैठकर जीवन बिता दिया। संयोग ही से बाहर जाता हूँ। नलिनी को कहीं बाहर ले जाना भी कठिन हो गया है।

नलिनी—बाबूजी, आप मुझे दोष क्यों देते हैं? आप मुझे जहाँ ले जाना चाहते हों, ले चलिए।

नलिनी अपने स्वभाव के प्रतिकूल बर्ताव करके भी साबित करना चाहती है कि मैं किसी शोक के कारण घर में पड़ी रहना नहीं चाहती। संसार में जो कुछ हो रहा है उन सभी बातों में मुझे उत्कण्ठा है—उत्साह है।

योगेन्द्र—बाबूजी, कल एक मीटिंग है। वहाँ नलिनी को भी ले चलिए।

घनानन्द बाबू जानते थे कि नलिनी बहुत दिनों से भीड़-भाड़ में जाना पसन्द नहीं करती। किसी सभा में प्रवेश करते हुए उसे सङ्कोच होता है। इसी से वे योगेन्द्र की बात का कुछ जवाब न देकर नलिनी की ओर देखने लगे।

नलिनी सहसा अस्वाभाविक उत्साह दिखाकर बोली—मीटिंग! वहाँ कौन लेक्चर देगा?

योगेन्द्र—कमलनयन बाबू।

घनानन्द—कमलनयन?

योगेन्द्र—उनकी वक्तृता बड़ी चित्ताकर्षक होती है। ऐसा प्रभावशाली व्याख्यान देनेवालों की संख्या भारत में बहुत कम है। इनके जीवन का इतिहास सुनने से बड़ा आश्चर्य होता है। ऐसा त्याग! ऐसी दृढ़ता! ऐसी कर्त्तव्यपरायणता बहुत ही कम देखने में आती है। ऐसे मनुष्य का दर्शन होना दुर्लभ है।

दो घण्टे पूर्व साधारण जनश्रुति के सिवा कमलनयन के सम्बन्ध में योगेन्द्र कुछ न जानता था। अक्षय के मुँह से जो उसने संक्षिप्त वृत्तान्त सुना था उसी को ख़ूब बढ़ा-चढ़ाकर कह दिया।

नलिनी ने कुछ आग्रह दिखाकर कहा—तो बाबूजी चलिए न। मैं भी आपके साथ चलूँगी।

नलिनी के इस उत्साह-वाक्य पर घनानन्द ने पूरा विश्वास न किया, तो भी वे मन ही मन कुछ प्रसन्न हुए। उन्होंने सोचा, अगर नलिनी अनिच्छापूर्वक भी इस तरह समाज में जाया-आया करेगी तो शीघ्र उसका मन स्वस्थ हो जायगा। मनुष्यों से हिलना-मिलना ही मनुष्य के मानसिक दुःख का महौषध है। उन्होंने कहा—अच्छा तो योगेन्द्र, कल हम सबको ठीक समय पर मीटिंग में ले चलना। परन्तु कमलनयन बाबू के सम्बन्ध में तुम क्या जानते हो? उनके विषय में अनेक लोगों के मुँह से अनेक प्रकार की बातें सुनी हैं।

जो लोग कमलनयन के विषय में तरह-तरह की ग़प्पें उड़ाते हैं पहले उन लोगों को योगेन्द्र ने ख़ूब गालियाँ दीं, फिर कहा—जो लोग धर्म के विरोधी हैं, पाषण्डी हैं, वे समझते हैं कि भगवान् ने उन्हें बात-बात में दूसरे के प्रति अविचार और दूसरे की निन्दा करने का पट्टा लिख दिया है। मानो एक यही काम करने के लिए वे पैदा हुए हैं। इन धर्म-व्यवसायियों से बढ़कर संकीर्णहृदय और दुनिया भर की निन्दा करनेवाला संसार में और कोई नहीं।—यह कहते-कहते योगेन्द्र अत्यन्त उत्तेजित हो उठा।

योगेन्द्र को शान्त करने के लिए घनानन्द बार-बार कहने लगे—तुम ठीक कहते हो, तुम्हारा कहना सही है। दूसरे के दोषों की आलोचना करते-करते हृदय संकीर्ण हो जाता है, बुद्धि संशयात्मक हो जाती है और हृदय नीरस हो जाता है।

योगेन्द्र—बाबूजी ! यह बात आप मुझ पर लक्ष्य करके तो नहीं कहते ? किन्तु मेरा स्वभाव पाखण्डियों का सा नहीं है। मैं भला भी कहता हूँ और बुरा भी। जो कुछ मुझे कहना होता है, वह मुँह पर साफ़-साफ़ कह देता हूँ। इससे कोई ख़ुश हो चाहे नाराज़ हो, मैं कुछ परवा नहीं करता। यह तो नक़्द सौदा है।

घनानन्द ने बड़ी व्यग्रता के साथ कहा—योगेन्द्र, तुम पागल तो नहीं हो गये ? मैं तुम पर लक्ष्य करके क्यों कहूँगा ? क्या मैं तुमको पहचानता नहीं ?

इसके उपरान्त योगेन्द्र ने कमलनयन की प्रशंसा शुरू कर दी। फिर कहा—माँ को सुखी करने के लिए कमलनयन बड़ी नियम-निष्ठा के साथ काशी-सेवन कर रहे हैं। इसी लिए, वे उनकी निन्दा करते हैं जिन्हें आप अनेक लोगों में गिनते हैं। कोई कुछ भी कहे किन्तु मैं तो इसके लिए कमलनयन को सराहता ही हूँ। नलिनी, तुम्हारी क्या राय है ?

नलिनी—मैं भी तो यही ठीक समझती हूँ।

योगेन्द्र—नलिनी अच्छा ही कहेगी, यह मैं जानता था। बाबूजी को सुखी करने के लिए नलिनी कुछ स्वार्थत्याग करने का अवसर पाकर प्रसन्न होती है, यह मैं भली भाँति जानता हूँ।

घनानन्द ने स्नेहभरी दृष्टि से नलिनी की ओर हँसकर देखा। उसने लज्जा से सिर नीचा कर लिया।

इकतालीसवाँ परिच्छेद

सभा विसर्जन होने के बाद घनानन्द बाबू जब नलिनी के साथ घर लौटे तब भी कुछ दिन था। चाय पीने के लिए बैठकर घनानन्द बोले—"आज निःसन्देह मुझे बड़ा हर्ष हुआ।" इससे अधिक वे कुछ न बोल सके। उनके मन में नये भाव का स्रोत बह रहा था।

आज चाय पीने के उपरान्त नलिनी धीरे-धीरे ऊपर चली गई। घनानन्द बाबू ने इस पर कुछ लक्ष्य न किया। उनका ध्यान अन्यत्र था।

आज की सभा में जिस डाक्टर की वक्तृता हुई थी वह एक अद्भुत युवा पुरुष है। युवावस्था में भी मानो शैशवकाल की निर्मल शोभा उसके मुखकमल पर छाई थी। उसकी सुकुमारता और प्रसन्नता देखते ही बनती थी। उसके मधुर भाषण में अद्भुत चमत्कार था। जी चाहता था कि हज़ार कान से उसकी वक्तृता सुनें। उसके हृदय का भाव भी कैसा पवित्र झलकता था जैसे गङ्गा की धार। गम्भीरता का भी अभाव न था।

उसकी वक्तृता का विषय था "त्याग"। उसने कहा था—संसार में जो लोग कुछ त्याग नहीं करते वे कुछ नहीं पाते। स्वार्थ-त्याग करने ही का नाम पुरुषार्थ है। ऐसे हमें जो

कुछ मिल जाता है वह कुछ पूरा-पूरा मिलना नहीं है। त्याग करके जो कुछ हम पा सकें वही यथार्थ प्राप्त करना है। वही हमारा वास्तविक धन है। जो हमारी सच्ची सम्पत्ति है, उसे हम हाथ से जाने दें, उसे हम खो दें तो हमारा अभाग्य है। जो लोग परोपकार के हेतु जितना ही आत्मत्याग करते हैं उतना ही अतुल धन दिन पर दिन उनके आगे सञ्चित होता है। जिस मनुष्य में जितनी त्याग की क्षमता है वह उतना ही अधिक सम्पत्तिमान् है। त्याग के द्वारा ही प्रकृत धन को अधिक परिमाण में प्राप्त करने की सामर्थ्य मनुष्य के चित्त में है। जो कुछ हम दें उसके सम्बन्ध में यदि हम नत होकर हाथ जोड़कर कहें—"मैंने दिया अपने त्याग का दान, अपने दुःख का दान, अपने आँसुओं का दान" तो फिर क्षुद्र ही महत् हो जाय, अनित्य को नित्यता प्राप्त हो जाय, और जो हमारे व्यवहार की मामूली सामग्री थी वह पूजा की सामग्री बनकर हमारे अन्तःकरण के देव-मन्दिर में रत्न-भाण्डार में सञ्चित होती रहे।

ये बातें आज नलिनी के हृदय-रूपी आकाश में बादल की तरह छा गई हैं। वह छत पर आकाश के नीचे चुपचाप बैठी इन्हीं बातों पर विचार कर रही है। उसका मन आज पूर्ण है, समस्त आकाश और संसार उसके लिए परिपूर्ण है।

सभा से लौटते समय योगेन्द्र ने कहा—अक्षय, तुमनें सचमुच बड़े योग्य वर का पता बताया है। यह तो संन्यासी जान पड़ता है। इसकी आधी बातें भी मेरी समझ में नहीं आईं।

अक्षय—रोगी की हालत देखकर ही औषध की व्यवस्था की जाती है। नलिनी रमेश के ध्यान में डूबी रहती है। उस ध्यान को संन्यासी के सिवा हमारे सदृश साधारण मनुष्य नहीं तोड़ सकेंगे। जब वक्तृता हो रही थी तब क्या तुमने नलिनी के चेहरे पर लक्ष्य न दिया था?

योगेन्द्र—हाँ, देखा था। उसका मुँह देखने से स्पष्ट विदित हुआ कि उसे बहुत अच्छा मालूम होता था परन्तु वक्तृता अच्छी लगने ही से यह न समझ लेना कि वह वक्ता के गले में वरमाला डाल देगी।

अक्षय—यही वक्तृता क्या हम लोगों के मुँह से सुनने में अच्छी मालूम होती? योगेन्द्र, क्या तुम नहीं जानते कि तपस्वियों के ऊपर स्त्रियों का विशेष झुकाव होता है। संन्यासी के लिए पार्वती ने तपस्या की थी, कालिदास ने यह बात काव्य में लिखी है। मैं तुमसे सच कहता हूँ, तुम देवलोक से क्यों न कोई वर लाकर नलिनी के आगे खड़ा कर दो, वह रमेश के साथ मन ही मन उसको तौलेगी, रमेश की तुलना में कोई न ठहरेगा। सब उसकी आँखों में हल्के जँचेंगे। कमलनयन साधारण मनुष्य नहीं है। इसके साथ तुलना की बात ही नलिनी के मन में न आवेगी। और किसी युवक को नलिनी के सम्मुख करने से वह तुम्हारे उद्देश्य को तुरन्त समझ जायगी और उसका हृदय विद्रोही हो जायगा। अगर कमल-नयन को किसी कौशल से यहाँ ला सको तो नलिनी के मन

में किसी तरह का सन्देह न होगा। इसके बाद क्रमशः उस पर श्रद्धा उत्पन्न होने से, संभव है, किसी दिन नलिनी की फूलों की टोकरी में से वरमाला निकलवा ली जाय।

योगेन्द्र—कौशल करना मैं नहीं जानता। कह देना मेरे लिए सहज है। किन्तु सच पूछो तो वर मुझे पसन्द नहीं।

अक्षय—देखो योगेन्द्र! तुम अपनी ज़िद के आगे सब बातों को मटियामेट मत कर डालना; सब गुण एक जगह नहीं मिलते। जिस तरह हो, नलिनी के मन से रमेश की चिन्ता दूर कर देनी चाहिए। यह नहीं हो सकता कि तुम ज़बर्दस्ती उसके दिल में से रमेश को बाहर निकाल दो। मेरे विचार के अनुसार चलोगे तो यह काम होना कुछ कठिन नहीं है।

योगेन्द्र—तुम जो कहो, परन्तु कमलनयन को मैं एक प्रकार से मूर्ख ही समझता हूँ। ऐसे आदमी से नाता जोड़ने में डर लगता है। एक विपत्ति से छुटने जाकर- दूसरी आफ़त में फँसना होगा।

अक्षय—भाई! तुम अपने दोष से आप ही दुःख पा रहे हो। डाक्टर को देखकर तुम्हें डर होता है। रमेश के सम्बन्ध में पहले तुम्हारा अन्धविश्वास था। तुम्हारी समझ में वैसा लड़का कहीं था ही नहीं। तुम कहा करते थे, 'छल-कपट किसे कहते हैं रमेश जानता ही नहीं। दर्शनशास्त्र में तो वह दूसरा शङ्कराचार्य ही है। साहित्य में वह इस उन्नीसवीं शताब्दी के भीतर पुरुषरूप में सरस्वती का अवतार ही है।'

परन्तु मैं पहले ही उसे ताड़ गया था। मैंने इसी उम्र में ऐसे ढेर के ढेर अत्युच्च आदर्शवाले पुरुष देखे हैं। परन्तु मुझे बोलने की कोई सन्धि न थी। तुम लोग मेरे सम्बन्ध में जानते थे कि ऐसा अयोग्य, अपात्र व्यक्ति केवल महात्माओं से ईर्ष्या करना ही जानता है, इसमें योग्यता ही क्या है। अस्तु, इतने दिन बाद अब तुम कुछ-कुछ समझने लगे हो कि महापुरुषों की दूर से भक्ति करना अच्छा है, परन्तु उनके साथ बहन को ब्याह देना निरापद नहीं है। किन्तु जब "कण्टकेनैव कण्टकम्" यही एकमात्र उपाय है तब इस बात को लेकर कहाँ तक गुण-दोषों की समालोचना करोगे।

योगेन्द्र—हम लोगों के पहले ही तुमने रमेश को पहचान लिया, यह बात हज़ार बार कहो तो भी मैं विश्वास न करूँगा। उस समय तुम स्वभावतः रमेश को फूटी आँखों देखना नहीं चाहते थे। यह तुम्हारी असाधारण बुद्धि का लक्षण मैं नहीं मान सकता। जो हो, युक्ति का प्रयोजन हो तो तुम करो, वह काम मुझसे न होगा। असल बात यह कि कमलनयन को मैं पसन्द नहीं करता।

योगेन्द्र और अक्षय दोनों जब घनानन्द बाबू के चाय पीने के कमरे में पहुँचे तब उन्होंने देखा कि नलिनी घर के दूसरे द्वार से बाहर जा रही है। अक्षय समझ गया कि नलिनी ने खिड़की से झाँककर हमें रास्ते में आते देख लिया है। वह ज़रा हँसकर घनानन्द के पास आकर बैठ गया। प्याले में

चाय भरकर उसने कहा—कमलनयन जो कुछ कहते हैं हृदय से कहते हैं, इसलिए उनकी बात सहज ही सबके हृदय में गड़ जाती है। उनकी प्रभावशालिनी वक्तृता से किसका हृदय आकृष्ट नहीं होता ?

घनानन्द—निःसन्देह उसमें विशेष योग्यता है।

अक्षय—केवल योग्यता ही नहीं, ऐसा सच्चरित्र कहीं देखने में नहीं आता।

योगेन्द्र यद्यपि अक्षय के षड्यन्त्र में शामिल था तथापि उससे न रहा गया। वह बोल उठा—ओफ्! सच्चरित्रता की बात मत कहना। सच्चरित्र महात्माओं की सङ्गति से भगवान् हमारी रक्षा करें।

योगेन्द्र ने कल इसी कमलनयन की भूरि-भूरि प्रशंसा की थी और जो लोग इसके सम्बन्ध में खोटी-खरी बातें करते थे उन्हें निन्दक कहकर गालियाँ दी थीं!

घनानन्द—योगेन्द्र! यह क्या कहते हो। राम-राम! ऐसी बात मुँह से न निकालो। जो बाहर से देखने में अच्छे मालूम होते हैं वे भीतर से भी प्रायः अच्छे होते हैं, इस बात पर विश्वास कर मैं ठगा भले ही जाऊँ पर तो भी अपनी अल्प बुद्धि के गौरव-रक्षार्थ साधुओं के ऊपर सहसा सन्देह नहीं कर सकता। कमलनयन बाबू ने जो बातें अपनी स्पीच में कही हैं, वे किसी और की कही हुई बातें नहीं हैं। उन्होंने अपनी आध्यात्मिक शक्ति के द्वारा जो बातें सोच निकाली हैं वे मुझे

बिलकुल नई जान पड़ीं। जो कपटाचारी है वह असली सत्य चीज़ कहाँ से देगा? जैसे सोना बनाया नहीं जाता वैसे ही ये बातें भी बनाई नहीं जातीं। मैं चाहता हूँ, खुद उनके पास जाकर उन्हें धन्यवाद दे आऊँ।

अक्षय—मुझे डर है, इनका पार्थिव शरीर कहीं शीघ्र नष्ट न हो जाय।

घनानन्द घबराकर बोले—क्यों, क्या इनका शरीर अच्छा नहीं रहता?

अक्षय—अच्छा कैसे रहेगा? दिन-रात अपने क्रिया-कर्म में लगे रहते हैं, कुछ समय बचा तो वह शास्त्रचिन्ता ही में कट जाता है। शरीर के प्रति तो वे कभी ध्यान ही नहीं देते।

घनानन्द—यह बड़ा अन्याय है। ऐसे उपयोगी शरीर को नष्ट कर देने का अधिकार हमको नहीं है। यदि कमलनयन बाबू मेरे पास रहते तो थोड़े ही दिनों में ज़रूर ही मैं उनके स्वास्थ्य की व्यवस्था कर देता। असल में स्वास्थ्य-रक्षा के कुछ नियम हैं, जिनमें प्रधान—

योगेन्द्र चुप न रह सका। वह उनकी बात काटकर बीच ही में बोल उठा—बाबूजी, आप क्यों वृथा इतनी चिन्ता कर रहे हैं। कमलनयन बाबू तो ख़ूब हृष्ट-पुष्ट हैं। उनका दिव्य शरीर देखकर आज मुझे अच्छा ज्ञान हो गया कि साधुता स्वास्थ्य के लिए हितकर है। मैं भी चाहता हूँ कि कुछ दिन साधुता कर देखूँ।

घनानन्द—सुनो योगेन्द्र! अक्षय का कहना असङ्गत नहीं जान पड़ता। उसने जो कहा है, वह कुछ असम्भव नहीं। हमारे देश में बड़े-बड़े नामी आदमी थोड़ी ही उम्र में मर जाते हैं। वे अपने शरीर की उपेक्षा करके देश की बहुत बड़ी हानि करते हैं। इसलिए जहाँ तक हो सके, इस बात को रोकना चाहिए। योगेन्द्र, तुम कमलनयन को जैसा समझ रहे हो वह वैसा नहीं। वह सच्चा साधु है। उसमें आध्यात्मिक बल है। उसे अभी से सावधान कर देना चाहिए, जिसमें वह स्वास्थ्य की उपेक्षा न करे।

अक्षय—मैं उन्हें आपके पास बुला लाऊँगा। यदि आप उन्हें अच्छी तरह समझा दें तो कदाचित् वे समझ जायँ। मेरा अनुमान है, आपने जो मूलासव मुझको परीक्षा के समय दिया था वह अद्भुत बलकारक है! जो लोग सदा मानसिक शक्ति से काम लेते रहते हैं उनके लिए ऐसी अच्छी दवा और नहीं। यदि आप एक बार कमलनयन बाबू को—

योगेन्द्र हठात् उठ खड़ा हुआ और बोला—अक्षय, तुम मुझे बैठने न दोगे। लो, मैं यह चला।

बयालीसवाँ परिच्छेद

घनानन्द बाबू का शरीर जब पहले अच्छा था तब वे तरह-तरह की डाक्टरी और आयुर्वैदिक दवाओं का बराबर व्यवहार करते थे। अब उन्हें औषध-सेवन करने का उतना उत्साह नहीं है। वे अब अपनी अस्वस्थता का कभी किसी के आगे कुछ ज़िक्र भी नहीं करते, वे तो उसके छिपाने की चेष्टा करते हैं।

आज वे जब बेवक्त आराम-कुरसी पर लेटे ऊँघ रहे थे तब ज़ीने पर किसी के आने की आहट सुनकर नलिनी सिलाई के सामान को गोद से नीचे रख अपने भाई (योगेन्द्र) को साव-धान करने के लिए दरवाज़े तक गई। देखा, योगेन्द्र के साथ-साथ कमलनयन बाबू आ रहे हैं। उसे सामने से भागकर दूसरे कमरे में जाते देख योगेन्द्र ने पुकारकर कहा—नलिनी, डाक्टर बाबू आये हैं, आओ इनसे परिचय करा दें।

नलिनी ठहर गई। कमलनयन ने उसके मुँह की ओर देखे बिना, दृष्टि नीची किये ही, नमस्कार किया। घनानन्द जाग उठे और नलिनी को पुकारा। वह उनके पास जाकर धीरे से बोली—कमलनयन बाबू आये हैं।

योगेन्द्र के साथ कमलनयन को घर में आते देख घनानन्द बाबू हड़बड़ाकर उठे और आदरपूर्वक उन्हें आगे से ले आये

और उमँगकर बोले—आज मेरा बड़ा सौभाग्य है। आपने मेरे घर को पवित्र कर दिया। नलिनी, तुम कहाँ जाती हो, यहीं बैठो। कमलनयन बाबू! यह मेरी लड़की है। हम दोनों उस दिन आपकी वक्तृता सुनने गये थे। सुनकर बहुत .खुश हुए। आपने जो यह कहा था कि हमें जो कुछ मिला है उसे हम कभी खो नहीं सकते और जो यथार्थ में मिला नहीं है उसी को गँवा सकते हैं—इस बात का अर्थ बहुत गम्भीर है—क्यों नलिनी? वास्तव में किस वस्तु को हमने अपना लिया है और कौन वस्तु अभी अपनाने को है—इसकी परीक्षा तभी होती है जब वह हमारे हाथ में नहीं रहती। डाक्टर बाबू, आपसे मेरा एक अनुरोध है, आप कभी-कभी यहाँ आकर, आलोचना कर जाया करें तो मेरा बड़ा उपकार हो। हम अब प्रायः कहीं नहीं जाते, संयोग ही से कहीं आना-जाना होता है। आप जभी आवेंगे, मुझे और इस लड़की को यहीं देखेंगे।

कमलनयन लज्जा से सिकुड़ी हुई नलिनी के मुँह की ओर एक बार देखकर बोले—"मैंने जो अपनी वक्तृता में बड़ी-बड़ी बातें कही हैं उससे आप मुझे गम्भीर प्रकृति का मनुष्य न समझ लें। उस दिन स्कूल के विद्यार्थियों ने नहीं माना। वे मुझे धर-पकड़कर ले गये। इसी से मीटिंग में कुछ कह दिया। किसी का अनुरोध टालने की मुझमें क्षमता नहीं है। किन्तु मैं सभा में इस ढङ्ग का लेक्चर दे आया हूँ कि वे अब दूसरी

मैं इस तरह की नवाबी करना नहीं चाहता कि किसी का अनादर कर उसे नष्ट कर डालूँ। जो श़ख्स बना नहीं सकता वह बिगाड़ने का अधिकारी भी नहीं।

घनानन्द—बहुत ठीक कहा। आपने इसी तरह की कुछ बातें उस दिन अपनी वक्तृता में भी कही थीं।

योगेन्द्र—आप बैठिए। मैं जाता हूँ, एक काम है।

कमलनयन—योगेन्द्र बाबू! मुझे क्षमा कीजिएगा। आप सत्य समझिए, किसी की प्रतिष्ठा भङ्ग करने का मेरा स्वभाव नहीं। अच्छा तो मैं भी चलता हूँ। कुछ दूर तक आपके साथ-साथ जाऊँगा।

योगेन्द्र—नहीं-नहीं, आप बैठिए। मेरे व्यवहार पर आप कुछ ध्यान न दीजिए। मैं कहीं देर तक चुपचाप बैठा नहीं रह सकता। मेरा स्वभाव ही ऐसा है।

घनानन्द—वह ठीक कहता है। कमलनयन बाबू! आप योगेन्द्र के लिए कुछ शङ्का न कीजिए। उसका स्वभाव बड़ा विचित्र है। उसका जाना-आना उसकी इच्छा पर निर्भर है। उसे बैठा रखना बड़ा कठिन है।

योगेन्द्र के चले जाने पर घनानन्द ने पूछा—कहिए, आप अभी कहाँ ठहरे हैं?

कमलनयन ने हँसकर कहा—मैं कहाँ का नाम बताऊँ। कहीं स्थिर होकर ठहरा होता तो बताता। मेरी जान-पहचान के बहुत लोग हैं। वे जिधर चाहते हैं, मुझे खींच ले जाते हैं।

मुझे भी यह बुरा नहीं लगता। किन्तु मनुष्य को शान्त भाव से रहने की भी बड़ी आवश्यकता है। इसी से योगेन्द्र बाबू ने मेरे लिए अपने मकान के पास ही एक घर का प्रबन्ध कर दिया है। अच्छा एकान्त स्थान है।

इस संवाद से घनानन्द ने बड़ी .खुशी ज़ाहिर की। किन्तु यदि वे नलिनी की ओर लक्ष्य करके देखते तो समझते, नलिनी का चेहरा कुछ देर के लिए वेदना से विवर्ण हो गया। इसी पासवाले कमरे में रमेश रहता था।

इतने में चाय तैयार होने की ख़बर पाकर सब एक साथ चाय पीने के लिए नीचे आये। घनानन्द ने नलिनी से कहा—बेटी! कमलनयन बाबू को एक प्याला चाय दो।

कमलनयन—नहीं, क्षमा कीजिए, मैं चाय नहीं पीता।

घनानन्द—एक प्याला पीने में क्या हर्ज है। अगर चाय पीने की आदत न हो तो कुछ मेवा और मिठाई खाकर जल ही पी लीजिए।

कमलानयन—नहीं साहब, मुझे क्षमा कीजिए।

घनानन्द—आप तो डाक्टर हैं। आपसे मैं अधिक क्या कहूँ। मध्याह्न-भोजन के तीन-चार घण्टे बाद चाय के बहाने थोड़ा सा गरम जल पीना हाज़मे के लिए विशेष उपकारी है। अभ्यास न हो तो आपके लिए थोड़ी सी पतली चाय तैयार करा दी जाय।

कमलनयन ने तुरन्त ही नलिनी का चेहरा देखकर समझ लिया कि उसने चाय पीने में मेरा सङ्कोच देख कुछ अन्दाज़ कर लिया है और उसी विषय में मन ही मन सोच-विचार कर रही है। तब उसी दम कमलनयन बाबू ने नलिनी की ओर देखकर कहा—आप जो मन में सोच रही हैं वह ठीक नहीं है। आप यह न समझें कि मैं आपकी इस टेबिल से नफ़रत करता हूँ। मैं पहले ख़ूब चाय पीता था। चाय की गन्ध से अब भी मेरा चित्त उत्सुक होता है। आप लोगों को चाय पीते देख मैं विशेष आनन्दित हो रहा हूँ। परन्तु यह बात शायद आप न जानती होंगी कि मेरी माँ अत्यन्त आचार-विचार करती हैं। मुझे छोड़ उनके सच्चा आत्मीय कोई नहीं है। आचार-विरुद्ध कोई काम करके मैं उनके पास कैसे जा सकूँगा? इसलिए मैंने चाय पीना छोड़ दिया है। किन्तु आप लोग जो चाय पीकर सुख पा रहे हैं, उसका अंश मैं भी ले रहा हूँ। आपके आतिथ्य से मैं आप्यायित हुआ।

इसके पूर्व कमलनयन की बातचीत से नलिनी मन ही मन चिढ़ रही थी। वह समझती थी कि कमलनयन अपना ठीक-ठीक परिचय उनके निकट प्रकट नहीं करता; वह केवल बातें बनाकर अपने को छिपाने की चेष्टा कर रहा है। नलिनी को मालूम न था कि प्रथम परिचय में कमलनयन सङ्कोच करना बिलकुल नहीं छोड़ सकता। इसी से नये आदमियों के यहाँ वह, अपने स्वभाव के विरुद्ध, ज़बर्दस्ती प्रायः गम्भीर

बन बैठता है। इसमें अपने मन की स्वाभाविक बात कहने में भी बेसुरा जँच जाता है। यह उसे स्वयं खटकता है। इसी से आज जब योगेन्द्र उकताकर खिसकने लगा तब उसी के साथ कमल-नयन एक धिक्कार का अनुभव करके खिसकना चाहता था।

किन्तु कमलनयन ने जब अपनी माता की बात कही तब नलिनी से श्रद्धा-पूर्वक उसके मुँह की ओर देखे बिना न रहा गया और माता का नाम लेते ही कमलनयन के मुँह पर जो एक निश्छल भक्ति का भाव उदित हुआ उसे देखकर नलिनी का हृदय द्रवित हो उठा। उसकी इच्छा हुई कि कमलनयन की माता के सम्बन्ध में वह उससे कुछ पूछे, किन्तु लज्जा के मारे कुछ न पूछ सकी।

घनानन्द बाबू झट बोल उठे—अहा! अगर यह बात मैं पहले से जानता होता तो कभी आपसे चाय पीने का अनुरोध न करता। माफ़ कीजिएगा।

कमलनयन ने ज़रा हँसकर कहा—मैं चाय न पी सका इसलिए आपके स्नेह के अनुरोध से भला वञ्चित क्यों रहूँ?

कमलनयन के चले जाने पर नलिनी अपने पिता के साथ ऊपर गई। वहाँ दोनों जने कमरे में बैठे। नलिनी मासिक पत्रिका से अच्छे लेख चुनकर पिता को पढ़कर सुनाने लगी। सुनते ही सुनते घनानन्द बाबू को नींद आ गई। कुछ दिन से उनके शरीर में सुस्ती आ गई है।

तेंतालीसवाँ परिच्छेद

कुछ ही दिनों में कमलनयन के साथ घनानन्द बाबू का परिचय घनिष्ठ हो गया। नलिनी ने पहले समझा था कि कमलनयन के सदृश लोगों से केवल आत्मज्ञान-सम्बन्धी विषय का ही उपदेश मिल सकता है। वह यह बात सोच भी नहीं सकी कि ऐसे ज्ञानी मनुष्य के साथ सामान्य विषय में साधारण मनुष्य की भाँति बातें की जा सकती हैं। कलनयन हास्य-विनोद की बातों से कुछ-कुछ दूर रहते थे।

एक दिन घनानन्द और नलिनी के साथ कमलनयन बाबू बातें कर रहे थे। ऐसे समय योगेन्द्र आकर, कुछ उत्तेजित भाव से, बोला—बाबूजी! आपको मालूम नहीं, आजकल समाज के कितने ही लोग हम लोगों को कमलनयन बाबू के शिष्य कहने लगे हैं। इसी पर प्रदीप के साथ आज मेरा ख़ूब झगड़ा हो गया।

घनानन्द ने मुस्कुराकर कहा—इसमें लज्जा की बात तो मैं कुछ नहीं देखता। जहाँ सभी गुरु हैं, चेला कोई भी नहीं, उस दल में सम्मिलित होते मुझे अवश्य संकोच होता है। वहाँ उपदेश देने की गड़बड़ में उपदेश पाने की आशा नहीं रहती।

कमलनयन—मैं भी आपही के दल में हूँ। हम लोगों का दल चेलों का दल है। जहाँ हम लोगों को कुछ सीखने की सम्भावना रहती है वहीं हम लोग गठरी लेकर दौड़ जाते हैं।

योगेन्द्र ने अधीर होकर कहा—नहीं, नहीं, बात अच्छी नहीं। कमलनयन बाबू! कोई आपका मित्र या आत्मीय न हो सकेगा। जो आपके पास जायगा वही आपका चेला कहा जाने लगेगा। यह बदनामी हँसी में उड़ा देने की नहीं। न जाने आप क्या-क्या किया करते हैं। यह सब छोड़ दीजिए।

कमलनयन—बतलाइए, मैं क्या किया करता हूँ।

योगेन्द्र—सुना है कि आप प्राणायाम करते हैं, सबेरे सूर्य की ओर घण्टों देखा करते हैं, खान-पान के सम्बन्ध में नाना प्रकार के आचार-विचार करते हैं। इस कारण लोगों से आप एक तरह अलग से हो गये हैं।

योगेन्द्र की इस भद्दी बात से नलिनी ने व्यथित होकर सिर झुका लिया। कमलनयन ने हँसकर कहा—योगेन्द्र बाबू, दस लोगों में मिलकर न रहना अवश्य दोष है। मैं नहीं चाहता कि यह दोष मुझमें रहे। किन्तु तलवार का क्या सभी अंश म्यान में रहता है? क्या कोई आदमी दलबन्दी से अलग नहीं रहता? तलवार के जिस अंश को म्यान के भीतर रहना चाहिए उस विषय में सभी तलवारों में मतैक्य है—किन्तु मूठ में तो कारीगर की इच्छा और निपुणता से तरह-तरह की कारीगरी रहा करती है। यही बात मनुष्य

के सम्बन्ध में भी समझिए। परन्तु यह जानकर आश्चर्य होता है कि मैं सबकी दृष्टि बचाकर चुपचाप जो कर्म घर के भीतर करता हूँ वह कैसे लोगों को मालूम हो जाता है, और लोग उस पर आलोचना क्यों करते हैं।

योगेन्द्र—कदाचित् आपको यह बात मालूम नहीं कि जिन लोगों ने संसार की उन्नति का संपूर्ण भार अपने ऊपर ले रक्खा है वे दूसरों के घर में कहाँ क्या होता है, इसका पता लगाना भी अपना कर्तव्य समझते हैं। जो ख़बर उन्हें नहीं मिलती उसे पूर्ण कर लेने की शक्ति भी उनमें है। ऐसा न हो तो दुनिया में सुधार का काम कैसे चले। और एक बात यह है कि, दस लोग जो काम नहीं करते वह छिपकर किया जाय तो भी प्रकट हो जाता है। जो काम सभी करते हैं उस पर कोई दृक्पात नहीं करता। आप यहीं क्यों नहीं देखते, छत पर बैठकर जो आप जप, तप, न्यास, ध्यान करते हैं वह नलिनी की नज़र से भी छिपा नहीं रहा। वह बाबूजी से सब बातें कह रही थी। उसने तो आपके सुधार का भार ग्रहण नहीं किया है।

नलिनी का मुँह लाल हो गया। वह मर्माहत होकर कुछ बोलने को थी कि कमलनयन ने कहा—आप कुछ भी संकोच न करें; अगर आपने छत पर घूमने जाकर साँझ-सबेरे मेरा नित्य कृत्य देख लिया है तो इसके लिए क्या आपको कोई दोषी बनावेगा? आँख का धर्म है, देखने से यदि आप दोष-भागी हों तो इस दोष से अछूता कोई भी नहीं।

घनानन्द—नलिनी आपके नित्य-कर्म के विषय में कुछ आपत्ति प्रकट न करके श्रद्धापूर्वक आपकी साधन-प्रणाली के सम्बन्ध में मुझसे कुछ पूछ रही थी।

योगेन्द्र—मैं ये बातें नहीं जानता। हम लोग इस संसार में जिस सीधी-सादी चाल से जा रहे हैं, इसमें किसी तरह की विशेष असुविधा नहीं देख पड़ती। गुप्त रीति से अद्भुत साधन करके कुछ विशेष लाभ होगा, यह मेरी समझ में नहीं आता, बल्कि उससे तो मन का सामञ्जस्यभाव नष्ट होता है और लोग झक्की हो जाते हैं। आप मेरी बात से क्रोध न करें। मैं अत्यन्त साधारण मनुष्य हूँ। मैं संसार में मध्यम श्रेणी में हूँ। जो किसी तरह ऊँचे आसन पर जा बैठते हैं, वहाँ तक हम लोगों की हाज़िरी पहुँचाने का एकमात्र उपाय उन्हें ढेला फेककर मारना है। मेरे जैसे असंख्य लोग हैं। इसलिए यदि आप हम सबों को छोड़कर ऊँचे आसन पर जा बैठेंगे तो आपको असंख्य ढेलों की मार सहनी पड़ेगी।

कमलनयन—ढेले भी अनेक प्रकार के होते हैं। कोई अलग गिरता है और कोई शरीर को स्पर्श करता है। परन्तु उनसे बचने के भी अनेक उपाय हैं। अगर कोई कहे कि यह आदमी पागल है, जो काम न करना चाहिए वही करता है, लड़कपन करता है, तो कोई हानि नहीं। किन्तु जब कहे कि यह गोसाईंगिरी करता है, योगसाधन करता है, गुरु बनकर चेलों का संग्रह करता फिरता है तब उस बात को हँसी में

उड़ाने के लिए जितनी हँसी की आवश्यकता है उतनी मिलना मुशकिल है।

योगेन्द्र—मैं फिर आपसे विनय करता हूँ। आप मेरी बात का बुरा न मानें। आप छत पर जाकर जो जी में आवे किया कीजिए, मैं उसमें बाधा देनेवाला कौन? मैं तो इतना ही कहता हूँ, कि साधारण सीमा के भीतर रहने से कोई बात नहीं रहती। सब लोग जैसे चलते हैं वैसे ही चलना काफ़ी है। नई चाल चलने ही से लोगों की भीड़ उमड़ पड़ती है। चाहे वे गाली दें या भक्ति करें, उससे कुछ आता-जाता नहीं—किन्तु इस तरह भीड़ में रहकर जीवन बिताने में मज़ा ही क्या है?

कमलनयन—योगेन्द्र बाबू, आप चले कहाँ? मुझको मेरे घर की छत से नीचे उतारकर बिलकुल सर्वसाधारण के सामने खड़ा करके भागने से न बनेगा?

योगेन्द्र—आज आपके साथ यथेष्ट वार्तालाप हुआ। अब ज़रा घूम आऊँ।

योगेन्द्र के चले जाने पर नलिनी सिर झुकाकर टेबुल के ढकने की झालर पर अकारण अत्याचार करने लगी। उस समय यदि उसका चेहरा ध्यान से देखा जाता तो उसकी आँखों में अवश्य आँसू भरे मिलते।

नलिनी ने प्रतिदिन कमलनयन के साथ बातचीत करते-करते अपने हृदय की दीनता देख ली। कमलनयन के मार्ग

का अनुसरण करने के लिए वह व्यग्र हो उठी। विपद् की मारी बेचारी नलिनी जब बाहर कोई अवलम्ब ढूँढ़ने पर भी न पाती थी तब कमलनयन ने उसको मानों एक नया संसार दिखला दिया। उसका मन कुछ दिनों से ब्रह्मचारिणी की भाँति कठोर नियम-पालन के लिए उत्सुक था क्योंकि नियम मन के लिए एक दृढ़ अवलम्बन होता है। इसके सिवा शोक सिर्फ़ मन के भीतर ही रहना नहीं चाहता, वह बाहर भी किसी कृच्छ्र साधन के बीच अपने को सच्चा जँचाने की चेष्टा करता है। नलिनी अब तक यह कुछ कर न सकी थी। लोग देखकर क्या कहेंगे, इसी लोक-लज्जा से उद्वेग को मन के भीतर किसी तरह दबाये चली जाती थी। जब आज उसने कमलनयन के बताये योगसाधन के मार्ग का अनुसरण कर बड़ी नियम-निष्ठा के साथ निरामिष भोजन किया तब उसके मन में तृप्ति हुई। एक तरह का शान्त भाव उसके चित्त पर छा गया। उसने अपने शयनगृह से चटाई और कारपेट को हटाकर बिछौने को पर्दे की ओट में कर दिया। अब उस कमरे के फ़र्श को नलिनी अपने हाथ से जल से धोकर साफ़ करती थी। एक फूल-डाली में कुछ फूल रक्खे रहते थे। वह स्नान करके श्वेत वस्त्र पहनकर उस कमरे में आसन बिछाकर बैठती थी। घर के जँगले और दरवाज़े खुले रहते थे, जिनसे वहाँ बेरोक हवा जाती-आती थी, और प्रकाश भी आता था। वह उस प्रकाश, आकाश और विशुद्ध वायु के

द्वारा अपने अन्तःकरण को अभिषिक्त करके ईश्वर का स्मरण करती थी। घनानन्द पूर्ण रूप से नलिनी के साथ योग नहीं दे सकते थे किन्तु नियम-पालन के द्वारा जो उसके मुँह पर एक प्रकार की प्रसन्नता का चिह्न देख पड़ता था वह देखकर वृद्ध का मन स्नेह से स्निग्ध हो जाता था। कमलनयन के आने पर नलिनी और घनानन्द इसी कमरे में फ़र्श पर बैठकर परस्पर आलोचना किया करते थे।

योगेन्द्र एकदम विद्रोही हो गया। वह कहने लगा—यह क्या हो रहा है! तुम लोगों ने मिल-जुलकर उपासना के द्वारा घर को भयङ्कर रूप से पवित्र बना दिया। मेरे सदृश मनुष्य को यहाँ पैर रखने के लिए भी जगह नहीं।

इसके पहले योगेन्द्र की आक्षेप भरी बातों से नलिनी का हृदय क्रोध से भर जाता था; किन्तु अब घनानन्द बाबू उसकी बात से बीच-बीच में बिगड़ बैठते हैं किन्तु कमलनयन के साथ नलिनी केवल शान्त भाव से हँसती है। अब नलिनी ने अपने मन से राग-द्वेष के झमेलों को किनारे कर एक अद्वैत भाव का अवलम्बन किया है। इस सम्बन्ध में लज्जा करना भी वह हृदय की दुर्बलता समझती है। वह जानती थी कि लोग मेरे इस नये आचरण को आश्चर्य मान हँसी करते हैं, मेरी नक़ल उतारते हैं, इतने पर भी कमलनयन के ऊपर उसकी जो भक्ति और विश्वास है उसने संसार भर को छिपा लिया है। इसी से वह अब किसी के उपहास की कुछ परवा नहीं करती।

एक दिन नलिनी प्रातःस्नान के अनन्तर उपासना करके अपने उसी एकान्त गृह में खिड़की के सामने चुपचाप बैठी थी। इसी समय घनानन्द बाबू कमलनयन को लिये एकाएक वहाँ आये। उस समय नलिनी के हृदय में पूर्ण रूप से शान्ति छाई हुई थी। उसने पहले कमलनयन को साष्टांग प्रणाम करके फिर पिता को प्रणाम किया और उन दोनों के चरण की धूल अपने मस्तक में लगाई। कमलनयन सकुच गये। घनानन्द ने कहा—आप सङ्कोच न करें। नलिनी ने अपना कर्तव्य किया है।

और दिन कमलनयन इतने सबेरे यहाँ नहीं आते थे। इसी से नलिनी ने बड़ी उत्कण्ठा के साथ उनके मुँह की ओर देखा। कमलनयन ने कहा—मेरी माता का शरीर कुछ अधिक अस्वस्थ होने की ख़बर काशी से आई है, इसलिए आज साँझ की ट्रेन से काशी जाना चाहता हूँ। दिन ही में यहाँ के सब काम कर डालना चाहिए, यही सोचकर आज सबेरे ही आप सबसे मिलने आया हूँ।

घनानन्द—मैं अभी आपसे और क्या कहूँ। आपकी माता बीमार हैं, ईश्वर उन्हें शीघ्र अच्छा कर दें। इन्हीं कुछ दिनों में आपके सत्सङ्ग से हमें जो लाभ हुआ है, इस ऋण का परिशोध हमसे किसी भी समय में न हो सकेगा।

कमलनयन—यह आपकी उदारता है। सच पूछिए तो आप लोगों ने जो मेरा उपकार किया है वह मैं कभी न

भूलूँगा। पड़ोसी के साथ जैसा कुछ यत्न-साहाय्य करना चाहिए वह तो आपने किया ही है, इसके सिवा जिन गम्भीर बातों पर मैं इतने दिन मन ही मन विचार किया करता था उन्हें आपने अपनी श्रद्धा के द्वारा उत्तेजित कर दिया है। मेरी भावना और साधना आपके जीवन का अवलम्ब करने से मेरे लिए पहले से कहीं बढ़कर आश्रयस्थल हो गई है। अन्य मनुष्य के हृदय की सहयोगिता से सार्थकता की प्राप्ति कितनी सहज हो जाती है—यह मैं ख़ूब समझ गया।

वनानन्द—मैंने अचम्भा देखा, हमें किसी चीज़ की बड़ी आवश्यकता थी, किन्तु यह न मालूम था कि ज़रूरत है किस चीज़ की। ठीक इसी समय आप न जाने कहाँ से आ गये। आप न आते, आपसे भेंट न होती तो हमारी न जाने क्या दशा होती। आपको पाकर हम सचमुच कृतार्थ हुए। हम घर से बाहर बहुत ही कम निकलते हैं। जन-समाज में अधिक नहीं जाते-आते। किसी सभा में जाकर वक्तृता सुनने के भी हम शौक़ीन नहीं। हम जायँ तो जा भी सकते हैं किन्तु नलिनी को ले जाना बड़ा ही कठिन है। पर उस दिन का आश्चर्य आपसे क्या कहूँ। ज्योंही योगेन्द्र के मुँह से सुना कि आप वक्तृता देंगे त्योंही हम दोनों बड़े उत्साह के साथ ठीक समय पर वहाँ जा पहुँचे। ऐसी घटना कभी नहीं हुई। आप इन बातों को याद रखिए। इसी से आप समझेंगे कि हम लोगों को आपकी ज़रूरत है, नहीं तो ऐसी घटना कदापि नहीं घटती।

कमलनयन—आप भी स्मरण रखिए कि आपको छोड़ मैंने अपने जीवन का गूढ़ रहस्य किसी से भी नहीं कहा। सत्य को प्रकट कर लेना ही सत्य के सम्बन्ध में चरम शिक्षा है। उसे प्रकट करने की गम्भीर आवश्यकता आपके ही द्वारा सिद्ध हुई है। अतएव समझ लीजिए कि आपकी मुझे कहाँ तक आवश्यकता थी।

नलिनी इन दोनों का वार्तालाप चुपचाप सुन रही थी और जँगले की राह जो धूप फ़र्श पर आकर पड़ रही थी उसी की ओर देख रही थी। कमलनयन जब जाने को उद्यत हुए तब नलिनी ने कहा—ऐसा कीजिएगा जिसमें आपकी माता के आरोग्य होने का समाचार हम लोगों को भी मालूम हो।

ज्योंही कमलनयन उठकर खड़ा हुआ त्योंही नलिनी ने उसे दुबारा, माथा टेककर, प्रणाम किया।

चवालीसवाँ परिच्छेद

इधर कई दिनों से अक्षय ग़ायब था। कमलनयन के काशी चले जाने पर आज वह योगेन्द्र के साथ घनानन्द बाबू की चाय की टेबल के पास देख पड़ा। उसने रमेश पर नलिनी के अनुराग की मात्रा को नापने का एक अच्छा उपाय ढूँढ़ लिया था। जिस परिमाण में अक्षय से नलिनी चिढ़ती थी उसी परिमाण में वह उसे रमेश पर अनुरक्त समझ लेता था। आज उसने देखा—नलिनी के मुखमण्डल पर शान्ति छाई है।

अक्षय को देखने से उसके चेहरे का भाव कुछ भी नहीं बदला। वह ज्यों का त्यों बना रहा। नलिनी ने स्वाभाविक प्रसन्नता दरसाकर अक्षय से पूछा—आज आपको बहुत दिन मे देखा।

अक्षय—मैं क्या प्रतिदिन देखे जाने योग्य हूँ?

नलिनी ने हँसकर कहा—वह योग्यता न रहने से यदि मिलना-जुलना ठीक न समझा जाय तो हममें बहुतों को एकान्त में ही रहना पड़े।

योगेन्द्र—अक्षय ने सोचा था कि हम अकेले विनय करके आपही सम्पूर्ण यश लूट लेंगे परन्तु नलिनी ने सारी मनुष्य-जाति की ओर से विनय करके अक्षय को अखण्ड यश का भागी न होने दिया। किन्तु इस सम्बन्ध में मुझे कुछ कहना

है। हमारे जैसे साधारण मनुष्य ही प्रतिदिन देखे सुने जाते हैं। और जो असाधारण व्यक्ति हैं उनका तो संयोग ही से कभी दर्शन होना भला है। इसी से वे जङ्गल, पहाड़ और गुफाओं में घूमते फिरते हैं। यदि वे बस्ती में रहने लग जायँ तो फिर अक्षय-योगेन्द्र जैसे बिलकुल साधारण लोगों को जङ्गलों-पहाड़ों में भाग जाना पड़े।

योगेन्द्र की यह व्यङ्ग भरी बात नलिनी के हृदय में जा खटकी। उसने इस बात का कुछ जवाब न देकर तीन प्यालों में चाय भर करके घनानन्द बाबू, अक्षय और योगेन्द्र के आगे रख दी। योगेन्द्र ने कहा—मालूम होता है, तुम चाय न पिओगी।

वह योगेन्द्र से कठोर उत्तर सुनने की बात जानकर भी बड़े शान्त भाव से बोली—नहीं, मैंने चाय पीना छोड़ दिया है।

योगेन्द्र—जान पड़ता है, इस दफ़े विधिपूर्वक तपस्या आरम्भ हो गई। चाय की पत्ती में शायद विशेष आध्यात्मिक गुण नहीं है, जो कुछ है हरीतकी में है। क्या आफ़त है! मेरी बात मानो तो यह सब आडम्बर करना छोड़ दो। अगर प्याले भर चाय पीने से तुम्हारा तप नष्ट हो जाय तो हो जाने दो। इस संसार में बड़ी मज़बूत चीज़ भी नहीं टिकती। ऐसे नियमों का पालन करके समाज में रहना कठिन है।

यह कहकर योगेन्द्र ने झट उठकर अपने हाथ से एक प्याले में चाय भरकर नलिनी के आगे रख दी। उसने चायके

प्याले में हाथ भी न लगाकर घनानन्द बाबू से कहा—आज आप केवल चाय पीकर रह गये, और कुछ न खाइएगा ?

घनानन्द बाबू का हाथ और स्वर काँपने लगा। उन्होंने कहा—बेटी, मैं सच कहता हूँ, मुझे इस टेबल पर कुछ खाना-पीना अच्छा नहीं लगता। योगेन्द्र की बातें मैं देर से चुपचाप सुनने की चेष्टा कर रहा हूँ। कुछ बोलने का साहस नहीं होता। क्या जानें, इस बुढ़ापे में मुह से क्या निकल जाय जिसके लिए पीछे पछताना पड़े।

नलिनी ने पिता की कुरसी के पास खड़ी होकर कहा—बाबूजी, आप क्रोध न कीजिए! भैया मुझे चाय पिलाना चाहते हैं, इसमें क्या हर्ज है। मैं तो इसके लिए ज़रा भी दुःख नहीं मानती। नहीं बाबूजी, आप कुछ खाइए। ख़ाली पेट चाय पीने से आपका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है—यह मैं जानती हूँ।

यह कहकर नलिनी ने आहार्य-सामग्री का पात्र उनके सामने खसकाकर रख दिया। घनानन्द धीरे-धीरे खाने लगे।

नलिनी फिर अपनी कुरसी पर आकर बैठी और योगेन्द्र की दी हुई चाय पीने को उद्यत हुई। अक्षय ने झटपट उठकर कहा—माफ़ कीजिए, यह प्याला मुझे दे दीजिए। मेरा प्याला ख़ाली हो गया है।

योगेन्द्र ने तुनककर नलिनी के हाथ से चाय का प्याला ले लिया और घनानन्द से कहा—मुझसे बड़ा अपराध हुआ, क्षमा कीजिए।

घनानन्द कुछ उत्तर न दे सके। उनकी आँखों में आँसू भर आये और देखते ही देखते टपक पड़े।

अक्षय को लेकर योगेन्द्र धीरे-धीरे वहाँ से चला गया। घनानन्द बाबू जल-पान करके उठे और, नलिनी का हाथ पकड़कर, थरथराते पैरों से ऊपर के कमरे में गये।

उसी दिन कुछ रात बीते उनके पेट में शूल का सा दर्द होने लगा। वृद्ध बेचारे दर्द के मारे छटपटाने लगे। डाक्टर बुलाया गया। उसने परीक्षा करके कहा, इनका पित्ताशय बिगड़ गया है। अभी रोग प्रबल नहीं हुआ है। इसी समय ये पश्चिम के किसी स्वास्थ्यकर स्थान में जाकर बरस छः महीने रहें तो स्वास्थ्य ठीक हो जायगा।

दर्द हटने और डाक्टर के चले जाने पर घनानन्द ने नलिनी से कहा—चलो बेटी, न हो तो कुछ दिन हम काशी में ही रहें।

"जो रोगी को भावे, सोई बैद बतावे" नलिनी ने उनके कहने के पहले ही इस बात को सोचा था। कमलनयन के चले जाने से वह अपने साधन-सम्बन्ध में दुर्बलता का अनुभव करने लगी थी। कमलनयन के रहने से उसको पूजा-पाठ में बड़ा सहारा मिलता था। कमलनयन के मुँह पर जो स्थिर निष्ठा और शान्ति-सहित प्रसन्नता का भाव झलकता था वही नलिनी के विश्वास को सदा विकसित किये रहता था। उसकी अनुपस्थिति में नलिनी का उत्साह कुछ मन्द सा हो गया था। इसी से आज वह दिन भर कमलनयन के बतलाये हुए सारे

अनुष्ठानों का, बड़ा ज़ोर लगाकर और कुछ अधिक परिमाण में, पालन करती रही है। किन्तु उससे थक जाने पर ऐसी निराश हो गई थी कि वह आँसुओं को न रोक सकी। चाय की टेबल पर वह बड़ी मुस्तैदी से आतिथ्य करती रही सही, पर उसके हृदय पर एक पत्थर सा रक्खा था। अब फिर उस पर उसी पुरानी स्मृति की वेदना ने दुगुने वेग से हमला कर दिया—उसका मन मानों फिर गृह-विहीन, आश्रय-हीन की तरह विकल होने को उद्यत हुआ। इसी से जब उसने काशी जाने की बात सुनी तब बड़ी उत्कण्ठा के साथ कहा—हाँ बाबूजी, वहीं चलिए।

दूसरे दिन जाने की कुछ तैयारी करते देख योगेन्द्र ने पूछा—यह क्या हो रहा है ?

घनानन्द—हम पश्चिम जाना चाहते हैं।

योगेन्द्र—पश्चिम में कहाँ ?

"घूमते-फिरते किसी जगह को पसन्द करके कुछ दिन टिक रहेंगे।" योगेन्द्र से एकदम काशी जाने की बात कह डालने में घनानन्द बाबू को सङ्कोच हुआ।

योगेन्द्र—मैं इस बार आपके साथ न जा सकूँगा। मैंने जो हेडमास्टरी के लिए दर.ख्वास्त भेजी है उसके उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा हूँ।

पैंतालीसवाँ परिच्छेद

रमेश दूसरे दिन सबेरे ही इलाहाबाद से ग़ाज़ीपुर लौट आया। तब सड़क पर अधिक लोग न थे। कुहरा छाये रहने के कारण मार्ग का अगला हिस्सा दिखाई न देता था। रमेश मोटे कपड़े का ओवरकोट पहने गाड़ी में बैठा अपने घर की ओर चला। न मालूम उसकी छाती क्यों धड़कने लगी।

सदर फाटक पर जाकर रमेश गाड़ी से उतर पड़ा। सोचा, गाड़ी का शब्द सुनकर कमला ज़रूर ही बरामदे में आकर खड़ी हो गई होगी। रमेश अपने हाथ से कमला के गले में एक बहुमूल्य चन्द्रहार पहनाने के लिए इलाहाबाद से मोल लाया है। उसने उसको कोट के पाकेट से निकालकर हाथ में ले लिया।

द्वार के सामने आकर रमेश ने देखा कि मोहन बरामदे में बेख़बर सोया हुआ है। घर के दरवाज़े बन्द हैं। रमेश ठिठककर खड़ा हो रहा। उसने उच्च स्वर से पुकारा, "मोहन!" सोचा, इस पुकार से घर के भीतर रहनेवाली की भी नींद टूटेगी। किन्तु इस तरह नींद तोड़ना रमेश के मन में बड़ा ही दुःखद हुआ। क्योंकि वह तो आधी रात से ही जाग रहा है।

दो-तीन बार पुकारने पर भी मोहन की नींद न टूटी। आख़िर उसे हाथ से धक्का देकर उठाना पड़ा। मोहन आँख मलता हुआ उठा और कुछ देर भौंचक सा हो रहा। रमेश ने पूछा—बहूजी घर में हैं ?

मोहन ने पहले तो रमेश की बात का अर्थ समझा ही नहीं। इसके अनन्तर चौंककर कहा—"हाँ, वे घर ही में हैं।" यह कहकर वह फिर लेट गया और सोने की तैयारी करने लगा।

रमेश ने बाहर से किवाड़ों में धक्का दिया। धक्का देते ही किवाड़ खुल गये। भीतर जाकर उसने प्रत्येक कमरे में घूमकर देखा, कोई कहीं नहीं। तो भी एक बार ज़ोर से पुकारा—"कमला !" कहीं से कुछ उत्तर न मिला। बाहर के बग़ीचे में अशोक के पेड़ तक जाकर घूम आया। रसोईघर में, नौकरों के रहने के घर में और अस्तबल में भी खोज आया, कहीं कमला न मिली। तब कुछ-कुछ धूप निकल आई, कौवे काँव-काँव कर चारों ओर घूमने लगे। हाते के भीतरवाले कुँवे से पानी भरने के लिए सिर पर घड़ा लिये महल्ले की दो-चार स्त्रियाँ आती हुई दिखाई दीं। सड़क के दूसरे किनारे एक छोटे से घर के भीतर किसी अधेड़ स्त्री ने विचित्र स्वर से गीत गाकर चक्की पीसना आरम्भ किया।

रमेश ने फिर कोठी के भीतर आकर देखा, मोहन गाढ़ी निद्रा में निमग्न है। तब वह झुककर दोनों हाथों से

मोहन को ख़ूब ज़ोर से झँझोरने लगा। देखा, उसके मुँह से ताड़ी की बास आ रही है।

अधिक ज़ोर से हिलाये जाने पर मोहन का होश ठिकाने आया। वह हड़बड़ाकर उठ खड़ा हुआ। रमेश ने फिर पूछा—मोहन, बहूजी कहाँ हैं?

मोहन—बहूजी भीतर हैं।

रमेश—भीतर तो नहीं हैं।

मोहन—कल तो यहीं आ गई थीं।

रमेश—यहाँ आने पर फिर कहाँ गई थीं?

मोहन मुँह फैलाकर रमेश के मुँह की ओर देखने लगा।

इसी समय उमेश आ पहुँचा। वह ख़ूब चौड़ी किनार की लम्बी धोती पहने और चादर ओढ़े था। उसकी आँखें लाल-लाल थीं। रमेश ने पूछा—उमेश, तुम्हारी माँजी कहाँ हैं?

उमेश—माँज़ी तो कल से यहीं हैं।

रमेश—तुम कहाँ थे?

उमेश—माँजी ने कल साँझ को मुझे श्रीपति बाबू के घर तमाशा देखने को भेजा था।

गाड़ीवान ने आकर कहा—बाबू साहब, भाड़ा?

रमेश झटपट उसी गाड़ी में सवार होकर चक्रवर्ती के घर गया। वहाँ जाकर देखा, उस घर के सभी लोग चञ्चल हैं। रमेश ने समझा, शायद कमला बीमार हो गई है। परन्तु यह बात न थी। कल साँझ होने के कुछ ही देर बाद

से उमा एकाएक चिल्लाकर रोने लगी, उसका चेहरा स्याह हो गया, और हाथ-पैर ठण्ढे हो गये। यह देख सब लोग डर गये। उसकी दवाई के लिए घर के सब लोग हैरान थे। रात भर सभी जागते रहे।

रमेश ने सोचा, उमा की बीमारी की ख़बर सुनकर कल ज़रूर कमला यहाँ आई होगी। उसने विपिन से कहा—जान पड़ता है, इसी से कमला उमा के कारण बड़ी बेचैन हो गई है।

विपिन को ठीक-ठीक मालूम न था कि कमला कल रात में यहाँ आई भी है या नहीं। इसी से उसने रमेश की बात में बात मिलाकर कहा—हाँ, वे उमा को बहुत प्यार करती हैं इसी से उनको बड़ी चिन्ता थी। किन्तु डाक्टर ने कहा है, चिन्ता करने की कोई बात नहीं। लड़की जल्द अच्छी हो जायगी।

जो हो, रमेश का प्रफुल्लित मुँह कल्पना के पूर्ण उच्छ्वास में रुकावट आ जाने से विकल हो गया। वह सोचने लगा—हम दोनों के मिलन में कोई दैवी रुकावट है।

इसी समय रमेश की नई कोठी से उमेश भी यहाँ आ पहुँचा। वह बे-रोक भीतर जाता-आता था। इस लड़के पर अन्नपूर्णा का स्नेह भी था। अन्नपूर्णा उसे अपने कमरे की ओर आते देख उमा की नींद टूट न जाय इस भय से झट बाहर आ गई। उसे आशङ्का थी कि इसकी बातचीत से कहीं लड़की जाग न पड़े।

उमेश ने पूछा—माँजी कहाँ हैं ?

अन्नपूर्णा चकित होकर बोली—क्यों, कल तुम्हीं तो उन्हें यहाँ से उस घर में ले गये हो। सन्ध्या होने के उपरान्त शिवरनिया को उनके पास भेजना था। बच्ची को एकाएक न जाने क्या हो गया, इसी से उसको न भेज सकी।

उमेश का मुँह सूख गया। उसने कहा—उस मकान में तो वे हैं नहीं।

अन्नपूर्णा ने व्यग्र होकर कहा—कहते क्या हो ? कल रात को तुम कहाँ थे ?

उमेश—माँ ने मुझे रात को वहाँ रहने नहीं दिया। उस मकान में जाते ही उन्होंने मुझको श्रीपति बाबू के यहाँ तमाशा देखने को भेज दिया।

अन्नपूर्णा—तुम्हारी अ़क्ल तो देख ली। मोहन कहाँ था ?

उमेश—मोहन तो कुछ कहता ही नहीं। कल वह ख़ूब ताड़ी पीकर बेहोश हो गया था।

अन्नपूर्णा—जाओ, जाओ, बाबू को जल्द बुला लाओ।

विपिन के आते ही अन्नपूर्णा ने कहा—हाय ! यह क्या हो गया !

विपिन का मुँह सूख गया। उसने घबराहट के साथ पूछा—क्या हुआ ?

"कमला कल अपनी कोठी में गई थी। आज वहाँ खोजने से भी नहीं मिलती।"

विपिन—तो कल रात को वे यहाँ नहीं आईं ?

अन्नपूर्णा—नहीं, बच्ची को बीमार देख उन्हें बुलाना चाहा था पर यहाँ था कौन जिसे भेजती ? क्या रमेश बाबू आ गये ?

विपिन—उन्हें उस मकान में न पाकर रमेश बाबू यही समझे बैठे हैं कि कमला यहीं है। वे तो यहीं आये हैं।

अन्नपूर्णा—जाइए, जाइए, शीघ्र रमेश बाबू को साथ लेकर कमला की खोज कीजिए। उमिया अभी सोई है। वह अच्छी है।

विपिन और रमेश फिर उसी गाड़ी में बैठकर नई कोठी को लौट गये। वहाँ जाकर कमला के विषय में मोहन से जिरह पर जिरह करने लगे। बहुत शङ्का-समाधान के अनन्तर जो खबर मिली वह यही कि—कल कुछ दिन रहते कमला अकेली गङ्गा की ओर गई थी। मोहन ने उसके साथ जाना चाहा था पर कमला ने बतौर इनाम के एक रुपया उसके हाथ में देकर उसे लौटा दिया। वह पहरा देने के लिए सदर फाटक पर आ बैठा। उसी समय तुरन्त का उतारा ताड़ी का घड़ा लिये एक पासी उसके सामने से जा रहा था। इसके बाद संसार में कहाँ क्या हुआ, मोहन कुछ न बता सका। जिस रास्ते कमला को गङ्गा-तट की ओर जाते देखा था वह मोहन ने दिखा दिया।

रमेश, विपिन और उमेश तीनों ओस से गीले, खेतों के बीचवाले उसी रास्ते से कमला की खोज में चले। उमेश मातृ-हीन मृग-शावक की भाँति व्याकुल होकर चकित दृष्टि

से चारों ओर देखने लगा। गङ्गा के किनारे पहुँचकर तीनों खड़े हुए। वहाँ चारों ओर मैदान था। सफ़ेद बालू प्रभात-कालिक धूप में चाँदी की तरह चमक रही थी। कहीं कोई देख न पड़ा। उमेश ख़ूब ज़ोर से चिल्ला-चिल्लाकर पुकारने लगा—"माँ, कहाँ हो, दर्शन दो।" प्रतिध्वनि मात्र दूर से लौटकर उसके कान में आ पड़ी। कहीं से कुछ उत्तर न मिला।

खोजते-खोजते उमेश की दृष्टि हठात् कुछ दूर पर एक उजली सी चीज़ पर जा पड़ी। उसने दौड़कर नज़दीक जाकर देखा, पानी के निकट एक सफ़ेद रूमाल में बँधा हुआ कुञ्जियों का गुच्छा है। "कहो, कहो, वह क्या है?" कहते-कहते रमेश भी वहाँ आया और देखते ही पहचान लिया—वह कमला की कुञ्जियों का गुच्छा था।

जिस जगह वह कुञ्जियों का गुच्छा पड़ा था उससे कुछ ही हटकर गीली मिट्टी के ऊपर गङ्गा के जल-पर्यन्त दो छोटे-छोटे पैरों का गहरा चिह्न भी देख पड़ा। उथले पानी के भीतर कोई वस्तु झलक रही थी। उस पर उमेश की दृष्टि जा पड़ी। उसने पानी में से निकालकर देखा, सोने की चेन थी। कमला को रमेश ने यह उपहार में दी थी।

इस प्रकार जब गङ्गा की धार में कमला के प्रवेश करने के अनेक चिह्न मिले तब उमेश से न रहा गया। वह "माँ, माँ" कहकर गङ्गाजी की धार में धँस पड़ा। वहाँ जल अधिक न था। उमेश पागल की तरह बार-बार पानी में डुबकी मार-

कर तल प्रदेश में हाथ से चारों ओर कमला को ढूँढ़ने लगा। उसने पानी को गँदला कर डाला।

रमेश हतबुद्धि की तरह किनारे खड़ा था। विपिन ने उमेश से कहा—तुम यह क्या करते हो? निकल आओ।

उमेश मुँह से पानी फेंकते-फेंकते बोला—नहीं दादा! मैं पानी से बाहर न निकलूँगा, हर्गिज़ न निकलूँगा। अरी माँ, तुम कहाँ गईं! मुझे भी अपने साथ क्यों न लेती गईं।

विपिन डर गया। परन्तु उमेश तो मछली की तरह पानी में तैरना जानता था। उसके लिए पानी में डूबकर आत्म-हत्या करना कठिन था। जब वह डुबकी लगाते-लगाते थक गया तब अछता-पछताकर पानी से निकल आया और किनारे की बालू पर लोटने और रोने लगा।

विपिन ने मूर्ति की तरह खड़े रमेश को छूकर कहा—रमेश बाबू! चलिए, यहाँ खड़े रहने से क्या होगा। एक बार पुलिस में इसकी इत्तिला करनी चाहिए। वे लोग भी खोजें। शायद कहीं कुछ पता लग जाय।

अन्नपूर्णा के घर उस दिन चूल्हा न जला। दिन भर सब लोग कमला के वियोग से कातर हो शोक-सागर में डूबे रहे। मल्लाहों ने नाव लेकर गङ्गा की धार में दूर तक जाल डालकर ढूँढ़ा। पुलिस के कर्मचारी चारों ओर कमला का अनु-सन्धान करने लगे। स्टेशन में जाकर विशेष रूप से खोज

की गई। कमला के सदृश रङ्ग, रूप और अवस्थावाली कोई वङ्ग-रमणी रात की गाड़ी से कहीं नहीं गई।

उसी दिन दोपहर के बाद चक्रवर्ती आ गये। कई दिनों से कमला का व्यवहार और आद्योपान्त वृत्तान्त सुनकर उन्होंने निश्चय किया कि कमला ने गङ्गाजी में डूबकर आत्महत्या कर ली है।

शिवरनिया ने कहा—इसी से कल रात में बच्ची इस तरह रोने लगी जैसे उसे किसी तरह की हवा लग गई हो। उसकी झाड़-फूँक करा लेनी चाहिए।

रमेश बेचारा मारे सोच के अधमरा सा हो गया। उसके मन का सब मनोरथ मन ही में रह गया। वह सिर पर हाथ रखकर कमला के सम्बन्ध की बातें मन ही मन सोचकर व्याकुल होने लगा—एक दिन यह कमला गङ्गा की धारा से बाहर निकलकर मेरे पास आई थी और फिर इसी गङ्गा की धारा में ही, पूजा के पवित्र फूल की भाँति, अन्तर्हित हो गई।

जब सूर्यास्त हुआ तब रमेश फिर उसी ओर गङ्गा के किनारे आया। जहाँ कुञ्जियों का गुच्छा पड़ा मिला था वहाँ खड़ा होकर वह उसी के पैरों के चिह्न को टकटकी बाँधकर देखने लगा। इसके बाद जूता उतारकर उसने धोती को घुटने से ऊपर चढ़ा लिया। फिर वह कुछ पानी के भीतर पैठा और डब्बे से सोने का चन्द्रहार निकालकर गङ्गा की धार में फेंक दिया।

रमेश ग़ाज़ीपुर से अब किधर को गया, यह ख़बर चक्रवर्ती के घरवालों को न लगी।

छियालीसवाँ परिच्छेद

अब रमेश के पास कोई काम न रहा। उसके मन में बार-बार यह तरङ्ग उठने लगी कि इस जीवन में अब मैं कोई काम न करूँगा। कहीं स्थिर होकर न रहूँगा। यों ही घूमता फिरूँगा। मन में उसे नलिनी की याद न आती थी, यह नहीं। आती ज़रूर थी, परन्तु उसने उसे चित्त से हटा दिया। उसने अपने मन में कहा—मेरे जीवन में जिस दारुण घटना ने आघात किया है उससे मैं हमेशा के लिए संसार में अयोग्य बन गया हूँ। गाज गिरने से झुलसा हुआ पेड़ बाग़ के बीच में रहने की आशा क्यों करें ?

रमेश अब एक जगह स्थिर न रह सका। वह देश-भ्रमण की इच्छा से निकल पड़ा। किसी स्थान में अधिक दिन न ठहरा। उसने नाव पर सवार होकर काशी के घाटों की और दिल्ली के क़ुतुबमीनार पर चढ़कर शहर की शोभा देखी। फिर आगरा जाकर चाँदनी रात में ताजमहल देखा। इसके बाद अमृतसर में गुरुदरबार देखकर राजपूताने की ओर गया। वहाँ आबू पहाड़ की चोटी पर जो प्राचीन मन्दिर है, उसे देखा। इसी तरह उसने घूम फिरकर कई प्रदेश देखे। पर उसको कहीं भी शान्ति न मिली।

भ्रमण से थके हुए इस युवक का अन्तःकरण अब घर के लिए हाहाकार करने लगा। उसके मन में एक शान्तिमय घर की पुरानी याद और एक सम्भवपर घर की सुखमय कल्पना आघात कर रही है। आखिर जब उसका जी देशाटन से उचट गया तब वह एक लम्बी साँस ले कलकत्ते का टिकट लेकर रेल-गाड़ी में सवार हुआ।

कलकत्ते पहुँचकर रमेश कोलूटोले की उस गली के भीतर प्रवेश न कर सका। वहाँ जाकर वह न जाने क्या देखे-सुनेगा! इस चिन्ता ने उधर जाने से उसे रोक रक्खा। उसके मन में केवल यही एक आशङ्का होने लगी कि वहाँ बड़ा भारी परिवर्तन हो गया है। एक दिन वह उस गली के मोड़ तक जाकर लौट आया था। दूसरे दिन साँझ को रमेश जबर्दस्ती अपने को खींचकर नलिनी के मकान के सामने ले गया। देखा, घर के सभी दरवाज़े और खिड़कियाँ बन्द हैं। भीतर कोई है, ऐसा लक्षण न देख पड़ा। मकान की निगरानी के लिए रामधन दरवान ज़रूर होगा, यह सोचकर उसने रामधन को पुकारा और बार-बार फाटक पर धक्का दिया। पर कहीं से कुछ उत्तर न मिला। चन्द्रमोहन नाम का एक पड़ोसी अपने घर के बाहर बैठा तम्बाकू पी रहा था। उसने स्वर पहचानकर कहा—कौन, रमेश बाबू? कहिए, सब कुशल-मङ्गल है? इस मकान में अभी कोई नहीं है।

रमेश—क्यों, ये लोग कहाँ गये?

चन्द्रमोहन—यह तो मैं ठीक-ठीक नहीं कह सकता, पर इतना जानता हूँ कि वे पश्चिम में कहीं गये हैं।

रमेश—कौन-कौन गया है?

चन्द्रमोहन—घनानन्द बाबू और उनकी लड़की।

रमेश—आप ठीक जानते हैं, उनके साथ और तो कोई नहीं गया?

चन्द्रमोहन—जी हाँ, जाते समय भी मैंने उन्हें देखा था, बात-चीत की थी।

तब रमेश ने अधीर होकर कहा—मैंने एक आदमी से सुना है कि कमलनयन नाम का कोई आदमी उनके साथ है।

चन्द्रमोहन—यह बात आपसे किसी ने झूठ कही है। कमलनयन बाबू इसी मकान में—जिसमें पहले आप रहते थे—कई दिनों तक थे। इन लोगों के जाने के दो-चार दिन पहले ही वे काशी चले गये थे।

चन्द्रमोहन से पूछने पर रमेश को कमलनयन बाबू के सम्बन्ध में सिर्फ़ यही मालूम हुआ—"उनका नाम कमलनयन उपाध्याय है। वे पहले रङ्गपुर में डाक्टरी करते थे। अब माँ के साथ कुछ दिन से काशी में रहते हैं।" रमेश ने ज़रा ठहर-कर पूछा—आप जानते हैं, आजकल योगेन्द्र कहाँ है?

चन्द्रमोहन—नवद्वीप के एक ज़मींदार के द्वारा स्थापित हाई स्कूल के हेडमास्टर के पद पर नियुक्त होकर योगेन्द्र विष्णुपुर गये हैं।

चन्द्रमोहन ने पूछा—रमेश बाबू ! आप बहुत दिनों के बाद देख पड़े—आप इतने दिन कहाँ रहे ?

रमेश ने बात को छिपाने का कोई कारण न देखकर कहा—वकालत करने की इच्छा से ग़ाज़ीपुर गया था।

चन्द्रमोहन—क्या अब वहीं रहना होगा ?

रमेश—नहीं, वहाँ रहना मुझे पसन्द नहीं। कहाँ रहूँगा, यह अभी नहीं कह सकता।

रमेश के जाने के कुछ ही देर बाद अक्षय वहाँ आया। योगेन्द्र जाते समय कभी-कभी अपना मकान देखने के लिए अक्षय से कह गया था। अक्षय जो काम अपने ज़िम्मे लेता है उसकी रक्षा करने में कभी आलस्य नहीं करता। इसी से वह और काम रहने पर भी जब-तब योगेन्द्र का मकान देखने आता है। मकान के दो चौकीदारों में एक भी हाज़िर रह-कर पहरा देता है या नहीं, इसकी जाँच-पड़ताल करके वह चला जाता है।

चन्द्रमोहन ने अक्षय से कहा—रमेश बाबू, अभी-अभी यहाँ से गये हैं।

अक्षय—सचमुच, क्या करने आये थे ?

चन्द्र०—यह तो मैं नहीं जानता। घनानन्द बाबू का हाल पूछते थे। वे ऐसे दुबले-पतले हो गये हैं कि सहसा उनको पहचानना कठिन है। यदि वे दरवान को न पुकारते तो मैं उन्हें पहचान भी न सकता।

अक्षय—कुछ मालूम हुआ, आज-कल रहते कहाँ हैं ?

चन्द्र०—अभी तक तो ग़ाज़ीपुर में थे। अब वहाँ नहीं रहेंगे। कहाँ रहेंगे, इसका अभी कुछ निश्चय नहीं किया।

"हूँ !" कहकर अक्षय ने अपने काम में मन लगाया।

रमेश अपने डेरे पर आकर सोचने लगा—बड़ी अद्भुत घटना है। उधर मेरे साथ कमला का और इधर कमलनयन के साथ नलिनी का मिलन हुआ, यह तो बिलकुल ही उपन्यास की तरह है—सो भी कुलिखित उपन्यास ! इस प्रकार उलट-फेर कर देना विधाता की भाँति लापरवा रचयिता के लिए ही सम्भव है—संसार में वह ऐसे-ऐसे काम कर डालता है जिन्हें भीरु लेखक काल्पनिक उपन्यास में लिखने का साहस नहीं करते। रमेश ने सोचा, इस बार जब मैं अपने जीवन के कठिन समस्या-जाल से निकल गया हूँ तब अधिकतर सम्भव है कि अदृष्ट अपने इस जटिल उपन्यास के शेष अध्याय में मेरे लिए शोकजनक उपसंहार न लिखेगा।

विष्णुपुर के ज़मींदार ने योगेन्द्र के रहने के लिए अपने मकान के पास ही एक घर दिया था। वह घर में रविवार को सबेरे पहर अख़बार पढ़ रहा था। इसी समय बाज़ार के एक आदमी ने उसके हाथ में एक चिट्ठी दी। लिफ़ाफ़े पर के अक्षर देखकर वह बड़े आश्चर्य में पड़ गया। लिफ़ाफ़ा खोलकर देखा, रमेश ने लिखा है—मैं विष्णुपुर की एक दूकान में भेंट करने की इच्छा से बैठा हूँ। तुमसे कुछ बातें कहनी हैं।

योगेन्द्र एकाएक कुरसी से उठ खड़ा हुआ। यद्यपि वह एक दिन रमेश को अपमानित करने के लिए बाध्य हुआ था तो भी उस बाल्यबन्धु को, इस दूर देश में, और वह भी मुद्दत के बाद भेंट करने के लिए उपस्थित देखकर वह लौटा न सका। उसका हृदय आनन्द से उमँग उठा। कौतूहल भी कुछ कम न हुआ। विशेषकर जब नलिनी वहाँ न थी तब रमेश के द्वारा किसी तरह का अनिष्ट होने की आशङ्का भी न थी।

पत्र लानेवाले को साथ ले योगेन्द्र स्वयं रमेश से भेंट करने चला। देखा, वह एक बनिये की दूकान में एक ख़ाली सन्दूक़ पर चुपचाप बैठा है। दूकानदार ने ब्राह्मण के हुक्के में तम्बाकू भरकर उसे देनी चाही, किन्तु चश्माधारी बाबू साहब हुक्का नहीं पीते, यह सुनकर वणिक् ने उन्हें शहर के अद्भुत श्रेणी के पदार्थ में गिना और इसी से उन दोनों में कुछ विशेष वार्तालाप न हुआ।

योगेन्द्र ने लपककर रमेश का हाथ पकड़कर कहा—तुमसे हार गये! तुम अपनी दुबिधा को लेकर चलते बने! ख़ैर, तुमको सीधे मेरे घर चला आना था सो यहाँ मोदी की दूकान पर गुड़, आटे और घी के बीच मज़े में बैठे हो!

रमेश कुछ उत्तर न देकर मुस्कुराया। योगेन्द्र रास्ते में मनमानी बातें बकता हुआ जाने लगा। उसने कहा—सुनो रमेश बाबू! जो होनहार है वह होता ही है। विधि के कर्त्तव्य को कोई नहीं जान सकता। उसने जो मुझको शहर में जन्म

इतना बड़ा नागरिक बनाया सो क्या इसी लिए कि मैं एक ऐसे निठल्ले गाँव में मारा-मारा फिरूँ ?

रमेश ने चारों ओर देखकर धीरे से कहा—क्यों, जगह तो नहीं है।

योगेन्द्र—अर्थात् ?

रमेश—अर्थात् यही कि यहाँ निर्जन—

योगेन्द्र—इसी लिए मैं अपने जैसे आदमी को यहाँ से हटा-इस निर्जनता को ज़रा सा और बढ़ाने के लिए प्रतिदिन कुल रहता हूँ।

रमेश—चाहे जो कहो, परन्तु मन की शान्ति के लिए तो—

योगेन्द्र—ये बातें मुझसे मत कहो। कई दिनों से ऐसी शान्ति लेकर मेरा नाकों दम हो रहा है! मैं अपने भर इस शान्ति को भङ्ग करने के लिए त्रुटि नहीं करता। थोड़े से समय में सेक्रेटरी के साथ हाथा-पाई होने की नौबत चुकी है। ज़मींदार महाशय को मेरे स्वभाव का परिचय गया है। अब वे सहसा मेरे कामों में दख़ल देने न वे मेरे द्वारा अँगरेज़ी अख़बारों में अपना गुण-कराना चाहते थे। किन्तु मैं स्वतन्त्र प्रकृति का मनुष्य कोई मुझ पर दबाव डालकर काम नहीं ले सकता, बात मैंने अच्छी तरह उनके दिल में जमा दी है। इतने भी जो मैं यहाँ हूँ, यह अपने गुणों से नहीं। यहाँ के साहब मुझे बहुत चाहते हैं। इसी भय से ज़मींदार

महाशय मुझे हटा नहीं सकते, नहीं तो वे कभी के मुझे यहाँ से भगा देते। मैं जिस दिन गज़ेट में देखूँगा कि ज्वायंट की बदली होती है उसी दिन समझूँगा कि मेरी यहाँ की हेड-मास्टरी की भी इतिश्री हुई। सच् पूछो तो यहाँ कोई भी मेरा हितचिन्तक नहीं—एक यही कुत्ता टाम मेरा दोस्त है। और लोग मुझे जिस दृष्टि से देखते हैं वह कभी शुभ दृष्टि नहीं कही जा सकती।

योगेन्द्र के वासस्थान में आकर रमेश एक कुरसी पर बैठ गया। योगेन्द्र ने कहा—नहीं, अभी बैठने न दूँगा। मैं जानता हूँ कि तुम्हें प्रातःस्नान करने का बड़ा रोग है, पहले उसे निबटा लो। तब तक मैं देग़ची आग पर चढ़ाता हूँ। आज अतिथि की कृपा से दूसरी बार चाय पीने का सौभाग्य प्राप्त होगा।

इस प्रकार बातचीत, आहार और विश्राम में सारा दिन बीत गया। रमेश जो बात कहने के लिए यहाँ आया था, वह कहने का अवकाश योगेन्द्र ने दिन भर में एक बार भी न दिया। सन्ध्या के अनन्तर भोजन करके दोनों दो आराम-कुरसियों पर बैठे। कुछ दूर पर गीदड़ों के बोलने का शब्द सुनाई दिया। झिल्लियों के शब्द से अँधेरी रात की निःस्तब्धता भङ्ग हो रही थी।

रमेश ने कहा—योगेन्द्र, तुम जानते हो, मैं यहाँ तुमसे क्या कहने आया हूँ? एक दिन तुमने मुझसे जो प्रश्न किया

था उस प्रश्न के उत्तर देने का तब उपयुक्त समय न था। अब उत्तर देने में कोई बाधा नहीं।

यह कहकर रमेश जरा ठहर गया। इसके बाद उसने शुरू से आख़ीर तक जो-जो घटनाएँ हुई थीं सब कह सुनाईं। बीच-बीच में उसका स्वर रुका और गला काँपने लगा—दो-एक जगह वह एक-दो मिनट के लिए रुक भी गया। योगेन्द्र ने चुपचाप ध्यानपूर्वक रमेश की सब बातें सुन लीं।

जब रमेश कह चुका तब योगेन्द्र ने एक ठण्ढी साँस लेकर कहा—ये बातें यदि तुम उस दिन कहते तो मैं विश्वास न करता।

रमेश—विश्वास करने का जो कारण तब था वही अब भी है। उसके लिए तुमसे मेरी यही प्रार्थना है कि एक बार तुमको उस गाँव में जाना होगा जहाँ मेरा विवाह हुआ था, उसके बाद मैं तुमको वहाँ से कमला के मामा के घर भी ले जाऊँगा।

योगेन्द्र—मैं कहीं न जाऊँगा। मैं इसी आरामकुरसी पर अटल भाव से बैठा-बैठा तुम्हारी सब बातों पर अक्षरशः विश्वास करूँगा। मैंने कभी तुम्हारे कथन पर अविश्वास नहीं किया। दैवयोग से केवल एक बार तुम पर सन्देह उत्पन्न हुआ था सो उसके लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूँ।

यह कहकर योगेन्द्र आरामकुरसी से उठकर रमेश के सामने पहुँचा। रमेश भी झट खड़ा हो गया। दोनों बाल्य-बन्धु

बहुत लोगों की समझ को मैं अपनी समझ के खिलाफ़ देखता हूँ। कितने ही लोग बेसमझे किसी की तारीफ़ करने लग जाते हैं। जो बात उनकी समझ में नहीं आती उसी को वे पसन्द करते हैं। इसी से नलिनी के लिए मुझे ज़्यादा डर है। जब मैंने देखा कि उसने चाय पीना छोड़ दिया है, वह मछली-मांस भी नहीं खाती, आक्षेप की कोई बात सुनकर उसकी आँखों में पहले की तरह आँसू नहीं आ जाते, बल्कि वह मुस्कुराकर चुप हो रहती है तब मैंने समझा, यह लक्षण अच्छा नहीं। जो हो, अब तुम्हारी सहायता से उसका उद्धार करने में मुझे कुछ भी विलम्ब न लगेगा; यह मैं बख़ूबी जानता हूँ। इसलिए तैयार रहो, हम-तुम दोनों उस संन्यासी पर हमला करने चलेंगे।

रमेश ने हँसकर कहा—यद्यपि मैं वीर पुरुष नहीं कहा गया हूँ तथापि तुम्हारे साथ चलने को प्रस्तुत हूँ।

योगेन्द्र—अच्छा, तो आने दो मेरी बड़े दिन की छुट्टी।

रमेश—उसमें तो अभी देरी है। तब तक मैं अकेला अग्रसर होऊँ तो क्या हर्ज है?

योगेन्द्र—नहीं, नहीं, यह न होगा। तुम दोनों का विवाह-सम्बन्ध मैंने ही तोड़ा था इसलिए मैं अपने हाथ से उसका प्रतीकार करूँगा। तुम जो आगे जाकर मेरे इस शुभ कार्य का भाग हरण करोगे, यह मैं न होने दूँगा। छुट्टी के लिए तो अब दस ही दिन बाक़ी हैं।

रमेश—तो मैं इस अरसे में एक बार—

योगेन्द्र—नहीं, नहीं, ये बातें मैं सुनना नहीं चाहता। दस दिन तुमको मेरे ही यहाँ रहना होगा। यहाँ कलह मचानेवाले जो लोग थे उन सबों को मैंने एक-एक कर हटा दिया। अब गप-शप करके मन बहलाने के लिए एक मित्र की आवश्यकता है। ऐसे अवसर में तुमको छोड़ नहीं सकता। इतने दिनों से यहाँ सन्ध्या समय केवल गीदड़ों का ही शब्द सुनना पड़ता था। इसी से अब तुम्हारा कण्ठ-स्वर भी मुझे वीणा से बढ़कर प्रिय मालूम होता है। मेरी दशा ऐसी शोचनीय है!

सैंतालीसवाँ परिच्छेद

चन्द्रमोहन से रमेश की ख़बर पाकर अक्षय के मन में अनेक विचारों का उदय हुआ। वह सोचने लगा—"क्या मामला है, कुछ मालूम नहीं होता। रमेश ग़ाज़ीपुर में वकालत करता था—इतने दिन तक बिलकुल गुप्त बना रहा। अब ऐसी क्या बात हो गई जिससे वहाँ की प्रैक्टिस छोड़कर वह फिर साहसपूर्वक कोलूटोला स्ट्रीट में अपने को ज़ाहिर करने के लिए उपस्थित हुआ है। घनानन्द बाबू काशी में हैं, यह ख़बर किसी न किसी दिन कहीं से इसे मिल ही जायगी और ज़रूर यह वहाँ उनसे जा मिलेगा।" अक्षय ने निश्चय किया कि दो-एक दिन में ही मैं ग़ाज़ीपुर जाकर रमेश का सब हाल सुन-समझ आऊँगा और इसके बाद एक बार काशी जाकर घनानन्द बाबू से भी भेट करूँगा।

एक दिन अक्षय चुपचाप कलकत्ते से चल दिया। अगहन की पूर्णमासी के दिन दोपहर के बाद हाथ में एक बैग लिये वह ग़ाज़ीपुर पहुँचा। पहले उसने बाज़ार में तलाश किया, "रमेश बाबू नाम के एक नये बंगाली वकील का मकान किधर है?" कितने ही लोगों से पूछा पर किसी ने क़ानून-पेशेवाले रमेश बाबू के मकान का कुछ पता न बताया। जब बाज़ार में उसके मकान का पता न लगा तब वह कचहरी की तरफ़ रवाना हुआ। कचहरी की छुट्टी होने के समय वह अदालत पहुँचा। चोग़ा-शमला पहने एक बंगाली वकील गाड़ी पर चढ़ने जा रहे

थे। अक्षय ने उनसे पूछा—महाशय! रमेशचन्द्र चौधरी नाम के एक नये वकील ग़ाज़ीपुर में आये हैं। उनका मकान किस महल्ले में है? आप जानते हों तो कृपा कर बता दीजिए।

अक्षय को उनसे ज्ञात हुआ कि रमेश अब तक चक्रवर्तीजी के घर में ही ठहरा था। मालूम नहीं, अब वहाँ है या नहीं। उसकी स्त्री कुछ दिन से ला-पता है। कहीं गङ्गाजी में डूबकर मर न गई हो।

अक्षय वहाँ से सीधा चक्रवर्तीजी के घर की ओर चला। वह मन ही मन सोचता जाता था कि अब रमेश की चाल का पता लगता जाता है। स्त्री मर ही गई है। अब वह निःसंकोच भाव से नलिनी के पास जाकर अपनी सत्यता प्रमाणित करने की चेष्टा करेगा कि किसी समय भी मेरे पत्नी न थी। नलिनी की जो हालत है उससे अधिकतर सम्भव है कि वह रमेश की बात पर कभी अविश्वास न करेगी। जो लोग बाहर से धर्म्म-नीति का डङ्का बजाते फिरते हैं वे भीतर से बड़े भयानक होते हैं, इसकी आलोचना करके अक्षय मन ही मन अपने प्रति विशेष श्रद्धा का अनुभव करने लगा।

चक्रवर्तीजी के पास जाकर अक्षय ने जब रमेश और कमला की बात पूछी तब चक्रवर्तीजी का शोक उमड़ पड़ा। उनकी आँखों से झर-झरकर आँसू गिरने लगे। उन्होंने कहा—जब आप रमेश बाबू के घनिष्ठ मित्र हैं तब आप मेरी धर्म-स्वरूपा कमला को आत्मीया की तरह जानते रहे होंगे। मैं यह

कहता हूँ कि कुछ ही दिनों की मुलाक़ात से मैं नहीं जानता था कि वह मेरी बेटी नहीं है। क्या कहूँ, दो दिन के लिए ममता करके मेरे हृदय में सदा के लिए तीव्र वेदना देकर वह इस दुनिया से चल बसेगी, यह मैं न जानता था।

अक्षय ने उदास मुँह बनाकर कहा—ऐसी घटना क्योंकर हुई, यह मेरी समझ में नहीं आता। जान पड़ता है, रमेश कमला के साथ अच्छा व्यवहार न करता था।

चक्रवर्ती—आप बुरा न मानिए—आपके रमेश को मैं आज तक न पहचान सका। यों तो बाहर से वह बड़ा ही सज्जन है किन्तु उसके मन में क्या बातें भरी हैं, वह क्या सोचता है, क्या करता है—यह कुछ भी समझ में नहीं आया। कमला सी सुशीला स्त्री का वह क्या समझकर अनादर करता था, यह मैं आज तक न जान सका। कमला बड़ी ही सती लक्ष्मी थी! मेरी लड़की के साथ उसका सगी बहन से भी बढ़कर स्नेह हो गया था। तब भी उसने अपने स्वामी के विरुद्ध एक भी बात नहीं कही। मेरी लड़की बीच-बीच में समझ जाती थी कि कमला के मन में बड़ा कष्ट हो रहा है, किन्तु आख़िरी दिन तक वह कमला के मुँह से उसके कष्ट की कोई भी बात न सुन सकी। ऐसी स्त्री कितना असह्य कष्ट सहने पर ऐसा काम कर सकती है, इसे आप स्वयं समझ लें। वह बात याद आने से कलेजा फटता है। फिर मैं ऐसा भाग्य का छोटा निकला कि तब इलाहाबाद चला गया था, नहीं तो बहूजी क्या मुझे छोड़कर जा सकतीं?

दूसरे दिन सबेरे अक्षय, चक्रवर्ती को साथ ले, रमेश का घर देखता हुआ गङ्गा के उस स्थान को देख आया। घर लौटकर उसने चक्रवर्ती से कहा—देखिए महाशय! कमला ने गङ्गा में डूबकर आत्महत्या कर ली है, इस बात को आप लोग जितना सच समझते हैं उतना मैं नहीं समझता।

चक्रवर्ती—तो आप क्या समझते हैं ?

अक्षय—मेरी समझ में वे घर छोड़कर कहीं चली गई हैं। हम लोगों को उनकी अच्छी तरह खोज करनी चाहिए।

चक्रवर्ती हठात् उत्तेजित होकर बोल उठे—आप ठीक कहते हैं। यह कुछ असम्भव नहीं।

अक्षय—यहाँ से काशी क़रीब ही है। वहाँ मेरे एक मित्र रहते हैं। हो सकता है, कमला उनके पास पहुँच गई हो।

चक्रवर्ती ने आशान्वित होकर कहा—रमेश बाबू ने तो मेरे आगे उनका कभी ज़िक्र नहीं किया। यदि मैं जानता होता तो क्या अभी तक यों चुपचाप बैठा रहता ?

अक्षय—तो एक बार चलिए, हम और आप दोनों काशी चलें। पश्चिम की सब जगह आपकी देखी-सुनी है। आप अच्छी तरह कमला का पता लगा सकेंगे।

चक्रवर्ती ने बड़े उत्साह से इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। अक्षय ज़ानता था कि नलिनी मेरी बात का सहज ही विश्वास न करेगी। इसलिए साक्षी-स्वरूप चक्रवर्ती को साथ लेता गया।

———

अड़तालीसवाँ परिच्छेद

शहर के बाहर, कैन्टोनमेन्ट में, एक किराये के बँगले में घनानन्द बाबू काशीवास कर रहे हैं।

काशी पहुँचते ही इन्हें ख़बर मिली कि कमलनयन की माता कल्याणी को पहले केवल ज्वर और खाँसी थी, किन्तु अब न्यूमोनिया हो गया है। बुख़ार की हालत में भी वे, इस जाड़े के समय, नित्य प्रातःस्नान का नियम निबाहे जाती थीं, इसी से उनकी बीमारी सङ्कटापन्न हो गई है।

नलिनी दिन-रात कल्याणी की सेवा-शुश्रूषा में लगी रहती थी। उसके कई दिनों के अविश्रान्त प्रयत्न करने के बाद कल्याणी की हालत कुछ-कुछ सुधरी। किन्तु तब भी वे निहायत कमज़ोर थीं। स्वयं उठ बैठ न सकती थीं। उनके अत्यन्त आचार-विचार करने के कारण पथ्य-पानी के सम्बन्ध में नलिनी कुछ काम न आई। इसके पूर्व कल्याणी किसी के हाथ का छुआ भोजन न करती थीं, अपने हाथ से रसोई बनाती थीं। अब कमलनयन उनके लिए पथ्य बनाकर देने लगा। भोजन के सम्बन्ध में माता की सेवा-टहल कमलनयन को अपने हाथ से करनी पड़ती थी। इससे उद्विग्न होकर कल्याणी जब-तब कहने लगतीं—हाय! मैं क्यों जी गई? मेरी मिट्टी उठ

जाती तो अच्छा होता। जान पड़ता है, विश्वेश्वर ने तुम लोगों को कष्ट देने ही के लिए मुझे बचा दिया है।

कल्याणी अपने आप तो कठोर आचार-विचार से रहती थीं परन्तु वे यह न चाहती थीं कि कोई वस्तु उनके समीप बेतरतीब रक्खी जाय। घर की सजावट पर उनकी दृष्टि विशेष रूप से रहती थी। यह बात नलिनी ने कमलनयन बाबू के मुँह से सुनी थी, इस कारण वह बड़े यत्न से कल्याणी के चारों ओर साफ़-सुथरा रखती थी और घर-द्वार की सजावट पर भी विशेष ध्यान रखती थी। वह आप भी कल्याणी के पास सज-धजकर आती थी। वह अपने बँगले की फुलवारी से प्रतिदिन फूल तोड़कर लाती और कल्याणी की रोगशय्या के पास उन फूलों को भाँति-भाँति से सजा देती थी।

कमलनयन ने माता की सेवा के लिए एक दासी रखने की कई बार चेष्टा की, परन्तु इनकी माँ ने दासी से सेवा कराना अस्वीकार किया। चौका-बर्तन करने और बाज़ार से सौदा वग़ैरह लाने के लिए टहलू और टहलुनी अवश्य थी किन्तु वे ख़ासकर अपनी सेवा के लिए अलग नौकरनी रखना फ़िज़ूल समझती थीं। जिस गोपाल की माँ ने बचपन में उन्हें पाला-पोसा था, वह जब से मर गई है तब से वे कठिन रोग के समय भी किसी दासी को पङ्खा झलने या हाथ-पाँव छूने नहीं देतीं।

उनका स्वभाव बड़ा ही कोमल था। वे छोटे-छोटे सुन्दर बच्चों को बहुत प्यार करती थीं। जब वे दशाश्वमेध घाट पर

प्रातःस्नान करके प्रत्येक शिवलिङ्ग पर जल-फूल चढ़ाती हुई घर को लौटती थीं तब रास्ते में जो छोटा बालक मिल जाता उसे खिलौना, मिठाई और पैसा देती थीं। इससे वे बालक उनके पीछे-पीछे उनके घर तक आते थे और जब-तब वे उनके घर के आस-पास खेलते फिरते थे। यह देखकर कल्याणी बहुत प्रसन्न होती थीं। दूसरे जब वे बाज़ार में कोई अच्छी चीज़ देखती थीं तब, अपने काम की न होने पर भी, ख़रीद लेती थीं। किस वस्तु को पाकर कौन .खुश होगा, इसे समझकर वे उन वस्तुओं को उपहार-स्वरूप जहाँ-तहाँ भेज देती थीं, इससे उनको बड़ी .खुशी होती थी। कभी-कभी उनके दूर के नातेदार भी इस तरह का कोई उपहार डाक द्वारा पाकर चकित होते थे। उनके पास एक आबनूस की लकड़ी का सन्दूक़ था। उसी में वे अपने पसन्द की अनावश्यक चीज़ें और रेशमी कपड़े रखती थीं। उन्होंने मन में ठीक कर रक्खा था कि जब नई बहू घर में आवेगी तब ये वस्तुएँ उसे दूँगी। उन्होंने अपनी पतोहू के स्वरूप की मन ही मन कल्पना कर रक्खी थी। जब वे आँखें मूँदती थीं तब उन्हें मालूम होता था, मानो उनकी परम सुन्दरी नई पतोहू उनके घर को अपनी रूपराशि से उज्ज्वल कर रही है, वे उसे अपने हाथ से सिंगारतीं और भूषण-वसन पहिनाती हैं। इसी भावना में उनके अनेक दिनों के अनेक अवसर बीते हैं।

वे तपस्विनी की भाँति रहकर समय बिताती थीं। सारा दिन उनका पूजा-पाठ में बीत जाता था। वे दिन भर में एक

बार थोड़ा सा दूध और फलमूल आदि खा लेती थीं। किन्तु आचार-विचार के सम्बन्ध में कमलनयन की इतनी बड़ी निष्ठा वे जी से पसन्द न करती थीं। बेटे का नियम-संयम देखने से उन्हें कष्ट होता था। वे कहती थीं—"पुरुषों को इतना आचार-विचार करने की क्या ज़रूरत?" पुरुषों को वे एक बड़े लड़के की तरह समझती थीं। खाने-पीने और घूमने-फिरने में लड़के के लिए नित्य-नियम का पालन कैसा! पुरुष के आचार-विचार पर वे जब-तब दयार्द्र होकर कहती थीं—"पुरुषों से ऐसे कठोर नियमों का पालन कैसे हो सकेगा?" अवश्य ही धर्म की रक्षा सबको करनी चाहिए किन्तु त्रिकाल-स्नान और हविष्य-भोजन आदि का नित्य-नियम और आचार-विचार पुरुषों के लिए नहीं है।—यही सिद्धान्त उन्होंने अपने मन में कर रक्खा था। कमल-नयन यदि अन्यान्य पुरुषों की तरह धर्मभीरु होकर आचार-विचार की विशेष परवा न करता और उनके पूजावाले कमरे में न जाता तथा असमय में उन्हें छूता नहीं तो इसी में वे ख़ुश रहतीं।

कल्याणी जब रोग से मुक्त हुईं तब उन्होंने देखा कि कमल-नयन के उपदेशानुसार नलिनी नाना प्रकार के नियमों का पालन कर रही है; और बूढ़े घनानन्द बाबू भी कमलनयन की सब बातों को ऐसी श्रद्धा और भक्ति के साथ ध्यान-पूर्वक सुनते हैं जैसे लोग गुरु के वाक्य को सुनते हैं।

इससे कल्याणी को बड़ा कौतूहल हुआ। उन्होंने एक दिन नलिनी को पुकारा और हँसकर कहा—बेटी! मैं देखती हूँ,

तुम सब कमलनयन को और भी पागल बना डालोगी। उसकी ये पागलपन की बातें तुम क्यों सुनती हो? तुम्हारी उम्र अभी हँसने-खेलने और सांसारिक सुख भोगने की है, साधना करने की नहीं। यदि पूछो कि "तुम क्यों यह किया करती हो?" तो इसका एक कारण है। मेरे माता-पिता बड़े नैष्ठिक थे। बचपन से हम सब भाई-बहिन उसी नियम-निष्ठा के भीतर पले, इससे हम सबका शरीर सहनशील हो गया है। बचपन का संस्कार अभी तक बना है। यही कारण है कि इस बुढ़ापे में भी किसी तरह नियम निबाहे जाती हूँ। यदि मैं यह सब छोड़ दूँ तो मेरे लिए दूसरा काम ही क्या रहेगा। किन्तु तुम सबके लिए तो यह बात नहीं है। तुम्हारी शिक्षा-दीक्षा किस तरह की है, यह मैं जानती हूँ। तुम जो कुछ साधन कर रही हो, यह केवल ज़बर्दस्ती कर रही हो। बेटी, इससे क्या लाभ होगा! बेटी, यह सब छोड़ दो। संसारी रीति-नीति के अनुसार चलो। तुम सबको अभी हविष्य-भोजन से क्या काम! योग-तप का इतना आडम्बर ही किस लिए? मेरा कमलनयन ही इतना बड़ा योगिराज कब से हो गया? वह इन बातों को क्या जाने? वह तो अभी कल तक मनमाने काम करके इधर-उधर घूमता था। शास्त्र की बातों से तो वह कोसों भागता था। मुझी को प्रसन्न करने के लिए उसने यह सब आरम्भ किया है। पर अब जो लक्षण देखती हूँ उससे जान पड़ता है कि वह किसी दिन पूरा संन्यासी होकर घर से निकल जायगा। मैं उसे बार-बार समझाकर

कहती हूँ "बचपन से तुम्हारा जो विश्वास है उसी पर स्थिर रहो। तुम्हारी पहले की समझ भी बुरी नहीं, तुम उस समझ के अनुसार चलो, मैं उससे अप्रसन्न न हूँगी।" सुनकर वह हँसता है—उसका स्वभाव ही ऐसा है। सब बातें चुप-चाप सुन लेता है। कुछ उत्तर नहीं देता।

तीसरे पहर दिन को नलिनी के बाल बाँधते-बाँधते इन बातों की चर्चा चलती थी। नलिनी जिस तरह बाल सँवारती थी वह कल्याणी को पसन्द न था। बाल बाँधने और चोटी गूँथने में कल्याणी बड़ी प्रवीण थीं। एक दिन ज़िक्र चलने पर उन्होंने कहा—मैं जितने प्रकार से बाल गूँथना जानती हूँ उतने भेद तुम अभी न जानती होगी। मुझे संयोग से एक मेम मिल गई थी। मैंने उससे सिलाई का काम सीखा था। उसी ने बाल गूँथने के कई भेद सिखा दिये थे। जब वह सिखलाकर चली जाती थी तब मुझे स्नान करके कपड़ा बदलना पड़ता था। संस्कार की भलाई-बुराई मैं नहीं जानती। पर बिना किये मुझसे रहा नहीं जाता। तुम सबों को जो मैं अपने खाने-पीने की कोई वस्तु छूने नहीं देती, उसका कुछ बुरा मत मानना। यह मत समझना कि मैं तुमसे घृणा करती हूँ। वह केवल एक अभ्यास है। कमलनयन जब दूसरे मत को मानता था, जब उसे आर्यधर्म से नफ़रत थी तब मैंने उसको और उसके अनाचार को बहुत कुछ सहन किया था। मैं उससे कुछ कहती भी न थी। मैं सिर्फ़ यही कहती थी कि "जो अच्छा समझो

करो, मैं मूर्ख स्त्री धर्म-कर्म का मर्म क्या समझूँ। हाँ, इतने दिन से जो करती आती हूँ उसे छोड़ नहीं सकती।" यह कहते-कहते कल्याणी ने आँचल से अपनी आँखों के आँसू पोंछ डाले।

नलिनी पर कल्याणी का स्नेह दिनोंदिन बढ़ने लगा। वे उसके बाल खोलकर अपने मन के माफ़िक़ बाँध देती थीं और फिर अपने आबनूस के सन्दूक़ से अपनी पसन्द की रङ्गीन साड़ी निकालकर नलिनी के पहिरने के लिए देतीं और अपने हाथ से उसका शृङ्गार करके बहुत प्रसन्न होती थीं। ऐसा करने में उन्हें बड़ा सुख मिलता था। नलिनी प्रायः रोज़ ही कल्याणी को अपनी सिलाई दिखला जाती थी। उन्होंने नलिनी को नित्य नये-नये क़िस्म की सिलाई की शिक्षा देना आरम्भ किया। यह सब उनके सन्ध्या समय का काम था। उन्हें मासिक पत्र और शिक्षाप्रद आख्यायिकाएँ पढ़ने का बड़ा शौक़ था। नलिनी के पास जो कुछ भाषा की सुपाठ्य पुस्तकें थीं सब कल्याणी के पास लाकर रख दीं। किसी लेख और पुस्तक के सम्बन्ध में कल्याणी की आलोचना सुनकर नलिनी चकित हो जाती थी। नलिनी न जानती थी कि बिना अँगरेज़ी पढ़े भी ऐसी प्रखर बुद्धि के साथ विचार किया जा सकता है। कमलनयन की माता की बातचीत, संस्कार और पवित्राचरण देख नलिनी उन्हें एक अद्भुत स्त्री समझने लगी। वह जो सोचकर यहाँ आई थी वह न हुआ। सारी बातें उसकी आशा के बाहर की निकलीं।

उनचासवाँ परिच्छेद

कल्याणी को फिर बुख़ार आने लगा। इस बार का बुख़ार बहुत दिन न रहा। कमलनयन ने सबेरे माता को प्रणाम करके उनके पैर की धूल लेते समय कहा—माँ, अब कुछ दिन तुम्हें रोगी की तरह संयम करके रहना होगा। तुम्हारा शरीर अत्यन्त दुर्बल हो गया है। इस दशा में तुम उन कठोर नियमों का पालन कैसे करोगी।

कल्याणी—मैं रोगी के नियम से रहूँ और तुम योगी के नियम से! तुम्हारी ये बातें अब बहुत दिन न चलेंगी। मैं तुम्हें आज्ञा देती हूँ, इस बार तुमको ब्याह करना ही होगा।

कमलनयन चुपचाप बैठा रहा। कल्याणी ने कहा—देखो बेटा! मेरा यह शरीर अब अधिक दिन न ठहरेगा। तुमको संसारी देखकर मैं सुखपूर्वक मर सकूँगी। पहले मेरे मन में यह उत्कण्ठा रहती थी कि कब मेरे घर में एक छोटी सी नई बहू आवेगी, कब मैं उसे अपने हाथ से सिखा-पढ़ाकर होशियार बनाऊँगी, कब उसे अच्छे-अच्छे भूषण-वसन पहना-ओढ़ाकर अपने नयन जुड़ाऊँगी। किन्तु इस बार की बीमारी में भगवान् ने मुझे चैतन्य कर दिया है। अब मेरी ज़िन्दगी का क्या ठिकाना। कब इस देह-पिञ्जर से प्राण-पक्षी उड़ जाय, इसका निश्चय नहीं। आज हूँ, कल

न रहूँगी। ऐसी अवस्था में छोटी सी बहू को तुम्हारे गले बाँध जाने से तुम बड़ी मुश्किल में पड़ जाओगे। इसलिए मैं चाहती हूँ कि तुम किसी सयानी लड़की से ब्याह करो। ज्वर के वेग में जब मैं इन बातों को सोचती थी तब इसी सोच-विचार में मुझे रात भर नींद न आती थी। मेरे मन की सब साध पूरी हो गई। यही एक लालसा है कि तुम्हारी दुलहिन कब घर में आवेगी। जब तक मेरा यह मनोरथ पूरा न होगा तब तक मेरे चित्त को शान्ति न मिलेगी। एक इसी काम के लिए मैं जीवित हूँ।

कमलनयन—जो हमारी इच्छा के अनुसार चल सके, ऐसी लड़की कहाँ मिलेगी?

कल्याणी—यह मैं ठीक करके तुमसे कहूँगी। उसके लिए तुम चिन्ता न करो।

अब तक कल्याणी कभी घनानन्द बाबू के सामने न हुई थी। साँझ होने के कुछ पूर्व नित्य नियमानुसार घनानन्द बाबू घूमते-घूमते जब कमलनयन बाबू के घर आये तब कल्याणी ने उन्हें अन्दर बुला भेजा। उनसे कहा—आपकी लड़की बड़ी सुशीला है। उस पर मेरा अनुराग बहुत बढ़ गया है। मेरे कमलनयन को तो आप जानते ही हैं। उसमें किसी तरह का कोई दोष नहीं है। डाक्टरी में भी उसने अच्छा नाम हासिल किया है। आपको अपनी लड़की के लिए ढूँढ़ने से भी क्या ऐसा उत्तम वर जल्दी मिल जायगा?

घनानन्द ने अत्यन्त उल्लसित होकर कहा—इस बात की आशा करने का भी मेरे मन में साहस न होता था। यदि कमलनयन के साथ मेरी लड़की का ब्याह हो तो इससे बढ़कर मेरा सौभाग्य और क्या हो सकता है! लेकिन क्या वे—

कल्याणी—उसे कोई उज्र न होगा। वह आज-कल के लड़कों की तरह ख़ुदमुख़्तार नहीं। वह मेरी बात मानता है। वह कभी मेरी बात न टालेगा। और इसमें दबाव डालने की कोई बात भी नहीं है। कौन ऐसा होगा जो आपकी लड़की को पसन्द न करे? मैं इस काम को झटपट कर लेना चाहती हूँ। क्योंकि मेरे शरीर की अवस्था अच्छी नहीं। किस घड़ी इस संसार से उठ जाऊँगी, इसका निश्चय नहीं।

घनानन्द उस रात को बड़े ही प्रसन्न होकर घर गये। घर में उन्होंने नलिनी को बुलाकर कहा—बेटी, अब मेरा बुढ़ापा है। मेरा शरीर भी बराबर रुग्ण रहता है। तुम्हारा विवाह बिना किये चल देने से मेरी आत्मा को सुख न मिलेगा। तुम मुझसे संकोच न करो, तुम्हारा बाप या माँ जो समझो मैं ही हूँ। मेरे ही ऊपर तुम्हारा सारा बोझ है।

नलिनी उत्कण्ठा भरी दृष्टि से पिता के मुँह की ओर देखने लगी। घनानन्द ने कहा—तुम्हारे ब्याह की एक ऐसी जगह बातचीत हो रही है जिसे सुनकर मेरे हृदय में आनन्द रखने के लिए जगह नहीं। मुझे डर है कि इसमें पीछे कोई विघ्न

न आ पड़े। आज कमलनयन की माँ ने स्वयं मुझे बुलाकर अपने पुत्र के साथ तुम्हारे ब्याह का प्रस्ताव किया है।

नलिनी अत्यन्त संकुचित होकर नीची नज़र करके बोली—नहीं, नहीं, यह कभी नहीं हो सकता।

कमलनयन के साथ ब्याह की बात उसे एकदम असम्भव जान पड़ी। कमलनयन के सदृश महात्मा क्या कभी ब्याह कर सकता है? एकाएक पिता के मुँह से यह प्रस्ताव सुन-कर वह मारे लज्जा के सिकुड़ गई।

घनानन्द ने पूछा—क्यों नहीं हो सकता?

नलिनी—कमलनयन बाबू! यह भी क्या कभी हो सकता है?

इस ढँग का उत्तर भी भला कोई उत्तर है। किन्तु युक्ति की अपेक्षा यह कई गुना प्रबल है। नलिनी अब वहाँ न रह सकी। उठकर बरामदे में चली गई।

घनानन्द बाबू बड़े सोच में पड़ गये। उन्हें इस तरह की बाधा होने की कुछ भी आशङ्का न थी। बल्कि उनकी धारणा तो यह थी कि कमलनयन के साथ विवाह होने का प्रस्ताव सुनकर नलिनी मन ही मन प्रसन्न होगी। वे उदास होकर शमादान की ओर देखने और स्त्री-प्रकृति का अचिन्त्य रहस्य तथा नलिनी की माँ के न रहने की बात सोचने लगे।

नलिनी देर तक बरामदे में अँधेरे में बैठी रही। इसके बाद उसने एक बार घर की ओर झाँककर देखा। पिता

को उदास मुँह किये चिन्ता में डूबे देखकर वह दुखी हुई। उसने झट पिता के पीछे जाकर उनके बालों में उँगली फेरते-फेरते कोमल स्वर में कहा—बाबूजी, चलिए, बहुत देर से भोजन की सामग्री रक्खी है, ठण्डी हो गई होगी।

घनानन्द बाबू, कठपुतली की तरह, भोजन करने गये; पर आज अच्छी तरह भोजन न कर सके। नलिनी के ब्याह का ऐसा अच्छा प्रस्ताव सुनकर वे बड़े आशान्वित हुए थे, परन्तु नलिनी की ओर से इतना बड़ा व्याघात पाकर उनके मन का उत्साह भङ्ग हो गया। वे एकदम हताश हो गये। नलिनी की बात सोचते-सोचते एकाएक उनके मन में यह प्रश्न उठा "तो क्या यह रमेश को अब तक भूली नहीं है ?"

और दिन वे भोजन करके शीघ्र ही सोने को चले जाते थे। आज वे बरामदे में आरामकुरसी पर बैठकर बाग़ के सामने-वाली कन्टूनमेन्ट की सड़क की ओर देखने और मन ही मन कुछ सोचने लगे। नलिनी ने मुस्कुराकर कहा—बाबूजी, यहाँ बड़ी ठण्डी हवा आती है, अब सोने को चलिए।

घनानन्द—तुम सोओ, मैं ज़रा ठहरकर सोऊँगा।

नलिनी चुपचाप उनके पास खड़ी रही। कुछ देर बाद उसने फिर कहा—बाबूजी! आपको जाड़ा लगता है, न हो तो कमरे के भीतर ही चलकर बैठिए।

घनानन्द उठे, और चुपचाप कमरे में जाकर चारपाई पर लेट रहे।

रमेश की बात का मन में आन्दोलन करके नलिनी अपने आपको इसलिए पीड़ित न करती थी कि शायद इससे मेरे कर्तव्य में बट्टा लग जावे। इसी लिए वह अब तक अपने साथ ख़ूब लड़ाई लड़ती रही है। परन्तु जब बाहर से उस पर किसी तरह का दबाव डाला जाता था तब उसके हृदय के फफोले फूटने लगते थे और उसे मर्मान्तिक कष्ट होता था। वह अपने भविष्य जीवन को किस तरह बितावेगी, इसका कोई स्पष्ट उपाय उसे न सूझता था। इसके लिए वह कोई सुदृढ़ अवलम्ब ढूँढ़ रही थी। आख़िर कमलनयन बाबू को गुरु बनाकर वह उनके उपदेशानुसार चलने को तैयार हुई थी। किन्तु ज्योंही उसे विवाह का प्रस्ताव सुनाकर उसके गम्भीरतम हृदय का प्रेम-बन्धन तोड़ने की चेष्टा की जाती त्योंही वह समझती थी कि वह बन्धन कैसा कठिन है। उसे तोड़ने के हेतु किसी को उद्यत देख नलिनी व्याकुल होकर अपना समस्त मानसिक बल लगाकर उस बन्धन को पकड़ लेती थी।

पचासवाँ परिच्छेद

इधर कल्याणी ने कमलनयन से कहा—मैंने तुम्हारे ब्याह की बातचीत पक्की कर ली।

कमलनयन ने मुस्कुराकर कहा—बिलकुल ही पक्की कर ली?

कल्याणी—नहीं तो क्या? क्या मैं हमेशा जीती रहूँगी? मैं जो कहती हूँ सो सुनो, मैंने नलिनी ही को पसन्द किया है। ऐसी अच्छी लड़की खोजने पर भी न मिलेगी। रङ्ग वैसा गोरा नहीं है परन्तु—

कमलनयन—दुहाई माँजी! मैं गोराई की बात नहीं सोचता, किन्तु उसके साथ ब्याह कैसे होगा? यह क्या कभी हो सकता है?

कल्याणी—यह तुम क्या कहते हो! न होने का तो कोई कारण नहीं देख पड़ता।

कमलनयन को इसका उत्तर देना कठिन हो गया। किन्तु नलिनी—जिसको इतने दिन से वह गुरु की हैसियत से निः-सङ्कोच होकर उपदेश देता आया है, उसके साथ एकाएक विवाह का प्रस्ताव सुनकर उसे मानों लज्जा ने घेर लिया।

कमलनयन को चुप देख कल्याणी ने कहा—मैं इस बार तुम्हारा कोई उज्र न सुनूँगी। मेरे लिए जो तुम इस तरुण अवस्था में सब छोड़-छाड़कर काशीवास करके तपस्या करो

यह मैं किसी तरह न देख सकूँगी। अब जो ब्याह का मुहूर्त स्थिर होगा, वह व्यर्थ न जायगा, यह मैं अभी से रखती हूँ।

कमलनयन ज़रा ठहरकर बोला—माँजी सुनो, मैं तुमसे एक बात कहता हूँ। पर यह भी पहले ही कहे देता हूँ कि सुनकर घबरा मत जाना। जिस घटना की बात कहता हूँ उसे आज नौ-दस महीने हो गये। अब उसके लिए चिन्तित होने की कोई आवश्यकता नहीं। किन्तु तुम्हारा ऐसा कोमल स्वभाव है कि कोई अमङ्गल बात बीत जाने पर भी उसकी चिन्ता तुम्हारे मन से सहसा नहीं जाती; इसी लिए कितने दिनों से कहने की इच्छा रहने पर भी मैं आज तक तुमसे कुछ न कह सका। मेरी ग्रहशान्ति के लिए तुम जितना चाहो पूजा-पाठ कराओ, यह तुम्हारी .खुशी है; परन्तु व्यर्थ अपने मन को कष्ट न देना।

कल्याणी ने उद्विग्न होकर कहा—न-जाने तुम क्या कहोगे। किन्तु तुम्हारी भूमिका सुनकर अभी से मेरा हृदय काँपता है। जब तक इस दुनिया में हूँ, अपने को दुःख से कहाँ तक बचाकर रख सकती हूँ। मैं तो अमङ्गल की बात से दूर रहना चाहती हूँ, परन्तु उसे क्या कहीं से खोजकर लाना पड़ता है। वह आप ही आकर सिर पर सवार हो जाता है। अच्छा, बात भली हो चाहे बुरी, तुम एक बार कह सुनाओ।

कमलनयन—मैं इसी माघ महीने में अपना सब सामान बेचकर और अपने बाग़वाले मकान को भाड़े पर उठाकर रङ्गपुर से बिदा हुआ। कुछ दूर आगे आकर न मालूम मेरे मन में क्या आया, कि मैंने रेलगाड़ी के बदले कलकत्ते तक नाव की सवारी से ही जाने का निश्चय किया। इसलिए सीधे घाट पर जाकर एक देशी नाव पर सवार हो चल पड़ा। दो दिन का रास्ता पार कर एक बालू के टीले के पास नाव रोकवा-कर मैं स्नान करने लगा। उसी समय एकाएक देखा कि भूपेन्द्र हाथ में बन्दूक़ लिये सामने खड़ा है। मुझको देखते ही उसने आनन्द से उछलकर कहा—'शिकार की खोज में आने से मुझे आज बहुत बढ़िया शिकार मिला।' वह उसी तरफ़ कहीं डिपुटी मैजिस्ट्रेट था। उस समय दौरे पर था, ख़ीमे से निकलकर उधर घूमने आया था। बहुत दिनों बाद भेंट हुई थी। वह मुझे कब छोड़ सकता था। मुझे साथ लेकर देहात की सैर करने लगा। एक दिन धर्मपुष्कर नाम की एक जगह उसका ख़ीमा पड़ा। दिन के तीसरे पहर हम दोनों घूमने के लिए तम्बू से बाहर निकले। बस्ती बिलकुल पुरानी थी और वह भी छोटी सी। एक खेत के पास एक फूस के घर में हम दोनों पहुँचे। हम दोनों के बैठने के लिए घर का मालिक भीतर से दो मूढ़े उठा लाया। टूटे त.ख्त पर स्कूल के मुदर्रिस पैर फैलाये बैठे थे। ओसारे के नीचे, ज़मीन में बैठे हुए, लड़के हाथ में स्लेट लिये .खूब कोलाहल के साथ विद्या का

अभ्यास कर रहे थे। घर के मालिक का नाम तारिणीचरण था। भूपेन्द्र बाबू से उन्होंने मेरा परिचय पूछा। खीमे में लौट आने पर भूपेन्द्र ने मुझसे कहा—तुम्हारा नसीब अच्छा है। तुम्हारे ब्याह की बातचीत हो रही है। मैंने कहा—कैसी बातचीत? भूपेन्द्र—"यह तारिणीचरण सूदखोर है। इसकी बराबरी का सूम संसार में न होगा। भारी कंजूस है। यह जो अपने यहाँ इसने स्कूल को जगह दे दी है सो इसके लिए, जब कभी कोई नया मजिस्ट्रेट आता है तभी उसके आगे, यह अपनी लोकहितैषिता का विशेष आडम्बर करता है। किन्तु स्कूल के मुदर्रिस को केवल भोजन देकर दस बजे रात तक उससे सूद का हिसाब कराता है। कुछ मदद सरकार देती है और कुछ रक़म फ़ीस से वसूल हो जाती है। इसी से मास्टर साहब को तनख़्वाह दी जाती है। तारिणी की एक बहन, पति-वियुक्ता होने पर, कहीं आश्रय न मिलने के कारण इसके पास आई। वह गर्भिणी थी। यहाँ आकर उसके एक कन्या हुई परन्तु उचित पथ्य-पानी न होने से बहन बेचारी मर गई। इसकी एक और विधवा बहन थी। उससे यह घर का सारा काम करवाकर नौकरनी रखने का ख़र्च बचाता था। उसी ने इस लड़की को, माँ की तरह, पाला-पोसा। लड़की के कुछ बड़ी होते ही उसकी मौसी की भी मृत्यु हो गई। तब से वह मातृपितृहीना बालिका, बराबर मामा और मामी की सेवा-टहल में हाज़िर रहकर

दिन-रात उनकी झिड़कियाँ सहती हुई, बड़े दुःख से समय बिताने लगी। अब वह ब्याहने योग्य हो गई है, परन्तु ऐसी अनाथ बालिका को कौन अपनी बहू बनावेगा ? ख़ासकर यहाँ उसके माँ-बाप का कोई परिचय तक नहीं जानता। पितृ-हीन अवस्था में उस लड़की का जन्म हुआ था, इसके लिए महल्ले के कुछ निठल्ले आदमी सन्देह भी करते हैं। सभी जानते हैं कि तारिणी के पास बेहिसाब रुपया है। लोगों की इच्छा है कि इस लड़की की शादी में तारिणी का ख़ूब रुपया ख़र्च हो। कन्या के सम्बन्ध में दोष देकर सब लोग इस बैल को दुहना चाहते हैं। इसी से अब तक लड़की के ब्याह की बात कहीं पक्की नहीं हुई। चार वर्ष से वह बराबर इस लड़की की उम्र दस वर्ष की बताता आता है। अतएव हिसाब से उसकी अवस्था अब चौदह वर्ष से कम न होगी। जो हो, लड़की का नाम भी कमला है, और रूप-गुण में भी वह कमला की मूर्ति ही है। ऐसी सुन्दरी लड़की मैंने तो नहीं देखी। इस गाँव में किसी विदेशी युवक ब्राह्मण को उपस्थित देख तारिणी उसके हाथ-पैर जोड़ता है कि उस लड़की के साथ ब्याह कर ले। यदि कोई राज़ी हो भी जाता है तो गाँव के लोग लड़की के सम्बन्ध में कुछ खोटी बात कह-सुनकर उसे भगा देते हैं। इसलिए अब की बार अवश्य ही तुम्हारा नम्बर है।" इस पर मैंने बिना कुछ सोचे-विचारे कहा—"मैं उस लड़की के साथ ब्याह करूँगा।" इसके पूर्व

ही मैंने निश्चय कर लिया था कि एक कट्टर हिन्दू के घर की लड़की से ब्याह कर उसे ले आऊँगा और तुम्हें विस्मित कर दूँगा। मैं जानता था कि बड़ी उम्र की ब्राह्म लड़की को घर लाऊँगा तो उससे कोई भी सुखी न रह सकेगा। मेरी बात सुनकर भूपेन्द्र को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने कहा—"सच कहो।" मैंने कहा—"सच नहीं तो क्या, मैं तुमसे झूठ कहता हूँ। मैंने अपना सिद्धान्त पहले से स्थिर कर लिया है।" भूपेन्द्र—"तो बात पक्की हुई।" मैं—"हाँ, बिलकुल पक्की।"

उसी दिन साँझ को स्वयं तारिणी चट्टोपाध्याय हम लोगों के डेरे में आया। उसने हाथ जोड़कर मुझसे कहा—"आपको मेरा उद्धार करना होगा। आप लड़की को पहले अपनी आँख से देख लीजिए, पसन्द न हो तो दूसरी बात है, परन्तु मेरे दुश्मनों की बात न सुनिए।" मैंने कहा—"देखने की ज़रूरत नहीं। आप मुहूर्त स्थिर कीजिए।" तारिणी ने कहा—"परसों का दिन बड़ा अच्छा है। परसों ही यह काम हो जाय।" शीघ्रता की दुहाई देकर ब्याह में यथासाध्य ख़र्च बचाने की उसकी इच्छा थी। सो उस दिन ब्याह हो गया।

कल्याणी चौंक उठी। बोली—अयँ! ब्याह हो गया! सच कहो बेटा!

कमलनयन—हाँ, हो गया। बहू के साथ नाव पर सवार हुआ। जिस दिन पिछले पहर मैं नाव पर चढ़ा उसी दिन

सूर्यास्त होने के एक दण्ड उपरान्त न मालूम कहाँ से आँधी आकर, बात की बात में, नाव उलटाकर किधर गई क्या हुई !

कल्याणी—नारायण !

उनका सम्पूर्ण शरीर भय से काँपने लगा।

कमलनयन—कुछ देर के बाद जब होश हुआ तब मैंने देखा कि मैं नदी में तैर रहा हूँ। परन्तु पास में नाव या नौकारोही का कुछ चिह्न मात्र भी न था। मैं तैरकर किसी तरह किनारे लगा। पुलिस में ख़बर देकर मैंने बहुत खोज कराई, परन्तु कोई फल न हुआ।

कल्याणी का चेहरा पीला हो गया। उन्होंने कहा—जो बात हो गई सो हो गई, अब उसकी चर्चा मेरे आगे कभी मत करना। इस दुर्घटना का स्मरण होते ही मेरा हृदय काँपने लगता है।

कमलनयन—यह बात मैं आप से कभी न कहता, परन्तु विवाह के लिए आप बार-बार ज़िद करती हैं, इसी से कहनी पड़ी।

कल्याणी—एक बार दैवयोग से दुर्घटना हो गई, इससे क्या तुम इस जीवन में फिर कभी विवाह न करोगे ?

कमलनयन—करूँगा क्यों नहीं, परन्तु यदि वह बच गई हो तो ?

कल्याणी—तुम पागल तो नहीं हो गये ? अगर वह बच गई होती तो क्या तुम्हें ख़बर न देती ?

कमलनयन—उसे क्या मेरा पता मालूम था ! वह जानती तक न थी कि मैं कहाँ का रहनेवाला हूँ और क्या मेरा नाम है। मैं उसके लिए सर्वथा बे-जान-पहचान का आदमी था। उसे प्रायः मेरा मुँह देखने का भी अवसर नहीं मिला। काशी आकर मैंने तारिणी चटरजी को एक पत्र लिखा था। उत्तर में जो उनकी चिट्ठी आई उससे ज्ञात हुआ कि उन्हें भी कमला की कुछ ख़बर मालूम नहीं।

कल्याणी—तो फिर ?

कमलनयन—मैंने मन में यही निश्चय किया है कि पूरे एक वर्ष तक उसकी राह देखकर तब समझूँगा कि वह संसार में नहीं है।

कल्याणी—सभी बातों में तुम यों ही अरसा कर देते हो। एक वर्ष तक रास्ता देखने की ज़रूरत ?

कमलनयन—वर्ष पूरा होने में अब विलम्ब ही कितना है ! यह अगहन है, पूस में ब्याह होगा ही नहीं, इसके बाद माघ बिताकर फागुन में देखा जायगा।

कल्याणी—अच्छी बात है। लड़की यही ठीक रही। मैंने नलिनी के पिता को वचन दे दिया है।

कमलनयन—मनुष्य केवल वचन दे सकता है, परन्तु उसको पूरा करने का भार ईश्वर के हाथ में है। उनकी जो इच्छा होगी वही होगा।

कल्याणी—बेटा, तुम्हारा वह वृत्तान्त सुनकर अब भी मेरा शरीर काँपता है।

कमलनयन—यह मैं जानता हूँ। तुम्हारा मन क्या अब शीघ्र स्थिर होगा? दिन-रात तुम्हारे मन में इस बात की चिन्ता लगी रहेगी। इसी से मैं तुम्हारे आगे ऐसी बातों का ज़िक्र करना नहीं चाहता।

कल्याणी—अच्छा ही करते हो। आज-कल न मालूम मेरा कैसा स्वभाव हो गया है! कोई अनिष्ट संवाद सुनने से मेरे मन में उसकी बड़ी चिन्ता होती है। वह किसी भी तरह दूर नहीं होती। डाक का पत्र खोलते मुझे भय होता है, शायद उसमें कुछ बुरी ख़बर न हो। इसी लिए तो मैंने तुम सब से कह भी रक्खा है, कि मुझे कोई ख़बर न सुनाओ। मैं तो अब एक तरह से अपने को मरी हुई समझती हूँ। मुझसे कुछ कहने की जरूरत ही क्या!

इक्यावनवाँ परिच्छेद

कमला जब गङ्गा के किनारे जा पहुँची तब सूर्यास्त होने में विलम्ब न था। शीतकाल का सूर्य अपना तेज अग्नि में रखकर अस्ताचल की ओर आश्रय लेने को पहुँच गया था। उस शान्त-स्वरूप सायङ्कालिक सूर्यदेव को कमला ने हाथ जोड़ प्रणाम किया। इसके बाद गङ्गाजी का जल सिर पर छिड़क-कर वह जल में धँसी। घुटने तक पानी में जाकर उसने गङ्गाजी को अञ्जलि भरकर जल चढ़ाया और फूल बहाये। फिर समस्त गुरुजनों का स्मरण करके सिर नवाया। उन सबों को प्रणाम करके सिर उठाते ही उसे एक और प्रणम्य व्यक्ति की सुध आई। किसी दिन उसने उनके मुँह की ओर न देखा था। एक दिन रात को जब वह उनके पास बैठी थी तब उनके पैरों को भी वह सङ्कोच के मारे न देख सकी थी। कोहबर में अन्य स्त्रियों से जो उन्होंने दो-चार बातें कही थीं वह भी, लज्जा में डूबी रहने के कारण उसने, घूँघट के भीतर, स्पष्ट न सुनीं। उनके उस कण्ठस्वर की याद करने के लिए आज इस गङ्गा के किनारे निर्जन स्थान में खड़ी होकर उसने एकान्त मन से बड़ी चेष्टा की, परन्तु किसी तरह वह उसको स्मरण न कर सकी।

आधी रात के बाद उसके ब्याह का मुहूर्त था। बहुत रात तक जागते रहने के कारण थकी हुई वह कब कहाँ सो गई, इसका भी उसे कुछ स्मरण नहीं। सबेरे जागने पर देखा, उसकी एक सखी उसे ठेलकर, जगाकर, खिलखिला रही है—शय्या पर और कोई न था। जीवन के इस शेष काल में प्राणेश्वर के स्मरण-ध्यान करने का कुछ भी साधन उसके पास न था। उस ओर बिलकुल ही अँधेरा है, न कोई मूर्त्ति है, न कोई वाक्य है न कोई चिह्न! जिस लाल वस्त्र के साथ उनकी चादर का ग्रन्थि-बन्धन हुआ था, तारिणीचरण की दी हुई उस थोड़े दाम की चूँदरी का मूल्य कितना अधिक है, यह बात कमला न जानती थी। इसी से उसने उस चूँदरी को भी यत्नपूर्वक नहीं रक्खा।

रमेश ने नलिनी को जो चिट्ठी लिखी थी वह कमला के आँचल में बँधी थी। वह बालू पर बैठ गई और उस चिट्ठी को खोलकर उसका कुछ अंश सायङ्काल के प्रकाश में पढ़ने लगी। उस अंश में उसके स्वामी का परिचय था। बात अधिक न थी, केवल इतना ही लिखा था—उसके स्वामी का नाम कमलनयन चट्टोपाध्याय है, और वे रङ्गपुर में पहले डाक्टरी करते थे, अब वहाँ नहीं हैं, यह भी मालूम नहीं कि कहाँ हैं। बस, इतना ही। चिट्ठी का बाक़ी अंश उसे खोजने पर भी नहीं मिला। "कमलनयन" यह नाम उसके मन में अमृत बरसाने लगा। मानो उस नाम ने एक कल्पित मूर्ति धारण

कर उसे अपनी छाती से लगा रक्खा। कुछ देर के लिए वह प्रेम के आवेश में आकर बेसुध हो रही। उसकी आँखों से आँसू की धार बह चली। उस अविरल धारा ने उसके हृदय को आर्द्र कर दिया। इससे उसके हृदय का असह्य दुःख-दाह शान्त सा हो गया। उसका अन्तःकरण कहने लगा—"न यह शून्यता है न अन्धकार—मैं देख रहा हूँ, वह जो है मेरा ही है!" तब वह ढाढ़स बाँधकर बोली—यदि मैं सती हूँ तो इसी जीवन में एक न एक दिन उनके पैरों की धूल मेरे मस्तक में लगेगी ही। विधाता कभी मेरे मनोरथ को विफल न करेंगे। जब मैं जीवित हूँ तब वे भी इस संसार में अवश्य ही होंगे। उन्हीं की सेवा करने के लिए भगवान् ने मुझे बचा रक्खा है।

उसने अपने रूमाल में बँधे कुञ्जियों के गुच्छे को वहीं फेंक दिया। रमेश की दी हुई सोने की चेन भी झट उसने गले से उतारकर पानी में फेंक दी। इसके बाद वह सीधी पच्छिम ओर रवाना हुई। कहाँ जायगी, क्या करेगी, इसका कुछ निश्चय उसके मन में न था। वह केवल इतना ही जानती थी कि मुझे चलना होगा, घड़ी भर भी ठहरने के लिए अब मुझे यहाँ जगह नहीं।

शीतकाल के सायंकालिक प्रकाश को जाते देर न हुई। चारों ओर अन्धकार छा गया। बालू की सफ़ेदी को छोड़ और कुछ नज़र नहीं आता। अकस्मात् एक जगह से मानों किसी ने विचित्र रचनावली के बीच में से सृष्टि की चित्रलेखा

को एकदम मेट डाला है। अँधेरे पाख की रात अपनी सारी पलकहीन पुतलियों से नदी-किनारे पर बहुत ही धीरे-धीरे साँस छोड़ रही है।

कमला के सामने गृहहीन अनन्त अन्धकार है, और कुछ भी नहीं। उसे चला जाना है—कहीं पहुँचेगी भी या नहीं, यह सोचने का उसमें सामर्थ्य भी नहीं।

नदी के किनारे ही किनारे जाने की बात उसने स्थिर की है। ऐसा करने से किसी से मार्ग पूछना न होगा, और यदि मार्ग में उसके ऊपर कोई विपत्ति आवेगी, कोई उस पर आक्रमण करना चाहेगा, तो तुरन्त ही गङ्गा की गोद में उसे आश्रय मिलेगा।

आकाश में कुहरा कहीं नाम लेने को भी न था। कृष्णपक्ष की रात ने चारों ओर ख़ासे अन्धकार की क़नात लगा दी; किन्तु उसकी दृष्टि में कोई बाधा न दी।

क्रमशः रात गहरी होने लगी। रबी की फ़सल खेतों में लहरा रही थी, जिसके पास से एक बार गीदड़ बोल गये। मनुष्य का कण्ठस्वर कहीं सुनाई नहीं देता। बालू पर बहुत दूर तक चलने के बाद कमला कच्ची सड़क पर आ गई। नदी के पास ही एक गाँव दिखाई दिया। कमला ने कम्पित हृदय से गाँव के पास आकर देखा, सर्वत्र सन्नाटा छाया है, बस्ती के सब लोग सो रहे हैं। वह डरती हुई गाँव के बाहर निकल गई। परन्तु अब उसमें चलने की शक्ति न रही। वह ऐसी

जगह जा पहुँची जहाँ से आगे बढ़ने का कोई ठीक रास्ता मालूम न हुआ। थकी तो थी ही, पास ही एक बड़ के पेड़ के नीचे सो रही। सोते ही वह गाढ़ निद्रा में निमग्न हो गई।

ख़ूब तड़के जागकर उसने देखा कि कृष्णपक्ष के चन्द्रमा के धुँधले प्रकाश से अन्धकार क्षीण हो गया है। एक अधेड़ स्त्री उसके सामने खड़ी-खड़ी उससे पूछ रही है—तुम कौन हो? जाड़े की रात में इस पेड़ के नीचे कौन पड़ी है?

कमला चकित होकर उठ बैठी। देखा, समीप ही घाट पर दो डोंगियाँ बँधी हैं। वह अधेड़ स्त्री, और लोगों के जागने के पूर्व ही, स्नान करने के लिए आई है।

औरत ने कहा—तुम तो बङ्गालिन जान पड़ती हो?

कमला—हाँ, मैं बङ्गालिन ही हूँ।

औरत—तुम यहाँ क्यों पड़ी हो?

कमला—मैं काशी जाने के लिए घर से आई हूँ। चलते-चलते थक गई। रात भी कुछ अधिक हो गई। नींद आई तो यहीं सो रही।

औरत—अरे बप्पा रे! तुम पैदल ही काशी जा रही हो? अच्छा, नाव पर चलो, मैं स्नान करके आती हूँ।

स्नान कर चुकने पर इस स्त्री ने कमला का परिचय लिया।

ग़ाज़ीपुर में जिन श्रीपति बाबू के यहाँ बड़े समारोह के साथ ब्याह का उत्सव हुआ था वे इसके नातेदार हैं। इस औरत का नाम महामाया है और इसके स्वामी का नाम

मुकुन्द दत्त है। वह कुछ दिन से काशीवास कर रहा है। ये नातेदार के निमन्त्रण को लौटा न सके थे और दो नावें इसलिए ले गये थे जिसमें उनके घर खाना न पड़े। श्रीपति बाबू की स्त्री के आग्रह करने पर महामाया ने कहा था—जानती तो हो उनकी तबीयत ख़राब रहती है। लड़कपन से ही उनको अभ्यास और ही तरह का है। घर की गाय के दूध का जो मक्खन होता है उसी घी में उनके लिए पूरी-तरकारी बनाई जाती है—और उस गाय को भी ऐरी ग़ैरी चीज़ें नहीं खिलाई जातीं—इत्यादि।

महामाया ने पूछा—तुम्हारा नाम क्या है?

कमला—कमला।

महामाया—तुम्हारी माँग में सिन्दूर है। तो तुम सुहागिन हो?

कमला—ब्याह होने के दूसरे ही दिन मेरे स्वामी ग़ायब हो गये हैं। मुझे मालूम नहीं, वे कहाँ चले गये।

महामाया—हा राम! यह क्या हुआ! तुम्हारी उमर तो अभी अधिक नहीं जान पड़ती। (उसे सिर से पैर तक निहार-कर कहा) पन्द्रह वर्ष से अधिक न होगी।

कमला—मैं ठीक-ठीक नहीं जानती कि मेरी उमर कितनी है। शायद पन्द्रह वर्ष की ही हो।

महामाया—तो तुम ब्राह्मण की लड़की हो?

कमला—हाँ।

महामाया—तुम्हारा घर कहाँ है ?

कमला—ससुराल तो मैं गई नहीं। मेरे बाप का घर जगदीशपुर में है।

कमला का नैहर जगदीशपुर में ही था, यह उसे मालूम था।

महामाया—तुम्हारे माँ-बाप—

कमला—नहीं हैं।

महामाया—हरे राम ! तो अब तुम्हारी क्या इच्छा है ?

कमला—काशी में यदि कोई सज्जन मुझे अपने घर में रखकर भोजन-वस्त्र देना स्वीकार करेंगे तो मैं उनके घर का काम-काज करूँगी। मैं रसोई बनाना जानती हूँ।

महामाया बिना वेतन की रसोइया ब्राह्मणी पाकर मन ही मन बहुत ख़ुश हुई। कहने लगी—मुझे तो रसोइये की ज़रूरत है नहीं। नौकर, चाकर, रसोइया, सब मेरे घर पर हैं। परन्तु मैं जैसा रसोइया चाहती हूँ वैसा नहीं मिलता। जब घर के मालिक के लिए समय पर रसोई तैयार न हुई, उनके भोजन में गड़बड़ होती ही रही तो रसोइया रखने से फ़ायदा ही क्या ? ब्राह्मण को चौदह रुपया महीने दिया जाता है, इसके अलावा खाना कपड़ा अलग ! ख़ैर, तुम ब्राह्मण की कन्या हो, दैव-दोष से सङ्कट में पड़ गई हो, अन्यत्र कहाँ जाओगी, चलो, मेरे ही यहाँ चलो। कितने ही लोग खाते-पीते हैं, कितना ही व्यर्थ पड़ा रह जाता है। एक आदमी के बढ़ने से मेरा क्या ख़र्च बढ़ेगा। कोई जानेगा भी नहीं। मेरे

घर काम भी कुछ अधिक नहीं है। वहाँ मैं और मेरे स्वामी, बस यही दो प्राणी हैं। लड़कियों की शादी हो गई है। वे भले घरों में ब्याही गई हैं। मेरे एक ही लड़का है। वह हाकिम है। सिराजगंज में है। लाट साहब के यहाँ से हर दूसरे महीने उसके नाम चिट्ठी आती है। मैं इनसे कहती हूँ, मेरे लाल को किस बात की कमी है जो वह दूसरे की ताबेदारी करेगा। इतना बड़ा ओहदा सबको नहीं मिलता, यह मैं जानती हूँ, परन्तु तो भी उसे विदेश में रहकर कष्ट सहना पड़ता है। बेटा क्यों कष्ट सहे, इसकी ज़रूरत? वे कहते हैं, तुम औरत हो, तुम नहीं समझतीं। क्या मैंने रुपया पैदा करने की इच्छा से लड़के को नौकरी करने की सलाह दी है? नहीं, मुझे क्या कमी है! ईश्वर ने सब कुछ दे रक्खा है। बात यह है कि हाथ में कुछ काम अवश्य रहना चाहिए। अभी उसकी कच्ची उम्र है। क्या जाने कब उसकी कैसी मति-गति हो।

आख़िर महामाया और कमला दोनों एक डोंगी पर सवार हो काशी को रवाना हुईं। वायु अनुकूल थी, काशी पहुँचने में अधिक समय न लगा। बाहर एक छोटे से बाग़ के भीतर जो दो-मंज़िला मकान था, उसके भीतर दोनों गईं।

वहाँ चौदह रुपया मासिक वेतन पानेवाले रसोइये का पता नहीं। एक साधारण ब्राह्मण कुछ दिन से उसके यहाँ था ज़रूर, पर थोड़े ही दिनों के बाद महामाया ने एक दिन उस पर मारे

क्रोध के आगबबूला होकर बिना कुछ वेतन दिये ही उसे निकाल दिया। जब तक चौदह रुपये मासिक वेतन पाने योग्य दुर्लभ रसोइया न मिलेगा तब तक कमला को ही रसोई बनाने का भार ग्रहण करना पड़ा।

महामाया ने बार-बार कमला को सावधान करके कहा—देखो बेटी! काशी शहर अच्छी जगह नहीं है। यहाँ चोर, बदमाश, लुच्चे-लफङ्गे बहुत हैं। अभी तुम्हारी उम्र बहुत थोड़ी है। घर के बाहर कहीं जाना नहीं। जब मैं गङ्गास्नान और श्रीविश्वनाथजी के दर्शन करने जाऊँगी तब तुम्हें भी साथ ले चलूँगी।

कमला कहीं हाथ से निकल न जाय, इस ख़याल से महामाया ने उसे बड़ी सावधानी के साथ अपने यहाँ रक्खा। वह घर से कहीं बाहर जाने न देती थी। स्त्रियों के साथ भी उसे बहुत बातचीत करने का अवसर न दिया जाता था। दिन को तो काम ही कम न करना पड़ता था। काम करते-करते कमला को दम लेने की भी फ़ुरसत न मिलती थी। साँझ को कुछ देर तक महामाया अपने अतुल ऐश्वर्य की गाथा गाकर उसे सुनाती थी। वह अपने जवाहरात का डिब्बा, रत्नजटित भूषण, सोने-चाँदी के बर्तन और मख़मली कामदार वस्त्र तथा और भी अनेक बहुमूल्य वस्तुएँ चोर-डाकुओं के भय से काशी नहीं लाई है। कमला को अपने पास बिठाकर वह इन्हीं बातों की आलोचना करती थी। काँसे की थाली में भोजन करने का

बावनवाँ परिच्छेद

महामाया के आश्रय में रहकर कमला का जी थोड़े पानीवाले गन्दे हौज़ की मछली की भाँति व्याकुल होने लगा। वह यहाँ से किसी तरह बाहर निकले तो उसके प्राण बचें। परन्तु बाहर वह किसके पास जाकर रहेगी? उस अँधेरी रात को घर से बाहर निकलने पर उसे ज्ञात हो गया है कि बाहर दुनिया में क्या है। इसी से अब वह आँखें मूँदकर बाहर नहीं जाना चाहती। कुछ यह बात नहीं कि महामाया कमला को न चाहती थी, किन्तु उसकी चाह में रस न था, केवल स्वार्थ भरा था। दो-एक दिन के लिए जब कमला बीमार हुई थी तब महामाया उसकी खोज-ख़बर लेती थी, दवा-पानी देती थी परन्तु उसे कृतज्ञतापूर्वक स्वीकार करना कमला के लिए बड़ा ही कठिन था। कमला कामों में लगी रहना अच्छा समझती थी परन्तु जो समय उसका महामाया के सखित्व में कटता था वही उसको सबसे बढ़कर दुःखमय था।

एक दिन महामाया ने कमला को बुलाकर कहा—आज सरकार की तबीयत अच्छी नहीं है, भात मत बनाओ, आज वे रोटी खायँगे। घी अन्दाज़ से ख़र्च करना। तेल और घी तुम ज़्यादा ख़र्च कर डालती हो, तो भी तुम्हारे हाथ की रसोई में

कुछ स्वाद नहीं मिलता। तुमसे तो वह बाँभन ही अच्छा था, वह थोड़े ही घी से काम चला लेता था। तो भी उसके हाथ की रसोई में घी की बास आती थी। बहुत घी ख़र्च करने ही से रसोई अच्छी नहीं बनती।

कमला इन बातों का कुछ जवाब न देती थी, जैसे वह सुनती ही न हो। चुपचाप वह घर का काम किये जाती थी।

आज अपने अपमान की बात को मन ही मन सोचती हुई कमला चुपचाप तरकारी काट रही थी। सारा संसार उसे विषमय और अपना जीवन भार सा जान पड़ता था। ऐसे समय महामाया के कमरे से एक बात ने उसके कान में आकर उसे चौंका दिया। महामाया अपने नौकर को पुकारकर कह रही थी—अरे तुलसी! तू जा, शहर से कमलनयन डाक्टर को जल्द बुला ला। उनसे जाके कह, सरकार की तबीयत बहुत ख़राब है।

कमलनयन बाबू का नाम कमला के हृदय में वीणानिनादित शब्द की भाँति गूँजने लगा। वह तरकारी काटना छोड़कर द्वार के पास आ खड़ी हुई। तुलसी के नीचे आते ही कमला ने पूछा—तुलसी, तुम कहाँ जा रहे हो? उसने कहा—कमलनयन डाक्टर को बुलाने।

कमला—ये कौन डाक्टर हैं?

तुलसी—वे यहाँ के नामी डाक्टर हैं।

कमला—वे कहाँ रहते हैं?

तुलसी—शहर ही में हैं। उनका घर यहाँ से क़रीब ही है। एक मील होगा।

लोगों को खिला-पिलाकर भोजन की जो कुछ थोड़ी-घनी सामग्री बच जाती थी वह कमला नौकरों में बाँट देती थी। इसलिए कमला को कई दिन महामाया के दुर्वचन सहने पड़े हैं, पर तो भी उसकी यह आदत नहीं छुटती। विशेषकर मालकिन के कठोर नियम के कारण इस घर के नौकरों-चाकरों को खाने-पीने का बड़ा कष्ट था। इसके अतिरिक्त मालिक और मालकिन के खाने-पीने में देर हो जाती थी। जब वे खा-पीकर निश्चिन्त होते थे तब कहीं नौकरां को भोजन मिलता था। वे जब कमला के पास आकर कहते थे, "महराजिन, बड़ी भूख लगी है" तब उन्हें बिना कुछ खिलाये उससे रहा न जाता था। किसी-किसी दिन तो वह अपना हिस्सा उन सबों को खिलाकर आप भूखी रह जाती थी। इससे घर के सब नौकर-चाकर कमला की आज्ञा के वशवर्ती हो रहे थे।

ऊपर से आवाज़ आई—तुलसी, रसोईघर के दरवाज़े पर खड़ा होकर किसके साथ बातें कर रहा है? तू समझता है, मुझे कुछ सूझता ही नहीं। शहर जाते समय एक बार रसोईघर का बिना दर्शन किये, आगे को तेरे पैर ही नहीं उठते। तेरी यह चाल मुझे अच्छी नहीं लगती। मेरे घर की चीज़ें इसी तरह उड़ा दी जाती हैं। इस ब्राह्मणी को तो देखो,

रास्ते में अनाथ पड़ी थी। दया करके मैं इसे अपने घर ले आई उसी का इस तरह यह बदला दे रही है!

सभी मेरे घर की चीज़-वस्तु चुराते हैं, यह सन्देह महामाया के मन में सदा बना रहता है। जब चुराने का कोई प्रमाण न मिलता था तब भी वह नौकरों को दो-चार खरी-खोटी सुनाने में न चूकती थी। उसका विश्वास था कि अँधेरे में ढेला फेकने से भी ठीक निशाने पर जाकर लगता है; और इससे नौकरों को खटका लगा रहता है कि मालकिन चौकन्नी है, उसे धोखा न दिया जा सकेगा।

आज महामाया के कठोर भाषण की चोट कमला के हृदय में ज़रा भी न लगी। आज वह यन्त्र की तरह काम कर रही है। उसका मन कहीं और ही लगा हुआ है। केवल शरीर मात्र यहाँ है!

नीचे, रसोईघर के दरवाज़े पर खड़ी कमला प्रतीक्षा कर रही थी। इसी समय तुलसी शहर से लौट आया। परन्तु अकेला आया। कमला ने धीरे से पूछा—तुलसी, क्या डाक्टर बाबू नहीं आये?

तुलसी—नहीं, वे नहीं आये।

कमला—क्यों?

तुलसी—उनकी माँ बीमार हैं।

कमला—माँ बीमार हैं? क्या उनके घर में और कोई नहीं है?

तुलसी—नहीं, उन्होंने अब तक ब्याह नहीं किया।

कमला—तुझे कैसे मालूम हुआ कि उन्होंने ब्याह नहीं किया।

तुलसी—उनके नौकरों के मुँह से सुना है कि उनके स्त्री नहीं है।

कमला—शायद मर गई हो।

तुलसी—यह हो सकता है। लेकिन उनके नौकर तो कहते हैं कि जब वे रङ्गपुर में डाक्टरी करते थे तब भी उनके जोरू न थी।

ऊपर से पुकार हुई—"तुलसी।" कमला झटपट रसोईघर में चली गई और तुलसी ऊपर गया।

कमलनयन रङ्गपुर में डाक्टरी करते थे—यह सुनकर कमला के मन में कुछ भी सन्देह न रहा। तुलसी जब नीचे आया तब कमला ने उससे फिर पूछा—डाक्टर बाबू के नाम का एक व्यक्ति मेरा रिश्तेदार है। तो ये ब्राह्मण ही हैं न ?

तुलसी—हाँ, ब्राह्मण, चटरजी।

मालकिन के तीव्र दृष्टिपात के भय से तुलसी देर तक कमला के साथ बात-चीत न कर सका। वह चला गया।

कमला ने महामाया के पास जाकर कहा—घर का सब काम-धन्धा करके मैं आज दशाश्वमेध घाट पर स्नान करने जाऊँगी।

महामाया झुँझलाकर बोली—तुम समय-असमय कुछ नहीं समझतीं। सरकार की तबीयत आज ख़राब है, न जाने

कब किस चीज़ की ज़रूरत हो, आज तुम्हारे जाने से कैसे बनेगा ?

कमला—ख़बर मिली है, मेरे एक रिश्तेदार काशी में हैं। उनको एक बार देखने जाऊँगी।

महामाया—यह अच्छी बात नहीं है। तुम्हारे मन की अवस्था दिन-ब-दिन बदलती जाती है। मैं बहुत दिनों की हूँ। यह खेल-कौतुक सब समझती हूँ। यह ख़बर तुमको किसने दी ? मालूम होता है, तुलसी ने। उस छोकड़े को मैं आज ही निकाल बाहर करती हूँ। सुनो, महराजिन ! जब तक मेरे यहाँ रहोगी तब तक न तो तुम अकेली किसी घाट पर स्नान करने जाने पाओगी और न अपने नातेदार की खोज में महल्ले-महल्ले घूमने। यह तुमसे मैं आज ही कह रखती हूँ।

दरवान को हुक्म हो गया कि वह अभी तुलसी को हाते से बाहर कर दे, फिर वह कभी हाते के भीतर आने न पावे।

मालकिन के हुक्म से अन्य नौकर-चाकरों ने कमला से यथा-सम्भव बातचीत करना बन्द कर दिया।

कमलनयन का जब तक कोई पता कमला को मालूम न था तब तक वह निश्चिन्त थी। उसके मन में धैर्य था। अब उसे धैर्य की रक्षा करना कठिन हो गया। इसी शहर में उसके स्वामी हैं। अब क्षण भर के लिए भी दूसरे के घर में रहना उसे असह्य जँचने लगा। चित्त की अस्थिरता के कारण बात-बात में उससे भूल होने लगी।

महामाया ने कहा—महराजिन, तुम्हारी चाल-ढाल अच्छी नहीं देख पड़ती। तुम्हारे सिर पर भूत तो नहीं सवार हो गया? तुमने आप तो खाना-पीना छोड़ ही दिया, क्या अब हम लोगों को भी भूखों मार डालोगी? अब तो तुम्हारे हाथ की रसोई मुँह में देने योग्य भी नहीं होती।

कमला—मुझसे यहाँ का काम न होगा। मेरा जी अब यहाँ नहीं लगता। मुझे बिदा कर दीजिए!

महामाया गरजकर बोली—ठीक है, कलिकाल में किसी का उपकार करना भला नहीं। तुम्हारे ऊपर दया करके मैंने उतने दिनों के वैसे अच्छे पुराने रसोइया बाँभन को मौक़ूफ़ कर दिया। फिर उसकी ख़बर तक न ली। तुम सच्चे बाँभन की लड़की हो न! आज कहती हो कि मुझे बिदा कर दो। अगर तुम भागने की चेष्टा करोगी तो मैं पुलिस में ख़बर दूँगी। मेरा लड़का हाकिम है, यह तुम्हें अच्छी तरह मालूम है। उसके हुक्म से कितने ही लोगों को फाँसी हो चुकी है। मेरे पास तुम्हारी चालाकी न चलेगी। तुमने सुना ही होगा, गुमानी नौकर ने सरकार के मुँह पर जवाब दिया था, उसका फल उस कमबख़्त को तुरन्त मिल गया। अब भी वह जेल में सड़ रहा है। क्या तुम हमको मामूली आदमी समझती हो?

बात झूठ न थी। गुमानी को घड़ी चुराने की इल्लत लगाकर सज़ा करा दी थी।

कमला को यहाँ से निकलने का कोई उपाय न सूझा। हाथ बढ़ाने ही से जब वह जीवन-फल पा सकती थी तब उसके हाथों को बाँध देना कैसी निष्ठुरता और निर्दयता का काम है! दिन भर तो उसे काम करने से फ़ुरसत न मिलती थी। रात का सब काम ख़तम हो जाने पर वह कोई गरम कपड़ा ओढ़कर बाग़ में चली जाती थी। दीवाल के पास खड़ी होकर वह उस रास्ते की ओर टकटकी बाँधकर देखती थी, जो शहर की ओर गया है। उसका जो तरुण हृदय सेवा के लिए व्याकुल हो रहा था, भक्ति-निवेदन करने के लिए व्यग्र हो रहा था, उस हृदय को वह इस गहरी रात के सूने मार्ग से किसी एक अपरिचित घर का पता लगाने को भेजती थी। इसके अनन्तर बड़ी देर तक वह चित्रवत् खड़ी हो धरती में सिर टेककर प्रणाम करके अपने शयनगृह में लौट आती थी।

किन्तु इतना भी सुख, इतनी भी स्वाधीनता, कमला के हाथ में अधिक दिन न रही। रात का सब काम हो जाने के बाद एक दिन महामाया ने किसी कारण कमला को बुला भेजा। दरवान ने कहा—महराजिन नहीं है। न मालूम कहाँ चली गई।

महामाया घबराकर बोली—वह भाग तो नहीं गई?

महामाया हाथ में लालटेन लेकर ख़ुद प्रत्येक कमरे में खोज आई। किन्तु कमला कहीं न मिली। मुकुन्द बाबू आँखें मूँदे तम्बाकू पी रहे थे। महामाया ने उनसे जाकर कहा—सुना, रसोई बनानेवाली शायद रफ़ूचक्कर हो गई।

यह सुनने पर भी मुकुन्द बाबू की शान्ति भङ्ग न हुई। उन्होंने अलसाये हुए कण्ठ से कहा—मैंने तो पहले ही तुमसे कह दिया था, इसका कुछ पता-ठिकाना मालूम नहीं। कुछ ले तो नहीं गई ?

महामाया—उस दिन जो कपड़ा उसे ओढ़ने को दिया था वह घर में नहीं है। इसके सिवा और क्या-क्या ले गई है, यह अभी कैसे कहूँ ?

मुकुन्द बाबू ने गम्भीर स्वर में कहा—पुलिस को ख़बर दे दो।

एक नौकर लालटेन लेकर बाहर निकला। इतने में ही कमला अपने कमरे में लौट आई। उसने देखा कि महामाया उस कमरे की सब वस्तुओं की तलाशी ले रही है। कोई चीज़ चोरी गई है या नहीं, इसी की देख-भाल कर रही है। ऐसे समय कमला को आते देख महामाया बोल उठी—तुम एक अजीब जानवर जान पड़ती हो। इतनी रात को कहाँ चली गई थी ?

कमला—सब काम हो जाने के बाद मैं ज़रा मन बहलाने के लिए बाग़ में घूमने गई थी।

महामाया के मुँह में जो कुछ आया बक गई। घर के सभी नौकर-चाकर दरवाज़े के पास आ खड़े हुए।

महामाया की कठोर से भी कठोर झिड़कियाँ सुनकर कमला उसके सामने न कभी रोती थी और न कुछ जवाब देती थी। आज भी वह कंठपुतली की भाँति खड़ी रही।

महामाया जब वाक्य-बाण बरसाकर कुछ शान्त हुई तब कमला ने कहा—मुझसे आप नाखुश हैं तो मुझे बरख़ास्त कर दीजिए।

महामाया—निकाल तो दूँगी ही। तुम्हारी जैसी नमक-हराम को खाना-कपड़ा देकर मैं अधिक दिन तक अपने यहाँ रक्खूँगी, यह कभी ख़याल में भी न लाना। किन्तु बिदा करने से पहले यह अच्छी तरह दिखा दूँगी कि कैसे लोगों से तुम्हारा पाला पड़ा है।

कमला को तब से बाहर जाने का साहस न होता था। वह किवाड़ बन्द करके भीतर ही मन में बोली कि जो व्यक्ति इतना कष्ट सह रहा है, उसका ईश्वर किसी न किसी दिन अवश्य उद्धार करेंगे!

मुकुन्द बाबू अपने दो नौकरों को साथ ले गाड़ी में बैठकर हवा खाने गये। मकान का सदर दरवाज़ा भीतर से बन्द है। साँझ होने में अब विलम्ब नहीं।

दरवाज़े के पास आकर किसी ने बाहर से कहा—मुकुन्द बाबू हैं?

महामाया चकित होकर बोली—देखो, देखो, कमलनयन डाक्टर आये हैं। बुधिया कहाँ गई। ओ बुधिया!

बुधिया नाम की दासी वहाँ न थी। तब महामाया ने कमला से कहा—जल्दी जाकर दरवाज़ा खोल दो। डाक्टर बाबू से कहना, सरकार हवाख़ोरी करने गये हैं। अब आते होंगे। ज़रा बैठ जायँ।

कमला लालटेन लेकर नीचे गई—उसके पैर काँप रहे हैं; छाती धड़क रही है। उसे भय होने लगा कि इस व्याकुलता में पड़कर कहीं मैं उन्हें अच्छी तरह देख न सकूँ।

कमला भीतर से साँकल खोलकर और घूँघट बढ़ाकर किवाड़ की आड़ में खड़ी हो रही।

कमलनयन ने पूछा—बाबू घर में हैं?

कमला थरथराती हुई ज़बान से बोली—नहीं, आप बैठिए।

कमलनयन कमरे में आकर बैठ गये। इतने में बुधिया ने आकर कहा—सरकार घूमने गये हैं, अब आते ही होंगे, थोड़ी देर आप बैठें।

कमला अपने आनन्दोल्लास को न रोक सकती थी। रोकने से उसके हृदय में कष्ट होता था। वह धीरे-धीरे बरामदे की एक ऐसी अँधेरी जगह में जा खड़ी हुई जहाँ से कमलनयन का मुँह स्पष्ट दिखाई दे। किन्तु वह देर तक खड़ी न रह सकी। चञ्चल हृदय को शान्त करने के लिए उसे वहाँ बैठ जाना पड़ा। उसके हृत्कम्प के साथ जाड़े की हवा ने योग देकर उसे थर-थर कँपा दिया।

कमलनयन मेज़ के पास, लम्प की ओर मुँह किये, बैठे-बैठे मन ही मन कुछ सोच रहे थे। काँपती हुई कमला अन्धकार के भीतर से कमलनयन के मुँह की ओर टकटकी बाँधे देख रही थी। देखते ही देखते उसकी आँखों में आँसू

कमला—आप चाहे जो कहें, मैं यहीं रहूँगी।

महामाया—अच्छा, देखती हूँ तुम कैसे यहाँ रहती हो!

कमला—मुझ पर दया कीजिए, मुझे यहाँ से न ले जाइए।

महामाया—तुम बड़ी विकट औरत हो। ठीक जाने के समय विघ्न करने लगी। मुझे जल्दी में यहाँ कौन आदमी मिलेगा? तुम्हारे बिना हमारा काम कैसे चलेगा?

कमला का सारा अनुनय-विनय व्यर्थ हुआ। कमला अपनी कोठरी का दरवाज़ा बन्द करके भगवान् को पुकारकर रोने लगी।

तिरपनवाँ परिच्छेद

जिस दिन सन्ध्या होने के अनन्तर घनानन्द बाबू ने नलिनी के साथ कमलनयन के ब्याह का ज़िक्र किया था उसी रात को फिर घनानन्द बाबू को वही शूल का दर्द कुछ-कुछ होने लगा।

रात किसी तरह कष्ट से कटी। सबेरे जब उनका दर्द कुछ कम हुआ तब वे अपने घर के बाग़ में सड़क के किनारे, जड़-काले के प्रातःकाल कच्ची धूप में, सामने एक तिपाई रख-कर बैठे। नलिनी वहीं उनके चाय-पानी का प्रबन्ध करने लगी। रात के कष्ट से घनानन्द बाबू का चेहरा उतर गया। एक ही रात में उनकी इतनी ताक़त घट गई है, जिससे मालूम होता है कि वे और भी अधिक वृद्ध हो गये हैं।

घनानन्द बाबू के इस उदासी भरे चेहरे पर ज्योंही नलिनी की दृष्टि पड़ती है त्योंही उसके हृदय में मानों कोई छुरी भोंक देता है। कमलनयन के साथ ब्याह कराने में मुझे असम्मत देख करके पिताजी व्यथित हो पड़े हैं, और उनकी वह मनो-वेदना ही असल में उनके रोग का मुख्य कारण है—यह नलिनी के लिए अत्यन्त पछतावे का विषय हो गया। मुझे अब क्या करना चाहिए, किस तरह मैं अपने बूढ़े ,बाप को सुखी रख सकूँगी—समझा सकूँगी बार-बार सोचने पर भी इसका कोई उपाय नलिनी को न सूझता था।

इसी समय चक्रवर्ती को साथ लिये अक्षय एकाएक वहाँ उपस्थित हुआ। तुरन्त ही वहाँ से हट जाने के लिए नलिनी को उद्यत देख अक्षय ने कहा—आप ज़रा ठहरें, ये ग़ाज़ीपुर के चक्रवर्ती महाशय हैं। इन्हें इस तरफ़ के सब लोग जानते हैं। ये आपसे कुछ कहने को आये हैं।

वहाँ पत्थर का एक चबूतरा सा था। उसी पर अक्षय और चक्रवर्तीजी बैठ गये।

चक्रवर्ती ने घनानन्द से कहा—सुना है, रमेश बाबू के साथ आपकी बड़ी घनिष्ठता है, इसी से मैं यहाँ आपसे पूछने आया हूँ। आपको उनकी स्त्री का कुछ समाचार मिला है ?

घनानन्द बाबू कुछ देर हक्का-बक्का बने बैठे रहे। फिर आश्चर्य-युक्त स्वर में बोले—क्या ? रमेश बाबू की स्त्री !

नलिनी ने नीची नज़र कर ली। चक्रवर्ती ने नलिनी की ओर देखकर कहा—मालूम होता है, आप लोग मुझे नितान्त असभ्य समझते हैं। पहले आप धीरतापूर्वक सब बातें सुन लीजिए, तब आप समझ जायँगी कि मैं दूसरे की बात लेकर आपसे विवाद करने नहीं आया हूँ। रमेश बाबू दुर्गापूजा के समय अपनी स्त्री के साथ जब स्टीमर पर सवार हो पच्छिम को जा रहे थे तभी से मैं उनको जानता हूँ। उसी स्टीमर पर उनसे जान-पहचान हुई थी। आप तो जानते ही होंगे, कमला को जिसने एक बार भी देखा होगा वह कभी उसे भूल नहीं सकता। अनेक सुख-दुःखों का सामना करते-करते इस

बुढ़ापे में मेरा हृदय पाषाण सा कठोर हो गया है किन्तु इतने पर भी उस कमला देवी की सुध मेरे मन से पल भर के लिए भी नहीं हटती। रमेश बाबू ने पहले से कुछ निश्चय न किया था कि कहाँ जायँगे। परन्तु मेरे साथ परिचय होने पर कमला मुझे इतना मानने लगी कि उसने उन्हें ग़ाज़ीपुर मेरे घर पर चलने के हेतु बाध्य किया। वहाँ आकर कमला का, मेरी मँझली लड़की अन्नपूर्णा से बड़ा ही स्नेह हुआ। दोनों में सगी बहनों का सा सद्भाव था। परन्तु पीछे उसे क्या हो गया, क्या उसके जी में आया, यह मैं नहीं कह सकता। एकाएक वह हम सबों को छोड़कर कहाँ गई, क्या हुई, इसका कुछ पता नहीं। तब से मेरी अन्नपूर्णा बराबर उसके लिए रोती है। उसकी आँखों के आँसू सूखने नहीं पाते।

यह कहते-कहते चक्रवर्ती के दोनों नेत्रों से आँसू टपकने लगे। घनानन्द ने व्यग्र होकर पूछा—उसे क्या हुआ, वह कहाँ चली गई?

चक्रवर्ती ने कहा—अक्षय बाबू! आपने तो सब बातें सुनी हैं, आप ही कहिए। कहने से मेरी छाती फटती है।

अक्षय ने कमला और रमेश का सारा वृत्तान्त आदि से अन्त तक विस्तारपूर्वक वर्णन करके सुना दिया। अपनी तरफ़ से उसने कुछ भाष्य नहीं किया—नमक-मिर्च नहीं लगाया, परन्तु उसके वर्णन करने के ढंग से रमेश का चरित्र रमणीय न जँचा।

घनानन्द बाबू विस्मित होकर बार-बार कहने लगे—हम लोगों ने तो ये बातें कभी सुनीं ही नहीं। रमेश जब से कलकत्ता छोड़कर बाहर गया तब से उसका एक पत्र भी तो नहीं मिला।

अक्षय ने उनकी बात में ही जोड़ लगाकर कहा—यहाँ तक कि उन्होंने जो कमला से ब्याह कर लिया है यह भी हम लोगों को निश्चय रूप से मालूम न था। अच्छा चक्रवर्ती महाशय! मैं आपसे पूछता हूँ। आप तो सब हाल जानते हैं, कमला उसकी पत्नी ही थी या उसकी बहन या कोई और रिश्तेदारिन?

चक्रवर्ती—यह आप क्या पूछते हैं? पत्नी न थी तो क्या थी? वैसी सती स्त्री क्या सबको मिलती है?

अक्षय—आप सच कहते हैं। परन्तु आश्चर्य यही है कि स्त्री जितनी ही अच्छी मिलती है पति के द्वारा उसका अनादर भी उतना ही अधिक होता है। ईश्वर अच्छे लोगों की ही कठिन परीक्षा लेते हैं! यह कहकर उसने लम्बी साँस ली।

घनानन्द अपने सिर पर हाथ फेरते हुए बोले—निःसन्देह बड़े दुःख का विषय है, किन्तु जो होने को था सो हो गया, अब वृथा शोक करने से क्या लाभ है!

अक्षय—मुझे सन्देह हुआ कि शायद कमला ने आत्म-हत्या न की हो, कदाचित् काशी-सेवन की इच्छा से यहाँ आई हो। इसी से चक्रवर्तीजी को साथ लेकर मैं उसको काशी में खोजने

आया हूँ। साफ़ मालूम हो गया कि आपको उसकी कुछ ख़बर नहीं मिली। ख़ैर, दो-चार दिन उसकी खोज करनी चाहिए।

घनानन्द—रमेश आजकल कहाँ है?

चक्रवर्ती—वे तो हमसे बिना ही कुछ कहे-सुने चले गये। मैं क्या जानूँ, कहाँ गये।

अक्षय—मुझे तो वे मिले नहीं, पर लोगों के मुँह से सुना कि वे कलकत्ते में हैं। शायद अलीपुर में वकालत करें। पुरुष का हृदय कठिन होता है। वह बड़े से बड़े दुःख को झेल सकता है। रमेश दुःख या शोक कब तक करेगा? ख़ासकर उसकी अभी नई उम्र है। चक्रवर्तीजी! चलिए, शहर में एक बार उसको अच्छी तरह ढूँढ़ें।

घनानन्द ने पूछा—अक्षय बाबू! तो तुम यहीं ठहरोगे?

अक्षय—यह मैं ठीक नहीं कह सकता। मेरा मन स्थिर नहीं है। मैं जितने दिन काशी में रहूँगा उसी की खोज में रहूँगा। भले घर की लड़की है, अगर मन के विषाद से घर छोड़कर यहाँ आई होगी तो उसे कितना कष्ट न होता होगा! रमेश बाबू भले ही निश्चिन्त रहें, परन्तु मैं नहीं रह सकता।

चक्रवर्ती के साथ अक्षय चला गया।

घनानन्द बाबू ने उद्विग्न होकर एक बार नलिनी के मुँह की ओर देखा। वह किसी तरह अपने मन को रोके चुपचाप बैठी थी। वह जानती थी कि पिताजी मन ही मन मेरे लिए आशङ्का कर रहे हैं।

नलिनी ने कहा—बाबूजी ! आज आप डाक्टर से एक बार अच्छी तरह अपने शरीर का मुलाहिज़ा कराइए। दिन-दिन आपका स्वास्थ्य बिगड़ता चला जाता है। इसका कोई यत्न करना चाहिए।

नलिनी की बात से घनानन्द को बड़ा सन्तोष हुआ। रमेश के गुप्त विषय की इतनी बड़ी आलोचना होने के बाद भी नलिनी ने जो उनकी अस्वस्थता पर उद्वेग प्रकट किया इससे घनानन्द बाबू के मन का बोझ बहुत कुछ हलका हो गया। और दिन इस तरह की चर्चा होने पर वे अपनी बीमारी की बात उड़ा देने की चेष्टा करते थे, आज उन्होंने कहा—अच्छी बात है, शरीर की परीक्षा करा लेता हूँ। कहो तो आज कमलनयन बाबू को बुला भेजूँ।

कमलनयन के सम्बन्ध में नलिनी कुछ सङ्कोच में पड़ गई है। पिता के सामने उनके साथ पहले की तरह बात-चीत करना उसके लिए कठिन होगा, तो भी उसने कहा—अच्छी बात है, बुलवा लीजिए।

घनानन्द ने नलिनी के मन का अचल भाव देखकर कहा—रमेश का यह मामला—

नलिनी ने बीच ही में बात काटकर कहा—"बाबूजी ! धूप अब कड़ी हो गई। चलिए, कमरे के भीतर चलें।" यह कहकर उन्हें कुछ कहने का अवसर दिये बिना ही नलिनी उनका हाथ थामकर चल दी। नलिनी ने उन्हें बैठक में ले

जाकर आरामकुरसी पर बिठा दिया। ऊपर से एक गरम कपड़ा उढ़ाकर उनके हाथ में एक अख़बार दिया और अपने हाथ से उनकी आँखों में चश्मा लगाकर कहा—आप अख़-बार पढ़िए, मैं अभी आती हूँ।

घनानन्द ने सीधे बालक की भाँति नलिनी के आज्ञा-पालन की चेष्टा की, परन्तु उनका जी किसी तरह पढ़ने में न लगा। नलिनी के लिए वे उत्कण्ठित होने लगे। आख़िर अख़बार को मेज़ पर रखकर वे नलिनी को खोजने गये। देखा, जिस कमरे में वह रहती है उसके किवाड़ बन्द हैं।

वे चुपचाप बरामदे में घूमने लगे। बड़ी देर के बाद वे फिर एक बार नलिनी की खोज में गये। तब भी उसके कमरे का दरवाज़ा बन्द ही था। घनानन्द बाबू थककर एक कुरसी पर बैठ रहे और अपने सिर पर हाथ फेरते हुए कुछ सोचने लगे।

कमलनयन डाक्टर ने घनानन्द के शरीर की जाँच की और उचित उपचार बताकर नलिनी से पूछा—बाबूजी के मन में किसी तरह की विशेष चिन्ता तो नहीं है?

नलिनी ने कहा—हो भी सकती है।

कमलनयन—यदि हो तो पहले उनके मन से चिन्ता को दूर करना आवश्यक है। जब तक इनका चित्त चिन्ता-रहित न होगा, ये सम्पूर्ण रूप से स्वास्थ्य-लाभ न कर सकेंगे। मेरी माता की भी यही अवस्था है। वे कभी-कभी ऐसी घबरा जाती

हैं कि उनको तन्दुरुस्त रखना कठिन हो जाता है। कल कोई चिन्ता उनके मन में हो गई जिसमें सारी रात उन्हें नींद ही नहीं आई। मैं चाहता हूँ कि वे किसी बात की चिन्ता न करें, ज़रा भी विचलित न हों, परन्तु संसार में रहते हुए क्या यह कभी सम्भव है?

नलिनी—आप भी तो आज कुछ-कुछ सुस्त देख पड़ते हैं।

कमलनयन—नहीं, मैं तो बहुत अच्छा हूँ। उदास रहने का मुझे अभ्यास ही नहीं। हाँ, रात में मुझे कुछ देर जागना पड़ा था, इसी से शायद आज मेरा चेहरा कुछ उदास दीखता हो।

नलिनी—आपकी माता की सेवा करने के लिए यदि हर-दम एक स्त्री उनके पास रहती तो बड़ा अच्छा होता। आप अकेले ठहरे, उस पर भी आपको कितने ही काम करने पड़ते हैं। किस तरह आप उनकी सेवा कर सकेंगे।

यह बात नलिनी ने सहज भाव से ही कही थी। बात उसने बहुत ठीक कही, इसमें सन्देह नहीं। परन्तु कहने के साथ ही लज्जा ने उसे आ घेरा। वह मारे लज्जा के विवश हो पड़ी। वह सोचने लगी कि कमलनयन बाबू मेरे कहने का कुछ और ही अर्थ न समझें। अकस्मात् नलिनी की इस लज्जा का अभिनव भाव देखकर कमलनयन को माता के प्रस्ताव की बात स्मरण हो आई।

नलिनी ने झट अपने को सँभालकर कहा—आप उनकी सेवा के लिए एक नौकरनी क्यों नहीं रख लेते?

कमलनयन—मैंने तो कई बार चाहा कि एक नौकरनी उनके लिए रख दूँ, परन्तु वे इस बात को मञ्जूर नहीं करतीं। उन्हें आचार-विचार का बहुत ख़याल रहता है। इसी से वे अपनी सेवा के लिए नौकरनी रखना नहीं चाहतीं। इसके सिवा उनका ऐसा दयालु स्वभाव है कि कोई कष्ट उठाकर उनकी सेवा करे, यह उन्हें सह्य नहीं होता।

इसके अनन्तर इस सम्बन्ध में और कोई बात न हुई। नलिनी ने ज़रा ठहरकर कहा—आपके उपदेशानुसार चलने में कभी-कभी एक-आध विघ्न उपस्थित हो जाता है, जिससे मेरे साधन में बड़ा अन्तर पड़ जाता है। मुझे डर है कि कहीं. मेरी आशा व्यर्थ न हो जाय। मेरा मन क्या किसी दिन शान्ति-सुख को प्राप्त न कर सकेगा? क्या मैं यों ही बाहर के आघातों से अस्थिर होकर मारी-मारी घूमती फिरूँगी?

नलिनी की इस दीन वाणी से चिन्तित होकर कमलनयन ने कहा—देखिए, विघ्न तो हमारे हृदय की समस्त शक्ति को जाग्रत कर देने के लिए उपस्थित होता है। इससे आप हताश न हों।

नलिनी—तो कल सवेरे आप एक बार यहाँ आने की कृपा करेंगे? आपकी सहायता से मुझे विशेष बल मिलता है।

कमलनयन के मुँह पर जो एक स्थिर शान्ति का भाव है और उनके कण्ठस्वर में जो एक प्रकार की धीरता भरी है, उससे नलिनी को बहुत कुछ सहारा मिल जाता है। कमल-नयन चले गये, परन्तु नलिनी के मन में सान्त्वना का स्पर्श

कर गये। वह अपने शयनगृह के सामने बरामदे में खड़ी होकर शीतकाल की मीठी धूप से प्रकाशमान बाहरी दृश्य देखने लगी। उसके चारों ओर विश्व-प्रकृति के बीच उस रमणीय दोपहरी के काम-काज के साथ विराम, शक्ति के साथ शान्ति और उद्योग के साथ वैराग्य विराजमान था। उस बृहत् भाव की गोद में नलिनी ने जब अपना व्यथित हृदय समर्पण कर दिया तब सूर्य के प्रकाश और उन्मुक्त उज्ज्वल नीले गगन को उसके अन्तःकरण में आशीर्वचन पहुँचाने के लिए अवकाश मिल गया। उस आशीर्वचन का उच्चारण संसार में नित्य हुआ करता है।

नलिनी कमलनयन की माता की बात सोचने लगी—उनके मन में कैसी चिन्ता है, रात में उन्हें नींद क्यों नहीं आई, क्यों वे रात भर जागती रहीं यह नलिनी समझ गई। कमलनयन के साथ अपने ब्याह के प्रस्ताव का पहला आघात, पहला सङ्कोच हट गया। कमलनयन पर नलिनी की भक्ति धीरे-धीरे बढ़ती जाती थी, किन्तु इसके बीच प्रेम की विद्युत्सञ्चारमयी वेदना नहीं है—न सही। यह आत्मप्रतिष्ठ कमलनयन किसी स्त्री के प्रेम की अपेक्षा रखता हो, यह नहीं मालूम होता। फिर भी सेवा की आवश्यकता तो सभी को है! कमलनयन की माँ बीमार हैं और बुढ़िया हैं, उनके पुत्र की सँभाल कौन करेगा! इस संसार में कमलनयन का जीवन अनादर की चीज़ नहीं है। ऐसे मनुष्य की सेवा तो भक्तिपूर्वक ही होनी चाहिए।

आज सबेरे नलिनी ने रमेश के जीवन-वृत्तान्त का जो कुछ थोड़ा सा अंश सुना है उससे उसके मर्म-स्थान में एक ऐसी गहरी चोट लगी है जिसके सहने के लिए आज उसे समस्त मानसिक शक्ति का सहारा लेना पड़ा है। विचार करने से रमेश के लिए सोच करना उसे अब लज्जा का विषय जान पड़ता है। वह रमेश को अपराधी ठहराना भी नहीं चाहती। संसार के लाखों करोड़ों मनुष्य भले-बुरे कामों में लगे रहते हैं, संसार पहिये की तरह दिन-रात घूमता रहता है, नलिनी ने इन लोगों के निर्णय का भार नहीं लिया है। रमेश के सम्बन्ध की बात वह अपने मन में भी नहीं लाना चाहती। बीच-बीच में आत्मघातिनी कमला का स्मरण करके वह काँप उठती है। उसके मन में यह बात आती है कि इस हतभागिनी की आत्म-हत्या के साथ क्या मेरा भी कोई सम्पर्क है? यह ख़याल होते ही लज्जा, घृणा और दया से उसका सम्पूर्ण हृदय व्याकुल हो उठता है। वह हाथ जोड़कर आँखों में आँसू भर-कर गद्गद कण्ठ से प्रार्थना करती है—भगवन्! मैंने तो कोई अपराध नहीं किया। फिर मेरी यह दशा क्यों? मेरे इस बन्धन को काट दो, मैं और कुछ नहीं चाहती। मुझे अपने इस संसार में शान्त भाव से रहने दो!

रमेश और कमला की घटना सुनकर नलिनी क्या सोचती-समझती है? यह जानने के लिए घनानन्द बड़े उत्सुक हुए। इस विषय में नलिनी से कुछ पूछने का उन्हें साहस भी न होता

था। वह बरामदे में चुपचाप में बैठी सिलाई कर रही थी। घनानन्द वहाँ कई बार जाकर उसके चिन्तायुक्त चेहरे को देख आये, पर उससे कुछ पूछ न सके।

नलिनी साँझ को डाक्टर की दी हुई दवा घनानन्द बाबू को दूध के साथ खिलाकर उनके पास बैठ गई।

घनानन्द बाबू ने कहा—आँख के सामने से रोशनी को हटा दो।

कुछ अँधेरा हो जाने पर घनानन्द बाबू ने कहा—सबेरे जो बूढ़ा आदमी आया था, वह बहुत सीधा जान पड़ता था।

नलिनी इस पर कुछ न बोली। घनानन्द इससे अधिक भूमिका न बाँध सके। उन्होंने कहा—रमेश का वृत्तान्त सुनकर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। उसके सम्बन्ध में कितने ही लोग तरह-तरह की बातें कहते थे—मैं अब तक उन पर विश्वास न करता था, परन्तु अब तो—

नलिनी ने कातर कण्ठ से कहा—बाबूजी! इन बातों को जाने दीजिए।

घनानन्द—ये बातें करने की मेरी इच्छा नहीं है। परन्तु दैवयोग से जब किसी के साथ हमारे सुख-दुःख का सम्बन्ध हो जाता है तब उसके आचरण की उपेक्षा करते नहीं बनता।

नलिनी झट बोल उठी—नहीं-नहीं, सुख-दुःख का सम्बन्ध इस प्रकार जहाँ-तहाँ न जोड़ना होगा! बाबूजी, मैं बहुत अच्छी तरह हूँ। मेरे लिए वृथा चिन्तित होकर मुझे लज्जित न कीजिए।

घनानन्द—बेटी, मेरी नाव अब किनारे लगने को है। जब तक तुम्हारे लिए कुछ ठीक-ठाक न हो जायगा तब तक मेरा मन स्थिर न होगा। क्या मैं इसी तरह तुम्हें तपस्विनी की भाँति रखकर संसार से चल दूँगा ?

नलिनी चुप हो रही। घनानन्द बाबू ने कहा—देखो बेटी ! संसार में एक आशा विफल होने से सारी दुर्मूल्य वस्तुओं से हाथ खींच लेना ठीक नहीं। तुम कैसे सुखी होगी, तुम्हारा जीवन कैसे सार्थक होगा, इसे मन के क्षोभ के कारण शायद आज तुम न समझ सको, किन्तु मैं सदा सोचता रहता हूँ कि तुम्हारा मङ्गल किस बात में है, किस तरह तुम सुख पाओगी। मेरे प्रस्ताव की तुम एकदम उपेक्षा न करना।

नलिनी की आँखें डबडबा गईं। वह बोली—आप ऐसी बात न कहें। मैं आपकी आज्ञा का कभी अनादर नहीं कर सकती। आप जो आज्ञा दीजिएगा उसका पालन मैं अवश्य करूँगी। सिर्फ़ एक बार अन्तःकरण को साफ़ कर अच्छी तरह तैयार हो लेना चाहती हूँ।

घनानन्द ने उसी अँधेरे में एक बार नलिनी के मुँह पर हाथ फेरकर उसके मस्तक को छुवा। उन्होंने और कुछ न कहा।

दूसरे दिन सबेरे जब घनानन्द नलिनी को लेकर बाहर एक पेड़ के नीचे चाय पीने बैठे तब अक्षय उनके पास आया। घनानन्द ने उसके मुँह की ओर देखा, कुछ कहा नहीं। अक्षय

ने कहा—अभी कोई पता नहीं लगा। यह कहकर वह एक प्याला चाय लेकर बैठ गया।

धीरे-धीरे उसने कहा—रमेश बाबू और कमला का कुछ असबाब चक्रवर्ती महाशय के यहाँ पड़ा है। उसे वे कहाँ किसके पास भेजें, यही सोच रहे हैं। रमेश बाबू आपका पता लगा-कर अवश्य ही यहाँ आवेंगे, इसलिए यदि आपके यहाँ—

घनानन्द बाबू ने अत्यन्त क्रोध करके कहा—अक्षय, तुम्हें रत्ती भर भी व्यावहारिक ज्ञान नहीं है। रमेश मेरे ही यहाँ क्यों आवेगा? उसका सामान अपने यहाँ रखनेवाला मैं कौन होता हूँ?

अक्षय—जो हो, उन्होंने बेजा काम किया हो अथवा उनसे भूल हो गई हो, किन्तु वे इस समय शोक-सन्तप्त होंगे। क्या इस समय उन्हें सान्त्वना देना उनके पुराने इष्ट-मित्रों का कर्तव्य नहीं है? क्या आप उन्हें बिलकुल ही छोड़ देना चाहते हैं?

घनानन्द—अक्षय, हम लोगों को दुःखी करने के लिए ही तुम बार-बार वही चर्चा छेड़ते हो। मैं तुमसे विशेष रूप से कहे देता हूँ कि फिर कभी मेरे पास इस प्रसङ्ग की बात न चलाना।

नलिनी ने कोमल स्वर में कहा—बाबूजी, आप क्रोध न करें, स्वास्थ्य में हानि पहुँचेगी। अक्षय बाबू जो कहना चाहते हैं, कहें। इसमें क्या बनता-बिगड़ता है।

"माफ़ कीजिए। मैं न जानता था कि आप मेरे कहने का बुरा मानेंगे।" यह कहकर अक्षय वहाँ से चल दिया।

चौवनवाँ परिच्छेद

मुकुन्द बाबू काशी से सकुटुम्ब मेरठ जायँगे—इसका निश्चय हो गया है। सामान और असबाब बाँधकर ठीक कर लिया गया। कल सबेरे रवाना होंगे। कमला के मन में बड़ी आशा थी कि इस अरसे में ऐसी कोई घटना हो जायगी जिससे उन लोगों की यात्रा रुक जायगी। एक और आशा उसके मन में यह थी कि कमलनयन डाक्टर दो-एक बार अपने रोगी को देखने आवेंगे। किन्तु उसकी इन दोनों आशाओं में से एक भी सफल न हुई।

जाने की तैयारी की गड़बड़ में कमला कहीं भाग न जाय, इस भय से महामाया उसे बराबर अपनी आँखों के सामने रखकर उसी के द्वारा बर्तन बिछौने आदि बँधवाने और यात्रा-सम्बन्धी अनेक काम करवाने लगी।

कमला एकान्त मन से इच्छा करने लगी कि आज की रात मुझे ऐसी भयानक बीमारी हो जाय जिससे मुझे साथ ले जाना महामाया के लिए असम्भव हो जाय। उस कठिन पीड़ा की चिकित्सा किस डाक्टर के ज़िम्मे की जायगी—यह भी उसने मन ही मन सोच लिया। उस कठिन बीमारी से यदि अन्त में मेरी मृत्यु हो ही जाय तो मैं अन्त-काल में डाक्टर के पैरों की धूल सिर पर डालकर सुख से मर सकूँगी।

महामाया ने उस रात में कमला को अपने ही कमरे में सुलाया और सबेरे स्टेशन जाने के समय उसे अपनी गाड़ी में बिठा लिया। मुकुन्द बाबू सेकेंड क्लास की गाड़ी में जा बैठे। महामाया कमला को लेकर ड्योढ़े दर्जे में सवार हुई।

आख़िर काशी स्टेशन से गाड़ी रवाना हुई। जिस तरह मतवाला हाथी लता को सूँड़ में लपेटकर भागता है उसी तरह रेलगाड़ी कमला को लेकर गरजते-गरजते भाग चली। कमला खिड़की से सिर निकालकर तृषित नयनों से बाहर की ओर देखती रह गई। महामाया ने पूछा—महराजिन, पानों का डिब्बा कहाँ रक्खा है?

कमला ने डिब्बा निकालकर दे दिया। डिब्बा खोलकर महामाया ने कहा—देखो, जो सोचा था वही हुआ। तुम चूने की डिब्बी वहीं छोड़ आईं। अब क्या होगा। जो काम मैं ख़ुद न देखूँगी उसमें एक न एक ग़लती हो ही जाती है! लेकिन यह तुमने जान-बूझकर शैतानी की है! केवल मुझको सताने की इच्छा से तुम डिबिया छोड़ आईं। तुम जान-बूझकर मेरा जी जलाया करती हो! तरकारी में कभी नमक नहीं तो कभी मसाला नहीं। तुम समझती होगी कि यह सब चालाकी मैं समझती ही नहीं। अच्छा, मेरठ चलो, तब देखा जायगा। तुम्हारी सब चालाकी निकल जायगी।

गाड़ी जब पुल के ऊपर से होकर चली तब कमला ने खिड़की से सिर निकालकर एक बार काशी शहर को देख

लिया—इस शहर में कमलनयन का घर किस तरफ़ है, यह उसे मालूम नहीं। इसलिए रेलगाड़ी की तीव्र गति में घाट, मन्दिर और मकान, जो कुछ उसे देख पड़ा, सभी कमलनयन से भरा हुआ जान पड़ा।

महामाया ने कहा—तुम इतना झुककर क्या देख रही हो? तुम चिड़िया नहीं हो, तुम्हारे पर नहीं हैं जो उड़ जाओगी!

काशी का दृश्य कमला की दृष्टि से बाहर हो गया। पर उसका चित्र जो उसके हृदय में खिंच गया है वह ज्यों का त्यों बना है। वह चुपचाप बैठकर आकाश की ओर देखने लगी।

इतने में गाड़ी मोग़लसराय में जा खड़ी हुई। कमला को स्टेशन का शोर-गुल, लोगों की भीड़ आदि अभिनव दृश्य स्वप्न-वत् प्रतीत होने लगा। वह कठपुतली की भाँति एक गाड़ी से उतरकर दूसरी गाड़ी में सवार हुई।

गाड़ी रवाना होने की आख़िरी घंटी बज चुकी। चलने का समय हो गया। ऐसे समय एक परिचित कण्ठ-स्वर सुनकर कमला चौंक पड़ी। बाहर से किसी ने उसे "माँ" कहकर पुकारा। उसके प्लैटफ़ार्म की ओर सामने उमेश खड़ा है।

कमला का चेहरा मारे ख़ुशी के खिल गया। उसने कहा—अरे उमेश!

उमेश ने गाड़ी का दरवाज़ा खोल दिया, कमला झटपट गाड़ी से उतर पड़ी। उमेश ने कमला के पैर छूकर प्रणाम किया। उसका सर्वाङ्ग आनन्द से पुलकित हो गया।

इधर गार्ड ने गाड़ी का दरवाज़ा बन्द कर दिया। महामाया चिल्लाने लगी—अरी महराजिन, तू क्या करती है। गाड़ी चलने पर हुई, जल्द आ, अब देर नहीं है।

महामाया की यह बात कमला के कान तक न पहुँची। गाड़ी सीटी बजाकर भक्-भक् करती हुई स्टेशन से चली गई।

कमला ने पूछा—उमेश! तुम कहाँ से आते हो?

उमेश—ग़ाज़ीपुर से।

कमला—वहाँ सब लोग अच्छे है? चक्रवर्तीजी का क्या हाल है?

उमेश—वे अच्छी तरह हैं।

कमला—मेरी बहन अन्नपूर्णा?

उमेश—उनका हाल क्या पूछती हो। वे दिन-रात आपके लिए रोती रहती हैं।

उसी दम कमला की आँखों में आँसू भर आये। पूछा, उमा का हाल कहो। वह अपनी मौसी को भूल तो नहीं गई?

उमेश—तुम उसे जो गहना दे आई हो वह जब तक उसे पहनाया नहीं जाता तब तक वह किसी तरह दूध नहीं पीती। उसे पहनकर और दोनों हाथ घुमाकर वह कहती है कि "मौसी कहाँ गई!" बस, अन्नपूर्णा की आँखों से आँसू टपक पड़ते हैं।

कमला—तुम यहाँ क्या करने आये?

उमेश—मुझे ग़ाज़ीपुर अच्छा नहीं लगा, इसी से चला आया हूँ।

कमला—कहाँ जाओगे ?

उमेश—तुम्हारे साथ चलूँगा।

कमला—मेरे पास तो एक पैसा भी नहीं है।

उमेश—मेरे पास है।

कमला—तुम्हें कहाँ मिला ?

"आपने जो पाँच रुपये मुझको दिये थे वे अभी तक मेरे पास मौजूद हैं।" यह कहकर उमेश ने गाँठ से पाँच रुपये खोलकर दिखा दिये।

कमला—तो चलो, हम-तुम काशी चलें। क्या कहते हो ? तुम टिकट ला सकोगे ?

"क्यों न ला सकूँगा।" यह कहकर उमेश टिकट ले आया। गाड़ी तैयार थी। उमेश ने कमला को ज़नानी गाड़ी में बिठाकर कहा—मैं पासवाली इसी गाड़ी में हूँ।

काशी स्टेशन पर उतरकर कमला ने उमेश से पूछा—कहो, अब किधर चलोगे ?

उमेश—माँजी, आप कुछ चिन्ता न कीजिए। मैं आपको बहुत अच्छी जगह ले चलता हूँ।

कमला—तुम यहाँ का हाल क्या जानते हो जो मुझे अच्छी जगह ले चलने को कहते हो !

"मैं सब जानता हूँ। आप देखिए तो मैं कहाँ लिये चलता हूँ।" यह कहकर, कमला को एक किराये की गाड़ी

में बिठाकर, उमेश कोचबक्स पर जा बैठा। एक मकान के सामने गाड़ी जा खड़ी हुई। उमेश ने कहा—माँ, यहाँ उतरिए।

कमला गाड़ी से उतरकर उमेश के पीछे पीछे एक मकान के अन्दर गई। उमेश ने पुकारा—दादाजी!

पार्श्ववर्ती एक घर से उत्तर आया—कौन है उमेश! तुम यहाँ कहाँ? चक्रवर्ती हाथ में हुक्का लिये स्वयं बाहर निकल आये। उमेश मुँह बन्द करके हँसने लगा। कमला ने चकित होकर चक्रवर्तीजी को प्रणाम किया। चक्रवर्तीजी अवाक् हो रहे। वे क्या बोलें, कहाँ हुक्का रक्खें, इसकी कुछ सुध उन्हें न रही। आख़िर उन्होंने गद्गद कण्ठ से कहा—मेरी बेटी लौट आई। चलो, ऊपर चलो।

"अरी अन्नपूर्णा, यहाँ देख तो जा, यह कौन आई है!"

अन्नपूर्णा हड़बड़ाकर कमरे से बाहर आकर बरामदे की सीढ़ी के सामने आ खड़ी हुई। कमला उसके पैरों पर गिर पड़ी। अन्नपूर्णा ने उसे उठाकर अपनी छाती से लगाया। कुछ देर तक दोनों प्रेम से विह्वल हो चुप रहीं। पीछे आँसू बरसाती हुई अन्नपूर्णा बोली—हम सबों को रुलाकर तुम एकाएक इस तरह क्यों ग़ायब हो गई? भला इस तरह भी कोई जाता है?

चक्रवर्ती—बेटी, ये बातें पीछे होंगी। अभी इसे ले जाकर मुँह-हाथ धुलाओ, कुछ खाने-पीने का प्रबन्ध कर दो।

इसी समय उमा "मौसी-मौसी" करती हुई दोनों हाथ फैलाकर बाहर दौड़ी आई। कमला ने झट उसे गोद में उठाकर छाती से लगाया और बार-बार उसका मुँह चूमा।

कमला के रूखे केश और मैले कपड़े देखकर अन्नपूर्णा न रह सकी। उसने कमला को स्नानागार में ले जाकर बड़े यत्न से स्नान कराया और अपने सन्दूक़ से एक नई रङ्गीन साड़ी निकालकर पहनने को दी। कहा—मालूम होता है, कल रात में तुम्हें अच्छी नींद नहीं आई। तुम्हारे दोनों नेत्र कैसे हो गये हैं। तब तक तुम बिछौने पर ज़रा लेट रहो, मैं अभी रसोई का ठीक-ठाक करके आती हूँ।

कमला—नहीं बहन, चलो, मैं भी तुम्हारे साथ रसोईघर में चलूँगी।—दोनों रसोईघर में गईं।

चक्रवर्तीजी अक्षय की सम्मति से जब काशी जाने को तैयार हुए तब अन्नपूर्णा ने उनसे कहा—मैं भी आपके साथ काशी चलूँगी।

चक्रवर्ती—विपिनविहारी को तो अभी जाने की छुट्टी नहीं है।

अन्नपूर्णा—मैं अकेली ही जाऊँगी। माँ हैं, किसी को कोई तकलीफ़ न होगी।

अन्नपूर्णा ने इसके पूर्व इस तरह स्वामी से अलग होने का प्रस्ताव कभी न किया था।

आखिर चक्रवर्ती को राज़ी होना पड़ा। अन्नपूर्णा और अक्षय को साथ ले चक्रवर्तीजी ग़ाज़ीपुर से काशी को रवाना हुए। काशी स्टेशन पर उतरकर देखा, उमेश भी उनके साथ ही गाड़ी से उतरा है। चक्रवर्ती ने पूछा—"अरे! तुम क्यों चले आये?" जिस मतलब से सब लोग आये हैं, उसी मतलब से वह भी आया है। किन्तु उमेश तो अब चक्रवर्तीजी के घर का काम करने पर नियुक्त कर लिया गया था, उसके इस तरह चुपचाप चले आने से चक्रवर्ती की गृहिणी क्रुद्ध होंगी। इसलिए सभी ने समझा-बुझाकर उमेश को ग़ाज़ीपुर लौटा दिया। इसके बाद जो घटना हुई सो पाठक जानते ही हैं। वह किसी तरह ग़ाज़ीपुर में न रह सका। अन्नपूर्णा की माँ ने उसे कोई चीज़ लाने के लिए बाज़ार भेजा था, वही पैसे लेकर वह सीधे बनारस चला आया। चक्रवर्ती की गृहिणी ने समझा कि वह पैसे लेकर भाग गया। इससे वे बहुत नाराज़ हुईं।

पचपनवाँ परिच्छेद

उस दिन अक्षय चक्रवर्तीजी से एक बार मिलने आया था, परन्तु उन्होंने कमला के आने की बात उससे नहीं कही। वे समझ गये थे कि रमेश के साथ उसकी हार्दिक मित्रता नहीं है।

कमला क्यों चली गई थी, कहाँ चली गई थी, इस विषय में किसी ने उससे कुछ न पूछा। दिन इस तरह बीत गया जैसे कमला इन सबके साथ ही काशी देखने आई है। उमा की धाय ने स्नेह के आँसू ढलकाकर उससे कुछ पूछना चाहा था परन्तु चक्रवर्ती ने उसे एकान्त में बुलाकर मना कर दिया।

रात को अन्नपूर्णा ने कमला को अपने बिस्तर पर सुलाया। वह आप भी उसे छाती से लगाकर लेट गई। कमला की पीठ पर वह दहना हाथ फेरने लगी। उसका यह कोमल हस्त-स्पर्श नीरव प्रश्न की भाँति कमला से गुप्त मर्मान्तिक वेदना की बात पूछने लगा।

कमला ने कहा—बहन, तुम सबने मेरे विषय में क्या समझा था? मुझ पर तो तुम बहुत नाराज़ हुई होगी?

अन्नपूर्णा—क्या हमें इतनी भी समझ नहीं है? क्या हम सब नहीं जानतीं कि यदि संसार में तेरे लिए कोई और रास्ता रहता तो ऐसे सङ्कीर्ण मार्ग का अनुसरण तू कदापि न करती! हम यही कहकर रोती थीं कि भगवान् ने क्यों तुम्हें ऐसे सङ्कट

में डाल दिया। जो कुछ भी अपराध करना नहीं जानती उसी को दण्ड मिलता है !

कमला—बहन, तुम मेरा सब वृत्तान्त सुनोगी ?

अन्नपूर्णा ने कोमल स्वर में कहा—हाँ, क्यों न सुनूँगी ?

कमला—तब मैं तुमसे क्यों नहीं कह सकी, यह मैं नहीं जानती। उस समय मेरा चित्त स्थिर न था। सोचकर कोई बात देखने का समय न था। मेरे सिर पर आफ़त का एक ऐसा पहाड़ टूट पड़ा था कि मैं लज्जा से तुम्हें अपना मुँह न दिखा सकती थी। संसार में मेरे माँ-बहन नहीं हैं, तुम्हीं मेरी माँ-बहन हो। इस कारण मैं तुमसे जी खोलकर सब बातें कहती हूँ। नहीं तो मेरा जो वृत्तान्त है वह किसी से कहने योग्य नहीं है।

कमला अब लेटी न रह सकी, उठकर बैठ गई। अन्नपूर्णा भी उसके सामने सावधानी से बैठ गई। अँधेरे में बिछौने पर बैठकर कमला विवाह से आरम्भ करके अपना सारा जीवन-वृत्तान्त कहने लगी।

कमला ने जब कहा—विवाह के पहले या विवाह की रात को मैंने अपने पति का मुँह नहीं देखा तब अन्नपूर्णा ने कहा—तुम्हारी जैसी अबोध स्त्री मैंने देखी नहीं। तुमसे भी कम उम्र में मेरा ब्याह हुआ था। क्या तुम समझती हो मैं, लज्जा से, अपने वर को देखने का सुयोग नहीं पा सकी ?

कमला—लज्जा नहीं बहन, मेरे ब्याह की उम्र प्रायः बीत गई थी। ऐसे समय में जब एकाएक मेरे ब्याह की बात स्थिर

हो गई तब मेरी सखी-सहेलियाँ मुझसे तरह-तरह के व्यङ्ग करने लगीं। ज़्यादा उम्र में दूलह मिलने से मेरा मिज़ाज सात आसमान के ऊपर नहीं चढ़ गया। यही दिखलाने के लिए मैंने उनकी ओर पलक उठाकर देखा तक नहीं। बल्कि उनके सम्बन्ध में मन में कुछ आग्रह करना भी मैंने बड़ी लज्जा और अमर्यादा का विषय समझ लिया था। आज उसी का प्रायश्चित्त कर रही हूँ।

यह कहकर कमला कुछ देर तक चुप रही। उसके बाद फिर कहने लगी—ब्याह होने के उपरान्त नाव डूबने पर कैसे हमारी प्राणरक्षा हुई, यह मैंने तुमसे पहले ही कहा था। तब मैं यह न जानती थी कि मृत्यु के मुख से बचकर मैं जिसके हाथ पड़ी हूँ, जिसे मैंने अपना पति समझा है, वह मेरा पति नहीं है।

अन्नपूर्णा चौंक पड़ी। वह कमला के गले से लिपटकर बोली—हाय रे दैव! इसी से यह विडम्बना हुई! अब मैं सब बातें समझ गई। ऐसा भी सत्यानाश हो जाता है।

कमला—कहो तो बहन, जब मरने ही से सब आफ़त टल जाती तब विधाता ने मुझे ऐसी विपत्ति में क्यों डाल दिया?

अन्नपूर्णा—क्या रमेश बाबू को भी कुछ मालूम नहीं हुआ?

"विवाह के कुछ दिन बाद उन्होंने एक दिन मुझे सुशीला कहकर पुकारा। मैंने उनसे कहा, मेरा नाम कमला है, आप मुझे सुशीला कहकर क्यों पुकारते हैं? अब मैं समझती हूँ, उसी दिन उनके कान खड़े हुए। किन्तु

रोगी को देखने के लिए डाक्टर आये और उनको देखने के लिए अन्नपूर्णा हड़बड़ा उठी। कमला से कहा—अरी, जल्दी आ।

महामाया के घर में कमलनयन को देखने के लिए जो कमला मारे व्यग्रता के अपने को भूल गई थी वही आज लज्जा से उठना नहीं चाहती।

"मैं अब देर तक तेरी खुशामद न करूँगी। यह अभी कह रखती हूँ। समय बहुत थोड़ा है। उमा की बीमारी केवल नाम मात्र की है। डाक्टर देर तक न ठहरेंगे। तुम्हारे मनाने ही में समय निकल जायगा तो उनको मैं देख न सकूँगी।" यह कहकर अन्नपूर्णा ज़ोर से कमला को खींचकर दरवाज़े की आड़ में ले आई। कमलनयन उमा की छाती और पीठ की भली भाँति परीक्षा करके और नुसखा लिखकर चले गये।

अन्नपूर्णा ने कहा—कमला, विधाता तुमको चाहे जितना दुःख दें पर तुम्हारा भाग्य अच्छा है। अब दो-एक दिन तुम्हें धीरज धरकर रहना होगा। हम तुम्हारी सब व्यवस्था किये देती हैं। घबराना नहीं। इधर उमा के लिए डाक्टर की ज़रूरत बनी रहेगी, वे उसको देखने के लिए आवेंगे ही। अतएव तुमको बिलकुल वञ्चित न होना पड़ेगा।

चक्रवर्ती एक दिन ऐसा समय ढूँढ़कर डाक्टर बुलाने गये जब वे घर पर न थे। नौकर से पूछने पर मालूम हुआ

"डाक्टर बाबू मरीज़ को देखने गये हैं।" चक्रवर्ती ने कहा—वे नहीं हैं, उनकी माता तो हैं। उनसे जाकर कहो, एक बूढ़ा ब्राह्मण उनका दर्शन करना चाहता है।

ऊपर से पुकार हुई। चक्रवर्ती जाकर विनयपूर्वक बोले—आपका नाम काशी में विख्यात है। इसी से मैं आपके दर्शन कर कृतार्थ होने और अनायास पुण्य सञ्चय करने के लिए आया हूँ। और मैं कुछ नहीं चाहता। मेरी एक छोटी सी नातिन कुछ दिनों से बीमार है। उसी के लिए आपके बेटे को बुलाने आया था। मालूम हुआ कि वे घर में नहीं हैं। इसी से कहा कि ख़ाली हाथ न फिरूँगा। आपके दर्शन का फल लेकर ही जाऊँगा।

कल्याणी—कमल अब आता ही होगा। आप ज़रा बैठने की कृपा करें। दोपहर हो गया। आपको कुछ जलपान के लिए मँगा देती हूँ।

चक्रवर्ती—मैं जानता था कि आप मुझे बिना कुछ खिलाये न जाने देंगी। मुझको देखते ही लोग समझ जाते हैं कि मैं भोजनप्रिय हूँ, और इस विषय में लोग मुझ पर कुछ विशेष दया भी करते हैं।

चक्रवर्ती को जलपान कराकर कल्याणी बहुत प्रसन्न हुईं। उन्होंने चक्रवर्ती से कहा—कल आपको मेरे यहाँ दोपहर को भोजन करना पड़ेगा। आज मैं तैयार न थी, इसी से भली भाँति आपको भोजन न करा सकी।

चक्रवर्ती ने कहा—जब आप चाहें तब इस ब्राह्मण का स्मरण कीजिएगा। आपके घर से मेरा घर अधिक दूर नहीं है। कहिए तो मैं आपके नौकर को अपना घर दिखा दूँ।

इस तरह चक्रवर्तीजी ने दो ही चार दिन में कमलनयन के घर से हेल-मेल कर लिया।

कल्याणी ने कमलनयन को बुलाकर कहा—तुम चक्रवर्ती-जी से फ़ीस न लेना।

चक्रवर्ती ने हँसकर कहा—वे पहले से ही आपकी आज्ञा का पालन करते हैं। मुझसे कुछ नहीं लेते। जो दाता हैं, उदार हैं, वे ग़रीब को देखते ही पहचान लेते हैं।

दो-एक दिन बाप-बेटी में परामर्श होने के बाद एक दिन सबेरे चक्रवर्ती ने कमला से कहा—चलो बेटी, दशाश्वमेध घाट पर स्नान करने चलें।

कमला ने अन्नपूर्णा से कहा—बहन, तुम भी चलो न।

अन्न०—नहीं, उमा अच्छी नहीं है। मैं उसे छोड़कर कैसे जाऊँ।

चक्रवर्ती जिस मार्ग से दशाश्वमेध घाट को गये थे स्नान करके उस मार्ग से न लौटे; वे दूसरे ही रास्ते से चले। कुछ दूर आगे जाकर देखा, एक वृद्धा स्त्री स्नान करके पीताम्बर पहिने ताँबे की कलसी में गङ्गाजल लिये धीरे-धीरे आ रही है।

कमला को उनके सामने लाकर चक्रवर्ती ने कहा—बेटी, इनको प्रणाम करो। ये डाक्टर बाबू की माँ हैं।

कमला ने चकित होकर झट उनके पैरों पर सिर रखकर प्रणाम किया। कल्याणी ने कहा—तुम कौन हो? देखूँ, देखूँ, तुम्हारा मुँह देखूँ। यह कहकर उन्होंने कमला का घूँघट हटाकर उसके झुके हुए मस्तक को ऊपर उठाकर देखा। फिर बोलीं—अहा! यह तो साक्षात् लक्ष्मी की मूर्ति जान पड़ती है। बेटी! तुम्हारा नाम क्या है?

उसके उत्तर देने के पूर्व ही चक्रवर्ती ने कहा—इसका नाम "सती" है। यह मेरे दूर के नाते की भतीजी है। इसके माँ-बाप कोई नहीं हैं। अब यह मेरे ही पास है।

कल्याणी—चलिए चक्रवर्तीजी, मेरे घर होकर जाइएगा।

उनको घर ले जाकर कल्याणी ने कमलनयन को पुकारा। तब तक वे बाहर चले गये थे।

चक्रवर्ती चौकी पर बैठे। कमला उनसे कुछ दूर हटकर नीचे बैठ गई। चक्रवर्ती ने कहा—देखिए, मेरी भतीजी का भाग्य बड़ा ही मन्द है। ब्याह होने के दूसरे ही दिन इसका पति संन्यासी होकर कहीं चला गया। यह नहीं जानती कि पति किसे कहते हैं। इसकी इच्छा तीर्थ-सेवन करने की है। यह चाहती है कि तीर्थ में रहकर धर्म्म-कर्म्म में ही जीवन व्यतीत करे। सिवा धर्म्माचरण के इसके धैर्य्य की और सामग्री ही क्या है। यहाँ मेरा घर नहीं है। मैं नौकरी करता हूँ। जो कुछ वेतन मिलता है उसी से निर्वाह होता है। मुझे ऐसा सुभीता नहीं कि मैं यहाँ आकर इसके साथ रहूँ। इसी से

आपकी शरण में आया हूँ। यदि आप इसे अपनी लड़की की भाँति अपने पास रख लें तो मैं निश्चिन्त हो जाऊँ। इसके रहने से जब आपको किसी तरह की असुविधा जान पड़े तब आप इसे मेरे पास ग़ाज़ीपुर भेज दें। किन्तु मैं आपसे इतना कहे जाता हूँ कि इसे दो दिन अपने पास रखने ही से आप समझ जायँगी कि यह तो रत्न है। तब आप क्षण भर भी इसे अपनी आँखों के सामने से अलग न होने देंगी।

कल्याणी ने प्रसन्न होकर कहा—वाह, यह तो बड़ी अच्छी बात है। ऐसी लड़की को आप रक्खे जाते हैं, यह मेरे लिए विशेष लाभ है। मैं तो कई बार रास्ते से दूसरों की लड़कियों को अपने घर लाकर और उन्हें खिला-पिलाकर आनन्द मनाती हूँ। किन्तु उन्हें अपने घर नहीं रख सकती। मैं छोटे बालकों और बालिकाओं को बहुत प्यार करती हूँ। यह तो बराबर मेरे पास रहेगी। मैं इसे अपनी बेटी की तरह रक्खूँगी। आप इसके लिए कुछ भी सोच-फ़िक्र न करें। मेरा पुत्र कैसा है, यह तो आपने दस-पाँच सज्जनों के मुँह से सुना ही होगा। वह बड़ा ही सच्चरित्र है। उसके सिवा मेरे घर में और कोई नहीं।

चक्रवर्ती—कमलनयन बाबू का नाम कौन नहीं जानता? वे यहाँ आपके पास हैं यह जानकर मैं और भी निश्चिन्त हूँ। मैंने सुना है, विवाह होने के बाद दुर्घटना के कारण दूसरे

ही दिन जब उनकी स्त्री पानी में डूबकर मर गई तब से वे एक प्रकार से ब्रह्मचारी की भाँति रहते हैं।

कल्याणी—उस बात को जाने दीजिए। जो हो गई सो हो गई। उस घटना का स्मरण होते ही मेरा शरीर भय से काँपने लगता है।

चक्रवर्ती—आपकी आज्ञा हो तो इसे आपके पास छोड़कर अब बिदा होऊँ। कभी-कभी आकर इसे देख जाया करूँगा। इसके एक बड़ी बहन है। वह भी आपसे आशीर्वाद लेने आवेगी।

चक्रवर्ती के चले जाने पर कल्याणी ने कमला को अपने पास बिठाकर कहा—बेटी, मुँह तो ऊपर उठाओ, तुम्हारी उम्र तो अधिक नहीं जान पड़ती। अहा! तुमको छोड़कर चल दिया, फिर कभी तुम्हारी खोज-ख़बर न ली। हा! संसार में ऐसे कठोर जीव भी हैं। मैं आशीर्वाद देती हूँ, तुम्हारा सुहाग बढ़े; वे फिर लौट आवें। ऐसा सुन्दर मुखड़ा विधाता कभी वृथा नष्ट करने के लिए नहीं बना सकता। यह कहकर उन्होंने उसकी ठुड्डी छू करके अपनी उँगली चूमी।

कल्याणी—यहाँ तुम्हारी हमजोली की कोई सखी-सहेली तुम्हें न मिलेगी। तुम अकेली मेरे पास रह सकोगी?

कमला ने अपनी दोनों बड़ी-बड़ी आँखों के द्वारा आत्म-निवेदन करके कहा—हाँ।

कल्याणी—तुम किस तरह समय बिताओगी, मैं यही सोचती हूँ।

कमला—मैं घर का काम-काज करूँगी।

कल्याणी—तू बड़ी भोली है। मेरे घर का काम ही कितना है जो तू करेगी। संसार में मेरे यही एकमात्र बेटा है। वह भी संन्यासी की तरह रहता है। दिन-रात वेदान्त की बातों का मनन करता है। कभी मुँह खोलकर एक बार भी नहीं कहता कि "माँ! मुझे यह चाहिए, मैं यह खाना चाहता हूँ, यह चीज़ मेरे पसन्द की है, इसे मैं बहुत चाहता हूँ।" जो वह ऐसा कहता तो मैं न-जाने कितनी .खुश होती। परन्तु वह कभी कुछ नहीं कहता। ख़ासी आमदनी है, परन्तु हाथ में कुछ नहीं रखता। सब अच्छे कामों में ख़र्च कर देता है; परन्तु किस धर्म-कार्य में क्या देता है, यह किसी को बताता नहीं। देखो बेटी, जब तुमको चौबीसों घण्टे मेरे पास रहना होगा तब यह बात पहले ही कह रखती हूँ कि मेरे मुँह से मेरे पुत्र की बार-बार प्रशंसा सुनकर तुम्हें ज़रूर बुरा मालूम होगा। किन्तु यह तुम्हें बरदाश्त करना होगा।

कमला ने आनन्द से पुलकित होकर आँखें नीची कर लीं।

कल्याणी ने कहा—मैं तुम्हें क्या काम दूँ, यही सोचती हूँ। सिलाई करना जानती हो?

कमला—थोड़ा-थोड़ा जानती हूँ।

कल्याणी—अच्छा, मैं तुमको सिलाई सिखा दूँगी। पढ़ी-लिखी हो?

कमला—हाँ, लिखना-पढ़ना जानती हूँ।

कल्याणी—अच्छी बात है, बिना चश्मा लगाये मैं पढ़ नहीं सकती। तुम मुझे पढ़कर कुछ-कुछ सुनाया करना।

कमला—मैं रसोई बनाना जानती हूँ, और घर का सब काम सँभाल सकती हूँ।

कल्याणी—तुम साक्षात् अन्नपूर्णा हो। तुम यह काम न जानोगी तो कौन जानेगा! अब तक मैं कमल को अपने हाथ से रसोई बनाकर खिलाती रही हूँ। मेरे बीमार होने पर वह अपने हाथ से रसोई बनाकर खाता है, परन्तु दूसरे के हाथ का बनाया कुछ नहीं खाता। अब मैं उसे अपने हाथ से रसोई बनाने न दूँगी। उसके स्वयंपाक का अभ्यास छुड़ाऊँगी। तुम्हारे रहने से मुझे बड़ी सहायता मिलेगी। बीमार हो जाने पर जब कभी मैं असमर्थ हो पड़ूँगी तब तुम पकाकर मुझे भी खिलाओगी। तुम्हारे हाथ का हविष्यान्न खाने में मुझे अरुचि न होगी। चलो बेटी, मैं तुम्हें रसोईघर और भण्डार-घर दिखा लाऊँ।

कल्याणी ने घूम-घूमकर अपना सब घर कमला को दिखलाया। कमला ने मौक़ा पाकर दरख़ास्त की। कहा—माँ, आज मुझी को रसोई बनाने दीजिए।

कल्याणी कुछ हँसकर बोली—गृहिणी का राजत्व भण्डार-घर और रसोईघर पर ही रहता है। मैं अपने जीवन में सब कामों से धीरे-धीरे हाथ खींचती आती हूँ। रसोई का काम मेरा साथ नहीं छोड़ता। वह अब तक मेरे साथ

ही है। अच्छा, आज तुम्हीं भोजन बनाओ। दो-चार दिन में सब कामों का भार क्रम-क्रम से तुम्हारे ही ऊपर पड़ेगा। मुझे भी ईश्वर के चरणों में मन लगाने को समय मिलेगा। बन्धन एकदम नहीं कट जाता। अभी दो-चार दिन चित्त चञ्चल रहेगा। भण्डारघर का सिंहासन छोटी चीज़ नहीं है।

क्या पकाना होगा, क्या करना होगा, यह सब कमला को बताकर कल्याणी पूजाघर में चली गईं। कल्याणी के निकट आज कमला के गृहकार्य-कौशल की परीक्षा प्रारम्भ हुई।

कमला अपनी स्वाभाविक तत्परता के साथ रसोई की सब तैयारी करके रसोई बनाने लगी।

कमलनयन बाहर से आने पर पहले अपनी माँ को देखने जाते थे। माँ के स्वास्थ्य की चिन्ता उनके मन में बराबर बनी रहती थी। आज घर में प्रवेश करते ही उन्हें रसोईघर का शब्द सुन पड़ा और मसाले की सुगन्ध आई। माँ रसोई बना रही हैं, यह समझकर कमलनयन रसोईघर के द्वार के सम्मुख आ खड़े हुए।

पैरों की आहट पाकर कमला ने चकित होकर ज्योंही पीछे की ओर घूमकर देखा त्योंही कमलनयन की आँखों से उसकी आँखें भिड़ गईं। उसने झटपट हाथ से चमचा रख सिर पर घूँघट डालने की वृथा चेष्टा की, क्योंकि रसोई बनाने के पूर्व ही उसने आँचल को कमर में बाँध लिया था। आँचल को किसी तरह खींच-खाँचकर जब तक वह माथे को ढके-

ढके तब तक कमलनयन विस्मित होकर वहाँ से चले गये। इसके बाद जब कमला ने हाथ में चमचा लिया तब उसका हाथ काँप रहा था।

कल्याणी झटपट पूजा समाप्त करके रसोईघर में गईं। वहाँ देखा तो रसोई तैयार हो गई है। घर को धोकर कमला ने साफ़ कर रक्खा है। कहीं जली लकड़ी, कोयला या तरकारी के छिलके नहीं हैं। सभी स्थान परिष्कृत है। कहीं किसी तरह का मैलापन नहीं है। यह देखकर कल्याणी मन ही मन प्रसन्न हुईं। बोलीं—तुम यथार्थ में ब्राह्मण की लड़की हो।

कमलनयन जब भोजन करने बैठे तब कल्याणी उनके सामने बैठीं। एक सङ्कुचित मूर्ति चुपचाप द्वार की आड़ में खड़ी थी। झाँककर देखने का उसे साहस न होता था। रसोई कहीं बिगड़ न गई हो, इस भय से वह मरी जाती थी।

कल्याणी ने पूछा—आज की रसोई कैसी बनी?

कमलनयन खाने-पीने का वैसा शौकीन न था। जो उसके आगे आ जाता था, बड़ी प्रसन्नता से खा लेता था। इसी से कल्याणी कभी ऐसा अनावश्यक प्रश्न उससे न करती थीं। आज उन्होंने विशेष कौतूहल के कारण पूछा था।

कमलनयन को आज रसोईघर के नूतन रहस्य का परिचय मिल चुका है, यह उनकी माँ न जानती थीं। इधर माता का शरीर अस्वस्थ होने से कमलनयन ने रसोई बनाने के लिए किसी को रख लेने के निमित्त माँ से कई बार कहा था।

किन्तु वे किसी तरह उन्हें इस प्रस्ताव पर राज़ी न कर सके थे। आज एक व्यक्ति को रसोई बनाने के काम में नियुक्त देख वे मन ही मन प्रसन्न थे। रसोई अच्छी हुई है या बुरी, इस पर उन्होंने कुछ ध्यान न दिया; किन्तु वे बड़े उत्साह के साथ बोले—बहुत स्वादिष्ठ बनी है।

ओट में खड़े-खड़े यह उत्साहवर्धक बात सुनकर कमला स्थिर भाव से खड़ी न रह सकी। उसने बड़ी फुरती से पास के दूसरे कमरे में जाकर अपने चञ्चल हृदय को दोनों हाथों से दबा लिया।

भोजन करके कमलनयन मन में एक अस्पष्ट बात को स्पष्ट कर लेने की चेष्टा करते हुए, नित्य के नियमानुसार, अपनी ख़ास कोठरी में अध्ययन करने को चले गये।

तीसरे पहर कल्याणी ने अपने हाथ से कमला के केश सँवारकर माँग में सिन्दूर भर दिया। फिर उसके मुँह को एक बार इस तरफ़ और एक बार उस तरफ़ घुमा-फिराकर अच्छी तरह देखा। कमला लज्जा से सिर झुकाये बैठ रही। कल्याणी ने मन में कहा—अहा यदि ऐसी एक पतोहू मेरी होती तो कैसा अच्छा होता!

उसी रात में कल्याणी को फिर ज्वर चढ़ आया। कमलनयन का मन उद्विग्न हो उठा। उन्होंने कहा—माँ, तुमको मैं कुछ दिन के लिए काशी से बाहर अन्यत्र ले जाऊँगा। यहाँ तुम्हारा शरीर अच्छा नहीं रहता।

कल्याणी—बच्चा ! यह न होगा। दो-चार दिन तक अधिक बचा रखने की आशा से मुझे काशी छुड़ाकर कहीं अन्यत्र ले जाओगे, यह न होगा। मैं अब अन्तकाल में काशी छोड़ कहीं न जाऊँगी। (कमला की ओर देखकर) बेटी ! तुम बड़ी देर से किवाड़ की आड़ में क्यों खड़ी हो ? जाओ, जाओ सो रहो। सारी रात इस तरह जागते रहने से तुम भी बीमार हो जाओगी। मैं कई दिनों तक इसी अवस्था में रहूँगी। इस बीच मेरी सेवा-टहल तुम्हीं को करनी होगी। रात भर जागोगी तो काम कैसे कर सकोगी ? कमलनयन, तुम एक बार उस कमरे में जाओ।

कमलनयन के जाने पर कल्याणी के पायताने बैठकर कमला धीरे-धीरे उसके तलुओं पर हाथ फेरने लगी। कल्याणी ने कहा—पूर्वजन्म में तुम जरूर मेरी माँ थीं, नहीं तो न तुम्हारा कहीं नाम न तुम्हारी चर्चा, एकाएक तुम मेरे पास कैसे आ गईं ! मेरा एक विचित्र स्वभाव है कि मैं किसी से अपनी सेवा कराना नहीं चाहती, दूसरे को अपना शरीर तक छूने नहीं देती। परन्तु तुम जब मेरी देह पर हाथ रखती हो तब मुझे बड़ा आराम मिलता है। तुम्हारे हाथ के स्पर्श से जान पड़ता है जैसे मेरा आधा दुःख दूर हो गया हो। ऐसा लगता है जैसे मैं तुमको पहले से जानती होऊँ। यह बड़े आश्चर्य की बात है। यह नहीं मालूम होता कि तुम कोई दूसरी हो, घर की नहीं। अच्छा, अब जाओ सो रहो।

मेरे लिए कुछ चिन्ता न करो। मेरे पास ही के कमरे में कमल है। वह मेरी सेवा अपने हाथ से करता है, हज़ार मना करती हूँ तो भी वह नहीं मानता। बराबर मेरी सेवा में हाज़िर रहता है। उसमें एक गुण है, वह रातभर जागे, चाहे कैसा ही काम क्यों न करे, उसका मुँह ज़रा भी म्लान नहीं होता। उसका चेहरा देखकर कोई नहीं कह सकता कि उसने कुछ परिश्रम किया है या उस पर कोई सङ्कट आ पड़ा है। इसका कारण है। वह कभी घबराता नहीं। मैं ठीक उसके विपरीत हूँ। तनिक में ही घबरा जाती हूँ। मैं समझती हूँ, तुम मन ही मन यह सोचकर हँस रही हो कि कमलनयन का गुण-गान फिर आरम्भ हो गया। अब लगातार यही एक चर्चा रहेगी। इकलौता बेटा रहने से ऐसे ही होता है। बेटी, मैं तुमसे सच कहती हूँ। कमलनयन सा मातृ-भक्त बालक भाग्य ही से किसी माता को मिलता है। कभी-कभी मेरे मन में होता है कि कमलनयन मेरा बेटा नहीं, बाप है। उसने जितना मुझे सुख दिया है, जितना कष्ट मेरे लिए अङ्गीकार किया है, उतना क्या मैं उसके लिए कभी कर सकती हूँ। यह देखो, फिर कमलनयन की ही बात। अच्छा, अब न कहूँगी। तुम जाओ, सो रहो। नहीं, नहीं, यह न हो सकेगा। तुम्हारे रहने से मुझे नींद न आवेगी। वृद्ध के पास आदमी रहे तो उसे बकना छोड़ और कुछ अच्छा नहीं लगता।

दूसरे दिन कमला ही को सारी गृहस्थी सँभालनी पड़ी। कमलनयन ने पूरब ओर के उसारे में ईंट की दीवाल से घेरकर एक छोटी सी कोठरी बना ली थी। उसमें सङ्गमर्मर का फ़र्श था। यहीं पर वे उपासना किया करते थे। दोपहर को इसी कमरे में बैठकर वे अध्ययन करते थे। उस दिन सबेरे ही उस कमरे में प्रवेश करके कमलनयन ने देखा कि वह ख़ूब साफ़-सुथरा धुला हुआ पड़ा है। धूप जलाने की एक पीतल की धूपदानी थी, वह आज सोने की तरह झकाझक चमक रही है। ताक़ पर दावात क़लम आदि चीज़ें रक्खी हैं। छोटी सी आलमारी में उनकी कुछ सुपाठ्य पुस्तकें सिलसिलेवार रक्खी हैं। कमरे की इस निर्मलता के ऊपर खुली खिड़की की राह से प्रातःकालिक सूर्य की किरणें पड़कर उसकी स्वच्छता को और भी अधिक बढ़ा रही हैं, यह देखकर स्नान करके आये हुए कमलनयन के मन में बड़ी प्रसन्नता हुई।

कमला बड़े तड़के लोटे में गङ्गाजल लेकर कल्याणी के बिछौने के पास आ खड़ी हुई। कल्याणी ने उसको नहाये-धोये देखकर कहा—यह क्या बेटी, तुम अकेली ही गङ्गाजी गई थीं? मैं बड़ी देर से सोच रही थी कि मैं बीमार हूँ, तुम किसके साथ स्नान करने जाओगी। तुम्हारी उम्र अभी कम है, इस तरह अकेली—

कमला—मेरे नैहर का एक नौकर मुझको देखने के लिए कल रात को यहाँ आया था। मैं उसी को साथ लेकर गई थी।

कल्याणी—हाँ, तुम्हारी चाची ने तुम्हारी फ़िक्र करके तुमको देखने के लिए उसे भेजा है। यह अच्छा ही हुआ, वह तुम्हारे ही पास बना रहे तो क्या हर्ज है। तुम्हें उससे गृहकार्य्य में सहायता मिलेगी। वह कहाँ है, उसे पुकारो तो।

कमला ने उमेश को बुला लिया। उमेश ने धरती में सिर टेक-कर कल्याणी को प्रणाम किया। उन्होंने पूछा—तेरा क्या नाम है ?

"मेरा नाम उमेश है" कहकर वह अकारण हँस पड़ा।

कल्याणी ने हँसकर पूछा—"उमेश, अच्छी धोती तुझे किसने दी है ?"

उमेश ने कमला की ओर उँगली दिखाकर कहा—माँजी ने।

कल्याणी ने कमला की ओर देखकर उमेश का परिहास किया। हँसकर कहा—मैंने समझा कि तुझे अपनी ससुराल से मिली है।

कल्याणी की कृपा से उमेश यहीं रहने लगा।

उमेश से सहायता लेकर कमला ने घर के सब आवश्यक काम समाप्त कर डाले। कमलनयन के शयनगृह को अपने हाथ से झाड़-बुहारकर साफ़ किया। उनके बिछौने को धूप में रख दिया। कमलनयन की एक मैली धोती घर के एक कोने में पड़ी थी। कमला ने उसे साबुन से धोकर अच्छी तरह सुखाकर, अरगनी पर चुनियाकर रख दिया। घर की जो चीज़ें साफ़-सुथरी थीं उन्हें भी कपड़े से झाड़-पोंछकर उसने यथास्थान रक्खा। बिछौने के सिरहाने की ओर दीवाल

में एक आलमारी थी। उसे खोलकर देखा, उसके भीतर कुछ न था, नीचे के ख़ाने में सिर्फ़ कमलनयन की एक जोड़ी खड़ाऊँ थी। कमला ने झट उसे निकालकर अपने सिर से लगा लिया और छोटे बालक की भाँति उसे छाती से लगाकर बार-बार आँचल से उसकी धूल पोंछकर फिर उसी में रख दी।

तीसरे पहर कमला कल्याणी के पैरों के पास बैठकर उनके तलुवों में तेल मल रही थी। ऐसे समय नलिनी ने हाथ में फूलों की डाली लिये घर में प्रवेश कर कल्याणी को प्रणाम किया।

कल्याणी उठ बैठी और स्नेह भरे स्वर में बोली—आओ, आओ, बैठो, घनानन्द बाबू तो अच्छे हैं?

नलिनी—उनका शरीर अस्वस्थ था। इसी से कल न आ सकी। आज वे अच्छे हैं।

कल्याणी ने कमला को दिखाकर कहा—यह देखो बेटी, बचपन में ही मेरी माँ मर गई थीं। उन्होंने फिर जन्म लेकर इतने दिन बाद कल अकस्मात् रास्ते में मुझे दर्शन दिया है। मेरी माता का नाम था पार्वती। इस बार इनका नाम सती है। कहो तो, ऐसी लक्ष्मीमूर्ति तुमने कभी देखी थी?

कमला ने लज्जा से सिर झुका लिया। नलिनी के साथ उसका धीरे-धीरे परिचय हो गया।

नलिनी ने कल्याणी से पूछा—अब आपकी तबीयत कैसी है?

कल्याणी—मैं बहुत बूढ़ी हुई। मेरी जो उम्र है उसको देखते हुए अब मेरी तबियत का हाल क्या पूछने योग्य है। मेरी

आयु लेकर तुम सब जिओ। मैं जो अब तक जीती हूँ यही मेरे लिए बहुत है। परन्तु अब नाव किनारे लगी। कुछ दिन की मेहमान हूँ। किस दिन चल बसूँगी, इसका निश्चय नहीं। तुमने भला स्मरण दिलाया। मैं कितने ही दिनों से तुमसे कहना चाहती थी। पर कहने की सुविधा न मिलती थी। कल रात को जब फिर मुझे बुख़ार आया तब मैंने निश्चय किया कि अब विलम्ब करना अच्छा नहीं। देखो बेटी, बाल्यावस्था में यदि मुझसे कोई ब्याह की बात करती तो मैं लज्जा से मर जाती, तुम लोगों को वैसी शिक्षा नहीं है। तुम लिखी-पढ़ी हो। उम्र भी कम नहीं है। तुमसे यह बात स्पष्ट कहना ही अच्छा है। इसी लिए आज तुमसे .खुलासा बात कहती हूँ। तुम मुझसे लाज न करो। अच्छा, कहो तो उस दिन मैंने तुम्हारे बाप से जो प्रस्ताव किया था क्या वह उन्होंने तुमको नहीं सुनाया ?

नलिनी ने नीची नज़र करके कहा—कहा तो था।

कल्याणी—तो शायद तुमने उस बात को स्वीकार नहीं किया। अगर तुम उस प्रस्ताव पर सहमत होतीं तो वे उसी समय मेरे पास दौड़े आते। तुमने सोचा होगा, "मेरा कमल संन्यासी है, दिन-रात योग-जप के पीछे हैरान रहता है। उसके साथ ब्याह होने से क्या सुख होगा ?" परन्तु तुम उसे नहीं पहचान सकतीं। उसको ऊपर से देखने से तुम्हें यही जान पड़ता होगा कि वह महाविरागी है, किन्तु यह तुम्हारी भूल है।. मैं उसे जन्म ही से जानती हू । मेरी बात पर

विश्वास करो। वह बड़ा अनुरागी है। उसके हृदय में प्रेम इतना अधिक है, उसे छिपाने के लिए उसने अपना दमन कर रक्खा है। उसके इस संन्यास-कवच को तोड़कर जो उस हृदय को पा सकेगी उसे अवश्य ही बहुत मीठा फल मिलेगा। मैं यह तुमसे कह रखती हूँ। बेटी नलिनी, तुम अब बालिका नहीं, तुम पढ़ी-लिखी हो, समझदार हो। तुमने मेरे ही कमल से मन्त्र-दीक्षा ली है। यदि मैं तुमको कमल की गृहिणी बनाकर मरूँ तो फिर मेरे मन में कोई चिन्ता न रहेगी। नहीं तो मैं तुमसे सच कहती हूँ, मेरे मरने पर वह कदापि विवाह न करेगा। तब उसकी क्या दशा होगी, यह तुम एक बार सोचो। बेचारा मारा-मारा फिरेगा। कमलनयन पर तुम्हारी भक्ति और श्रद्धा भी है। तो फिर तुम्हें उज्र. किस बात का है?

नलिनी ने सिर नीचा करके कहा—यदि आप मुझे इस योग्य समझती हैं तो मुझे कोई उज्र. नहीं।

यह सुनकर कल्याणी ने नलिनी को अपने पास खींचकर बड़े प्यार से उसका माथा चूम लिया। इसके उपरान्त वे इस सम्बन्ध में और कुछ न बोलीं।

"सती, ये फूल हैं"—कल्याणी ने नज़र उठाकर देखा। सती वहाँ न थी। वह पैरों की आहट बचाकर कभी की उस कमरे से चली गई थी।

पूर्वोक्त बातचीत होने के अनन्तर नलिनी को कल्याणी के पास बैठने में लज्जा मालूम होने लगी। उसने सकुचकर कहा—

माँ, मैं अब जाती हूँ। बाबूजी राह देखते होंगे। उनकी तबीयत अच्छी नहीं है। यह कहकर उसने कल्याणी को प्रणाम किया। कल्याणी ने उसके माथे पर हाथ रखकर कहा—बेटी, फिर आना।

नलिनी के चले जाने पर कल्याणी ने कमलनयन को बुलाकर कहा—कमल, अब मैं बहुत विलम्ब न कर सकूँगी।

कमलनयन—समाचार क्या है?

कल्याणी—आज मैंने नलिनी से सब बात खोलकर कह दी। वह राजी है। अब मैं तुम्हारा कोई उज्र नहीं सुनना चाहती। मेरे शरीर की अवस्था तुम देख ही रहे हो। तुम्हारा कुछ प्रबन्ध किये बिना मैं किसी तरह निश्चिन्त नहीं हो सकती। आधी रात को जब मेरी नींद टूटती है तब मैं इन्हीं बातों को सोचती हूँ।

कमलनयन—माँ, आप सोच न करें। अच्छी तरह सोवें। जो आप चाहेंगी, वही होगा।

कमलनयन के चले जाने पर कल्याणी ने कमला को पुकारा। वह पास के कमरे से तुरन्त उनके पास आकर हाज़िर हुई। तब दिन ढल जाने के कारण घर में कुछ-कुछ अँधेरा छा गया था। इससे कमला का मुँह अच्छी तरह नहीं दीख पड़ा। कल्याणी ने कहा—बेटी, इन फूलों को जल से भिगोकर घर में सजा दो। यह कहकर उन्होंने गुलाब का एक फूल उठा लिया और फूलों की डाली कमला की ओर बढ़ा दी।

कमला ने उनमें से कुछ फूल लेकर एक थाल में सजाये और उसे कमलनयन के उपासना-गृह में आसन के सामने रख

दिया। कुछ फूलों को एक कटोरे में रखकर वह कमलनयन के सोने के कमरे में एक तिपाई पर रख आई। और जो कुछ फूल बच रहे थे, आलमारी खोलकर, उन खड़ाउँओं पर चढ़ा दिये। खड़ाऊँ पर सिर रखकर प्रणाम करते समय आज उसकी आँखों से झर-झरकर आँसू गिरने लगे। उन खड़ाउँओं के सिवा इस संसार में उसका और कुछ नहीं। पति की चरण-सेवा का अधिकार भी वह खोने जा रही है।

इसी समय कमरे के भीतर किसी के आते ही उसने झट-पट आलमारी को बन्द कर दिया। उठकर देखा, कमल-नयन हैं। कमला को किसी ओर भागने के लिए राह न मिली। वह लज्जा से सिमटकर आसन्न सायङ्काल के अन्धकार में मिल क्यों न गई।

वहाँ कमला को देखकर कमलनयन बाहर निकल आये।

कमला झटपट दूसरे कमरे में चली गई। तब कमलनयन फिर उस कमरे में आये। कमला आलमारी खोलकर क्या करती थी, और मुझे देखकर उसने झटपट उसे बन्द क्यों कर दिया? यह जानने के लिए कौतूहल-वश कमलनयन ने आलमारी खोल-कर देखा—उनकी खड़ाउँओं पर कुछ फूल रक्खे हैं। उन पर पानी छिड़का हुआ है। कमलनयन फिर आलमारी बन्द करके सूने कमरे की खिड़की के पास खड़े होकर आकाश की ओर देखने लगे। देखते ही देखते सूर्यास्त हो गया। अन्धकार ने धीरे-धीरे अपना अधिकार जमाना आरम्भ कर दिया।

छप्पनवाँ परिच्छेद

नलिनी कमलनयन के साथ अपना ब्याह होने की सम्मति देकर मन को समझाने लगी—"मेरे लिए यह कम सौभाग्य की बात नहीं है।" मन में हज़ारों बार कहा—"मेरा पुराना बन्धन टूट गया। मेरे जीवन-आकाश को जिस आँधी-पानी ने घेर लिया था वह छू-मन्तर हो गया। मैं अब स्वाधीन हो गई।" इस प्रकार मन ही मन धैर्य धारण करके उसने एक बृहत् वैराग्य का आनन्द अनुभव किया। मरघट में दाह-क्रिया कर डालने के पश्चात् यह प्रकाण्ड संसार, अपने विपुल भार को हटाकर, जब खिलवाड़ सा जँचता है तब मन थोड़ी देर के लिए हलका हो जाता है—यही हालत नलिनी की हुई। उसे अपने जीवन के एक अंश की अवसान-जनित शान्ति प्राप्त हुई।

घर आकर नलिनी ने मन में कहा—अगर मेरी माँ जीती रहती तो आज मैं उससे इस अपूर्व आनन्द की बात कहकर उसे प्रसन्न करती। बाबूजी से सब बातें कैसे कहूँगी!

कमज़ोरी के कारण घनानन्द बाबू आज देर तक न बैठे, और दिन की अपेक्षा सबेरे ही सोने को चले गये। नलिनी एक सादी किताब में अपने सोने के सूने कमरे में लिखने लगी—मैं मृत्यु के महाजाल में फँसकर सारे संसार से अलग हो गई

थी। ईश्वर उससे उद्धार कर मुझे फिर नवीन जीवन प्रदान करेंगे—यह आशा स्वप्न में भी न थी। आज उन जगन्नाटक सूत्रधार के चरणों में बार-बार प्रणाम कर मैं कर्तव्यक्षेत्र में प्रवेश करने को तैयार हूँ। जिस सौभाग्य को पाने की मैं किसी तरह अधिकारिणी नहीं वही पा रही हूँ। ईश्वर मुझे वह शक्ति दे जिससे मैं आजीवन उस सौभाग्य की रक्षा कर सकूँ। जिनके जीवन के साथ मेरा क्षुद्र जीवन मिलने जा रहा है वे मुझे सभी अंशों में परिपूर्ण करेंगे ही; किन्तु उस परिपूर्णता का समस्त ऐश्वर्य मैं उन्हें सब का सब अर्पण कर सकूँ—यही मेरी एकमात्र प्रार्थना है।

इसके बाद किताब को बन्द करके वह जाड़े की उस अँधेरी रात में बाग़ की कँकरीली सड़क पर देर तक टहलती रही। नक्षत्र-खचित अनन्त आकाश ने उसके आँसुओं से धुले हुए हृदय में निःशब्द शान्ति-मन्त्र का उच्चारण किया।

दूसरे दिन तीसरे पहर जब घनानन्द बाबू नलिनी को लेकर कमलनयन के घर जाने के लिए तैयार थे उसी समय फाटक पर एक गाड़ी आकर खड़ी हुई। कोचबक्स के ऊपर से कमलनयन के एक नौकर ने उतरकर ख़बर दी—डाक्टर बाबू की माँ आई हैं।

घनानन्द बाबू तुरन्त फाटक के पास जा खड़े हुए। कल्याणी गाड़ी से उतर पड़ीं। घनानन्द ने कहा—आज मेरा परम सौभाग्य है।

"आज आपकी लड़की को देखने और उसे आशीर्वाद देने (शादी पक्की करने का दस्तूर करने) आई हूँ।" यह कहकर कल्याणी भीतर गईं।

घनानन्द बाबू ने उन्हें बैठक में ले जाकर बड़े आदर से एक कम्बल के आसन पर बिठाकर कहा—आप बैठें, मैं नलिनी को बुलाता हूँ।

नलिनी बाहर जाने के लिए कपड़े पहन रही थी। कल्याणी के आने की बात सुनकर वह झट उनके पास आई और उनके पैर छूकर प्रणाम किया। कल्याणी ने कहा—"सौभाग्यवती होकर तुम दीर्घायु हो। देखूँ बेटी, तुम्हारे हाथ देखूँ" यह कहकर उन्होंने उसके दोनों हाथों में सोने के कड़े पहिना दिये। नलिनी की पतली कलाई में सोने के मोटे-मोटे कड़े चमकने लगे। कड़े पहनाये जाने पर नलिनी ने फिर कल्याणी को, धरती में सिर नवाकर, प्रणाम किया। कल्याणी ने दोनों हाथों से उसका मुँह उठाकर उसका माथा चूमा। इस आशीर्वाद और आदर से नलिनी के मन में एक विशेष आनन्द का सञ्चार हुआ। उसका हृदय अपूर्व माधुर्य से परिपूर्ण हो गया।

कल्याणी ने कहा—समधी महाशय! कल मेरे यहाँ आप दोनों जनों का निमन्त्रण है। सबेरे आने की कृपा कीजिएगा।

दूसरे दिन सबेरे घनानन्द बाबू बाहर के कमरे में यथा-नियम चाय पीने बैठे हैं। पास ही नलिनी बैठी है। घना-

नन्द का रोग से सूखा हुआ चेहरा एक ही रात में बहुत कुछ भर गया। उस पर कुछ-कुछ प्रसन्नता की झलक दिखाई दे रही है। वे रह-रहकर स्नेहभरी दृष्टि से नलिनी के शान्त-भावपूर्ण मुँह की ओर देख रहे हैं। वे सोचते हैं कि आज मेरी परलोकगता पत्नी का मङ्गल मधुर आविर्भाव मेरी कन्या को घेरे हुए है। और दूर तक फैले हुए आँसुओं के आभास में सुख की उज्ज्वलता को स्निग्ध गम्भीर कर दिया है।

वे चाय पीकर यही सोचते हैं कि कल्याणी के यहाँ निमन्त्रण में जाने का समय हो गया, अब तैयार होना चाहिए। विलम्ब करना उचित नहीं। नलिनी उनके मन का भाव समझकर बार-बार उन्हें स्मरण कराती है कि अभी बहुत समय है। अभी तो आठ ही बजे हैं। घनानन्द कहते हैं, तैयार होने में भी तो कुछ समय लगेगा। विलम्ब करके जाने की अपेक्षा कुछ पहले जाना अच्छा है।

इतने में, कई स्टील बक्स और बिछौने आदि से लदी हुई, एक किराये की गाड़ी आकर सदर फाटक के पास खड़ी हुई।

नलिनी एकाएक देखते ही "भैया आये!" कहकर फाटक की ओर बढ़ी। योगेन्द्र मुस्कुराता हुआ उतरा। उसने कहा—नलिनी, अच्छी हो?

नलिनी—तुम्हारी गाड़ी में क्या और भी कोई है?

योगेन्द्र ने हँसकर कहा—हाँ, है तो। बाबूजी के लिए बड़े दिन का एक उपहार लाया हूँ।

इतने में रमेश भी गाड़ी से उतर पड़ा। नलिनी एक बार उसकी ओर देखकर तुरन्त लौट गई।

योगेन्द्र ने पुकारकर कहा—नलिनी, सुन तो लो।

यह पुकार नलिनी के कान तक भी न पहुँची। वह ऐसे भागी जैसे कोई भूत के अनुसरण से बचने के लिए भयभीत होकर भागे।

रमेश ठिठककर खड़ा हो रहा। वह आगे बढ़े या वहीं से लौट जाय, यह सोचने लगा।—योगेन्द्र ने कहा—"रमेश, आओ, बाबूजी यहीं बाहर बैठे हैं।" यह कहकर वह रमेश का हाथ पकड़कर घनानन्द बाबू के पास ले आया।

घनानन्द दूर ही से रमेश को देखकर घबरा गये। वे सिर पर हाथ फेरते-फेरते सोचने लगे कि फिर कहाँ से यह विघ्न बीच में खड़ा हो गया!

रमेश ने सिर झुकाकर घनानन्द को नमस्कार किया। घनानन्द ने उसको बैठाने का इशारा करके कहा—योगेन्द्र, तुम बहुत ठीक समय पर आ गये। मैं तुमको तार देने का इरादा कर रहा था।

योगेन्द्र ने पूछा—क्यों?

घनानन्द—कमलनयन के साथ नलिनी के ब्याह की बात पक्की हो गई है। कल कमलनयन की माँ नलिनी को देखकर आशीर्वाद भी दे गईं।

योगेन्द्र—यह क्या ! ब्याह की बात पक्की हो गई ! आपने मुझसे इस विषय में कुछ पूछा तक नहीं ।

घनानन्द—कोई ठीक थोड़े है कि तुम कब क्या कहोगे। जब मैं कमलनयन को जानता भी न था तब तुम्हीं लोग तो इस विवाह के लिए उद्योग कर रहे थे ।

योगेन्द्र—तब की बात जाने दीजिए। उस समय मेरा कुछ और ही ख़याल था। अब भी समय है। आपसे बहुत बातें कहनी हैं। पहले उन बातों को सुन लीजिए, फिर जो कर्तव्य हो, कीजिएगा ।

घनानन्द—अच्छा, उन बातों को किसी दिन सुन लूँगा। आज तो सुनने की फ़ुरसत नहीं है। अभी मुझको बाहर जाना है।

योगेन्द्र—कहाँ जाइएगा ?

घनानन्द—कमलनयन की माँ के यहाँ मेरा और नलिनी का निमन्त्रण है। तुम्हारे खाने-पीने का यहीं—

योगेन्द्र—नहीं, नहीं, मेरे लिए आप कुछ चिन्ता न करें। मैं रमेश के साथ यहाँ के किसी होटल में जाकर खा-पी लूँगा। साँझ तक तो आप लौट आवेंगे। तब तक हम भी आ जायँगे।

घनानन्द बाबू रमेश के साथ कुछ भी सम्भाषण न कर सके। बल्कि उसके मुँह की ओर देखना भी उनके लिए कठिन हो गया। रमेश भी चुप बैठा रहा। जाते समय घनानन्द बाबू को नमस्कार करके चला गया।

सत्तावनवाँ परिच्छेद

कल्याणी ने कमला से जाकर कहा—बेटी, कल नलिनी और उसके पिता को यहाँ भोजन करने का निमन्त्रण दे दिया है। कहो, क्या तैयारी की जाय? बेटी के बाप को इस तरह बढ़िया भोजन कराना चाहिए जिससे उनके मन में यह सन्देह न रहे कि मेरी लड़की को यहाँ भोजन का कष्ट होगा। तुम जैसी अच्छी रसोई बनाती हो, उससे अयश न होगा, यह मैं जानती हूँ। मेरा लड़का चाहे जो चीज़ खाकर किसी भी दिन भला या बुरा कुछ नहीं कहता था। किन्तु कल उसने तुम्हारे हाथ की रसोई की बहुत प्रशंसा की है। हाँ, आज तुम्हारा चेहरा ऐसा उदास क्यों है? क्या तबीयत अच्छी नहीं?

कमला ने सूखी हँसी हँसकर कहा—बहुत अच्छी है।

कल्याणी ने सिर हिलाकर कहा—जान पड़ता है, यहाँ तुम्हारा जी नहीं लगता। ऐसा होना कुछ अचम्भे की बात नहीं। उसके लिए तुम क्यों लजाती हो? मुझे पराई मत समझो। मैं तुमको अपनी बेटी की तरह मानती हूँ। यदि तुमको यहाँ किसी तरह का कष्ट हो या तुम अपने किसी कुटुम्बी को देखना चाहो तो मुझसे कहो, मैं उसका उचित प्रबन्ध कर दूँगी।

कमला ने नम्रतापूर्वक कहा—नहीं माँ, आपकी सेवा के अतिरिक्त और मैं कुछ नहीं चाहती।

कल्याणी ने इस पर ध्यान न देकर कहा—न हो तो कुछ दिन के लिए तुम चक्रवर्तीजी के घर चली जाओ, फिर जब तुम्हारी इच्छा हो, यहाँ चली आना।

कमला अधीर हो उठी, बोली—मैं जब तक आपकी सेवा में रहूँगी तब तक मुझे किसी तरह की चिन्ता न रहेगी। यदि मुझसे आपकी सेवा में कुछ अपराध हो जाय तो जो आपके जी में आवे दण्ड दें। परन्तु एक दिन के लिए भी मुझको अपने पास से अलग न करें।

कल्याणी ने कमला के सिर पर हाथ रखकर कहा—इसी से कहती हूँ, तुम पूर्व जन्म में मेरी माँ थीं। नहीं तो दो ही दिन में ऐसी ममता क्योंकर हो सकती। अच्छा, अब जाओ सो रहो, दिन भर तुम्हें ज़रा भी .फ़ुरसत नहीं मिलती। एक न एक काम करती ही रहती हो।

कमला ने अपने शयनगृह में जाकर द्वार बन्द करके चिराग़ बुझा दिया। वह लेटी नहीं, नीचे ज़मीन में बैठ गई। बड़ी देर तक गाल पर हाथ रक्खे बैठी रही। उसने मन ही मन सोच-विचारकर यही निश्चय किया कि दौर्भाग्य से जिसे मैं खो चुकी हूँ वह फिर मेरे हाथ कैसे आ सकता है! सारी आशा छोड़ने के लिए मन को दृढ़ करना होगा। केवल सेवा करने के सुयोग को जैसे होगा, प्राणपण से बचा

रक्खूँगी। भगवान् करें, यह काम मैं हँसती-हँसती करती रहूँ—इससे अधिक के लिए मुझे लोभ न हो। बहुत कष्ट सहने पर यह काम मिला है। यदि मैं विषाद-वश मन छोटा करूँगी तो मुझे इस रहे-सहे सुख से भी हाथ धोना पड़ेगा।

वह एकाग्र मन से बार-बार सङ्कल्प करने लगी—मैं कल से किसी प्रकार के दुःख को मन में स्थान न दूँगी। ज़रा भी मैं अपने मुँह पर उदासी न आने दूँगी। जो सुख प्राप्त होने का नहीं उसके लिए मन में कोई कामना न रहने दूँगी। सिर्फ़ सेवा करूँगी, जब तक जिऊँगी, केवल सेवा करूँगी। और कुछ न चाहूँगी, कुछ न चाहूँगी।

इसके अनन्तर कमला लेट गई। देर तक करवटें बदलते-बदलते सो गई। रात को दो-तीन बार उसकी नींद टूटी। जब-जब उसकी नींद टूटती थी वह मन्त्र की भाँति जप करने लगती थी—"मैं कुछ न चाहूँगी, कुछ न चाहूँगी" ख़ूब तड़के बिछौने से उठकर उसने हाथ जोड़कर शुद्ध मन से प्रतिज्ञा की—मैं आजीवन आपकी सेवा करूँगी, और कुछ न चाहूँगी।

इसके अनन्तर वह झटपट हाथ-मुँह धोकर और धोती बदलकर कमलनयन के उस छोटे से उपासना-गृह में गई। अपने आँचल से घर को अच्छी तरह झाड़-बुहारकर उसने साफ़ कर दिया। यथास्थान आसन बिछाकर फिर वह जल्दी से गङ्गा-स्नान करने गई। आजकल कमलनयन के एकान्त अनुरोध से कल्याणी ने सूर्योदय के पूर्व गङ्गास्नान

करना छोड़ दिया है। इससे उमेश को ही उस दुःसह ठण्ड के समय-कमला के साथ नहाने को जाना पड़ा।

स्नान करके घर आने पर कमला ने प्रफुल्ल मुख से कल्याणी को प्रणाम किया। उस समय वे स्नान के लिए बाहर जाने की तैयारी कर रही थीं। उन्होंने कमला से कहा—इतने सबेरे क्यों नहाने गई? मेरे साथ चलने से भी देर न होती।

कमला—माँजी, आज बहुत काम है। कल साँझ को जो तरकारियाँ मँगा रक्खी हैं उन्हें अभी बना रखती हूँ। और जो कुछ बाज़ार से मँगाना है, वह अभी उमेश को भेजकर मँगाये लेती हूँ।

कल्याणी—तुमने अच्छी बात सोची है। समधी को यहाँ आते ही रसोई तैयार मिलेगी।

इसी समय कमलनयन को बाहर से आते देख कमला गीले बालों के ऊपर कपड़ा डालकर झट घर के भीतर चली गई। कमलनयन ने माँ को नहाने के लिए जाते देखकर कहा—कल तुम्हारी तबीयत कुछ अच्छी थी। आज सबेरे ही स्नान करने चलीं?

कल्याणी—तुम अपनी डाक्टरी रहने दो। सबेरे गङ्गास्नान न करने से भी कोई अमर नहीं होता। शायद तुम बाहर जा रहे हो। जाते हो तो जाओ, लेकिन जल्दी लौट आना।

कमलनयन—क्यों?

कल्याणी—मैं कल तुमसे कहना भूल गई थी। आज घनानन्द बाबू तुमको देखने और आशीर्वाद देने आवेंगे।

कमलनयन—आशीर्वाद देने आवेंगे? मेरे ऊपर वे सहसा इतने प्रसन्न क्यों हो गये? उनसे तो मेरी रोज़ ही भेट होती है।

कल्याणी—मैं कल नलिनी को, आशीर्वाद में, सोने के कड़े पहना आई हूँ। उसी से आज घनानन्द बाबू भी तुमको आशीर्वाद देने आते हैं। जो हो, तुम लौटने में विलम्ब न करना। वे यहीं भोजन करेंगे।

यह कहकर वे स्नान करने चली गईं। कमलनयन सिर नीचा करके सोचते-सोचते सड़क पर आये।

अट्ठावनवाँ परिच्छेद

नलिनी रमेश के पास से भागकर भीतर आई। अपने सोने के कमरे में जाकर वह द्वार बन्द करके चारपाई पर बैठ गई। मन का प्रथम आवेग शान्त होने पर वह वृथा भाग आने की बात सोचकर मन ही मन पछताने और अपनी लज्जा पर कुढ़ने लगी—मैं रमेश बाबू के साथ सहज भाव से क्यों न मिली? जिस बात की मैं आशा नहीं करती वह मेरे बीच क्यों इस प्रकार अशोभन भाव से आ खड़ी होती है? कुछ नहीं, यह मेरे हृदय की दुर्बलता है। ऐसा ढिलमिल रहना अच्छा नहीं।

यह सोचकर वह ज़बर्दस्ती उठी, और अपने कमरे का द्वार खोलकर बाहर निकल आई। उसने मन में निश्चय किया कि "मैं नहीं भागूँगी, विजय प्राप्त करूँगी।" वह ढाढ़स बाँधकर रमेश बाबू से भेंट करने चली। एकाएक उसे क्या स्मरण हुआ कि वह फिर लौट पड़ी। ट्रङ्क खोलकर उसमें से कल्याणी के दिये सोने के कड़े निकालकर दोनों हाथों में पहिन लिये। मानो वह कवच पहिनकर युद्ध में जाने के लिए अपने को सुरक्षित कर बाग़ की ओर चली।

घनानन्द बाबू ने कहा—नलिनी कहाँ जाती हो?

नलिनी—रमेश बाबू और भैया हैं न?

घनानन्द—नहीं, वे चले गये।

नलिनी इस आत्म-परीक्षा से निष्कृति पाकर मन ही मन .खुश हुई।

घनानन्द ने कहा—तो अब—

नलिनी—हाँ, मैं चलती हूँ। मुझे स्नान करने में कुछ देर न होगी। आप गाड़ी मँगवाइए।

इस प्रकार नलिनी ने निमन्त्रण में जाने के लिए हठात्, अपने स्वभाव के विरुद्ध, अत्यन्त उत्साह दिखलाया। इस उत्साह की अधिकता को घनानन्द न भूल सके। उनका मन विशेष रूप से उत्कण्ठित हो उठा।

नलिनी ने झटपट स्नान करके कपड़े बदले और फिर बाल सँवारे। फिर घनानन्द के पास आकर बोली—बाबूजी, गाड़ी आ गई?

घनानन्द—नहीं, अभी तक तो नहीं आई।

नलिनी बाग़ की सड़क पर टहलने लगी। घनानन्द बरामदे में बैठे-बैठे सिर पर हाथ फेरने लगे।

घनानन्द जब कमलनयन के घर पहुँचे तब समय साढ़े दस से अधिक न हुआ था। कमलनयन उस समय बाहर से लौटकर न आया था। इससे घनानन्द का स्वागत कल्याणी को ही करना पड़ा।

कल्याणी उन्हें आदरपूर्वक बिठाकर उनसे इधर-उधर की बातों के सिवा उनकी तबीयत का हाल पूछने लगीं। बीच-

बीच में वे नलिनी के मुँह की ओर भी देखती थीं। परन्तु उसके चेहरे पर उत्साह का कोई चिह्न क्यों नहीं दिखाई देता? जो शुभ घटना होनेवाली है उसके कारण सूर्योदय के पूर्व अरुण रश्मि-छटा की तरह उसका मुख-मण्डल दीप्त क्यों नहीं है! बल्कि उसके चेहरे से चिन्ता का भाव लक्षित होता था।

यह कल्याणी के मन में खटक गया। वे मन में सोचने लगीं, कोई ऐसी लड़की न होगी जो मेरे कमलनयन के साथ ब्याह होने में अपना सौभाग्य न समझे, किन्तु नई शिक्षा के नशे में आकर क्या यह मेरे कमल को अपने योग्य नहीं समझती? यह बात नहीं है तो इसके मन में इतनी चिन्ता किस लिए? इस बेचारी का क्या दोष! सब दोष मेरा ही है। मैं बूढ़ी हो गई तो भी धैर्य न धर सकी। इच्छा होने के साथ ही ब्याह की बात स्थिर करने को उतारू हो गई। बड़ी उम्र की लड़की के साथ कमल के ब्याह की बात पक्की कर ली, पर उसके स्वभाव को अच्छी तरह न जाँचा। हाय! अब इस काम के लिए समय नहीं है—अब तो संसार के सभी कामों को झटपट कर डालने की धुन है।

नलिनी के मुँह का भाव देखकर कल्याणी को घनानन्द बाबू के साथ वार्तालाप करना कठिन हो गया। उनके मन में चिन्ता ने उथल-पुथल मचा दी। उन्होंने घनानन्द से कहा—ब्याह के लिए शीघ्रता करने की जरूरत नहीं। ये दोनों पूर्ण

वयस्क हैं, अपने विचार से काम करें। इसके लिए हमारा दबाव डालना ठीक नहीं। नलिनी के मन में क्या है, यह मैं नहीं जानती, किन्तु कमलनयन की बात मैं कह सकती हूँ। वह अब भी मन को स्थिर नहीं कर सका।

कल्याणी ने यह बात विशेष करके नलिनी को सुनाने ही के लिए कही। नलिनी अप्रसन्न मन से सोच-विचार कर रही है और उनका बेटा इस ब्याह के प्रस्ताव से फूला नहीं समाता, यह धारणा वे दूसरे पक्ष के मन में उत्पन्न होने देना नहीं चाहतीं।

नलिनी यहाँ आते समय विशेष उत्साह का अवलम्बन करके आई थी, इसी से उसका उलटा फल हुआ। क्षण मात्र की उत्तेजना विकट सुस्ती में विलीन हो गई। जब वह कल्याणी के घर में पहुँची तब उसके मन का भाव बदल गया। हठात् उसके मन में यह आशङ्का उत्पन्न हुई—जिस नई जीवन-यात्रा के मार्ग पर मैं पैर रखना चाहती हूँ वह मेरे आगे अत्यन्त दूर दुर्गम पहाड़ी-पथ की भाँति है। इसी आशङ्का का चित्र उसकी नज़रों में झूलने लगा।

सारी बातचीत के बीच नलिनी का अपने ऊपर अविश्वास उसके मन को भीतर ही भीतर मसोसने लगा।

इस अवस्था में कल्याणी ने जब विवाह के प्रस्ताव को क़रीब-क़रीब वापस ले लिया तब नलिनी के मन में दो विपरीत भावों का उदय हुआ। विवाह-बन्धन में शीघ्र आबद्ध होकर अपनी

दुर्बल अवस्था से शीघ्र छुटकारा पाने की इच्छा उसके हृदय में थी, इससे प्रस्ताव को वह झटपट पक्का कर लेना चाहती है—और, प्रस्ताव को दबा देने की चेष्टा होते देख उसे ज़रा सा आराम भी हो रहा है।

कल्याणी ने बात समाप्त कर नलिनी के चेहरे को कनखियों से देखकर मतलब को भाँप लिया। उन्होंने समझा कि इतनी देर के बाद अब नलिनी के चेहरे पर शान्ति की स्निग्धता देख पड़ी। इस कारण उनका मन नलिनी के विरुद्ध हो गया। उन्होंने सोचा—मैं अपने कमल को कौड़ियों में दे रही थी।

कमलनयन के आने में जो आज देर हुई उससे कल्याणी मन ही मन .खुश हुईं। नलिनी की ओर देखकर उन्होंने कहा—देखी कमल की बुद्धि! तुम लोगों के आने की बात उसे मालूम है तो भी उसका कहीं पता नहीं। आज थोड़ा सा ही काम करके चला आता! जब मैं बीमार होती हूँ तब वह काम-काज छोड़कर घर पर रहता है। इससे उसकी हानि ही क्या होती है?

यह कहकर कल्याणी वहाँ से इस बहाने टल गईं कि देखूँ रसोई तैयार होने में क्या विलम्ब है। उनकी इच्छा थी कि नलिनी को कमला के साथ उलझाकर आप उस बेचारे वृद्ध के साथ बातचीत करें।

कल्याणी ने देखा कि भोजन की सामग्री तैयार करके कमला उसे मधुर आँच में, गरम रहने के लिए, रक्खे एक

कोने में चुपचाप बैठी किसी बात के ध्यान में निमग्न है। एकाएक कल्याणी को सामने देखकर वह चौंक पड़ी। परन्तु वह तुरन्त ही लजाकर मुस्कुराती हुई उठ खड़ी हुई। कल्याणी ने कहा—अरे, तुम रसोई के पीछे बहुत हैरान हो रही हो!

कमला—रसोई तो तैयार है।

कल्याणी—तो तुम यहाँ चुपचाप क्यों बैठी हो? घनानन्द बाबू तो बूढ़े हैं। उनके सामने जाने में लज्जा कैसी? नलिनी आई है, उसे अपने कमरे में ले जाकर उसके साथ गप-शप करो। मैं बूढ़ी हूँ। उसे अपने पास बिठाकर क्यों दुःख दूँ।

नलिनी के पास से विमुख होकर आई हुई कल्याणी का स्नेह कमला के प्रति दूना हो गया।

कमला ने दबी ज़बान से कहा—माँ, मैं उनके साथ क्या बातचीत करूँगी! वे बहुत पढ़ी-लिखी हैं। मैं मूर्खा हूँ।

कल्याणी—यह तुम क्या कहती हो? तुम किसी से कम बुद्धिमती नहीं हो। लिख-पढ़कर कोई स्त्री अपने को चाहे जितनी बड़ी समझे किन्तु तुमसे बढ़कर आदर पाने योग्य शायद ही कोई हो। पोथी पढ़कर सभी स्त्रियाँ विदुषी हो सकती हैं परन्तु तुम्हारी जैसी सुघर गृहलक्ष्मी होना क्या सबके भाग्य में होता है? आओ, इधर आओ, किन्तु मैं तुमको इस भेस में न रहने दूँगी। अपने हाथ से आज तुम्हारा शृङ्गार करूँगी।

कल्याणी आज सभी बातों में नलिनी का गर्व चूर्ण करना चाहती हैं। रूप में भी उसको वे इस अल्पशिक्षिता सती के

कमला को देखकर सब लोग चमत्कृत हों। वे नलिनी की उत्कर्षता को कमला के रूप के नीचे दबाना चाहती थीं। पुत्राभिमानिनी जननी अपने कमलनयन पर हेमनलिनी की लापरवाही का अन्दाज़ करके आज उत्तेजित हो गईं। कमलनयन की नज़रों में यदि वे नलिनी को नीचा दिखा सकीं तो ख़ुश होंगी।

कमला को देखकर सभी चकित हुए। नलिनी ने पहले दिन जब उसे देखा था तब उसका यह मनोहर वेष न था। उस दिन वह मैली सी धोती पहने, सिकुड़ी हुई, एक तरफ़ बैठी थी। सो भी देर तक बैठी न रही थी। इससे उस दिन कमला को वह भली भाँति देख भी न सकी थी। आज उसको देखकर नलिनी आश्चर्य भरी दृष्टि से ज़रा देर उसके मुँह की ओर देखती रही। इसके बाद उसने खड़ी होकर लजाती हुई कमला का हाथ पकड़कर अपने पास बिठा लिया।

कल्याणी का अभीष्ट सिद्ध हुआ। वे नलिनी पर विजय प्राप्त कर प्रसन्न हुईं। सभी को मन ही मन स्वीकार करना पड़ा कि ऐसा सुन्दर रूप दैवयोग से ही देखने में आता है। कल्याणी ने कमला से कहा—तुम नलिनी को अपने कमरे में ले जाकर ग़प-शप करो। तब तक मैं भोजन करने का स्थान ठीक कर आऊँ।

कमला के मन में अनेक भाव उठने लगे। वह सोचने लगी—नलिनी मुझे किस दृष्टि से देखेगी, यह कौन जाने!

यही नलिनी एक दिन इस घर की बहू बनकर आवेगी। यही इस घर की मालकिन होगी—इसकी सुदृष्टि का कमला अनादर न कर सकी। इस घर की स्वामिनी होने का अधिकार उसी का था किन्तु इस बात को वह कभी मन में भी लाना नहीं चाहती। ईर्ष्या को वह कभी अन्तःकरण में स्थान न देगी। वह अपना अधिकार खो चुकी है। अब उसको कुछ भी दावा नहीं। इसी से नलिनी के साथ जाते समय कमला के पैर थरथराने लगे।

नलिनी ने धीरे-धीरे कमला से कहा—तुम्हारी सब बातें मैंने माँ से सुनी हैं। सुनकर बड़ा दुःख हुआ। तुम मुझे अपनी बहन समझना। तुम्हारे कोई बहन है?

नलिनी के स्नेह और दया से भरे कण्ठस्वर से आश्वस्त होकर कमला ने कहा—मेरी सगी बहन नहीं है, एक चचेरी बहन है।

नलिनी—मेरे एक भी बहन नहीं है। मैं जब बहुत छोटी थी तभी मेरी माँ मर गई। कितने ही सुख-दुःख के अवसरों पर मैंने सोचा है कि 'माँ नहीं हैं तो न सही, यदि एक बहन होती तो भी कुछ सन्तोष होता।' मेरे पास ऐसा कोई नहीं जिससे मैं अपने मन के सुख-दुःख की बातें कहती। इससे बचपन से ही मुझे मन की बातें मन ही में दबा रखने की आदत हो गई है। यही कारण है कि अब भी मैं किसी से जी खोलकर कोई बात नहीं कह सकती। लोग मुझे बड़ी गरबीली समझते हैं, परन्तु बहन, तुम कभी ऐसा न समझ बैठना।

कमला के मन का सब सन्देह दूर हो गया। उसने कहा—बहन, तुम मुझे पसन्द करोगी ? मुझे तुम नहीं जानतीं, मैं बड़ी मूर्ख हूँ !

नलिनी ने हँसकर कहा—मुझे तुम जब अच्छी तरह जानोगी, तब देखोगी कि मैं भी निपट मूर्ख हूँ। मैंने कुछ किताबें पढ़कर कण्ठस्थ कर ली हैं, इसके सिवा मैं और कुछ नहीं जानती। इसी से मैं कहती हूँ कि यदि मैं इस घर में आऊँ तो तुम कभी मेरा साथ न छोड़ना बहन ! किसी दिन गृहस्थी का भार मेरे ऊपर पड़ेगा, इस बात को सोचकर मैं डरती हूँ।

कमला ने बच्चे की तरह सरल भाव से कहा—तुम सारा भार मुझे दे देना। मैं बचपन से ही घर का काम-काज करती आती हूँ। मैं गृहस्थी के किसी काम से नहीं डरती। तुम उन्हें सुख से रखना, मैं तुम सबकी सेवा करूँगी।

नलिनी—अच्छा, एक बात तो कहो। तुमने तो अपने स्वामी को अच्छी तरह देखा नहीं, उनकी कुछ याद है तुम्हें ?

कमला ने इस बात का ठीक जवाब न देकर कहा—बहन, मैं न जानती थी कि स्वामी का स्मरण करना होता है ! जब मैं चाचा के घर आई तब चचेरी बहन अन्नपूर्णा के साथ मेरा विशेष रूप से परिचय हुआ। वह अपने स्वामी की जिस तरह सेवा करती है उसे अपनी आँखों देखने से मेरे मन में

पहले-पहल इसका ज्ञान हुआ। क़रीब-क़रीब यह ठीक है कि मैंने अपने पति को नहीं देखा, मैं नहीं कह सकती कि मेरे मन में उन पर भक्ति कैसे उत्पन्न हो गई। भगवान् ने मुझे उस पूजा का फल दे दिया। अब मेरे स्वामी मेरे हृदय-मन्दिर में, आँखों के आगे, प्रत्यक्ष बने रहते हैं—उन्होंने मुझे अङ्गीकार नहीं किया तो क्या हर्ज है, किन्तु वे अब मुझे मिल तो गये।

कमला की ये भक्ति-भरी बातें सुनने से नलिनी का हृदय द्रवित हो गया। वह कुछ देर ठहरकर बोली—मैं तुम्हारी बात को अच्छी तरह समझ गई। इस तरह प्राप्त करना ही वास्तव में प्राप्त करना है। और सब तरह से प्राप्त करना तो लोभ के द्वारा प्राप्त करना है—वह प्राप्ति नष्ट हो जाती है।

नलिनी की बात कमला की समझ में बख़ूबी आई या नहीं, यह वही जाने। वह नलिनी के मुँह की ओर देखती रही। कुछ देर बाद बोली—बहन, तुम जो कहती हो सो ठीक ही होगा। मैं अपने मन में किसी तरह के दुःख को नहीं आने देती, आनन्द में मग्न रहती हूँ। मुझे जो कुछ मिल गया है उसी को मैं परम लाभ समझती हूँ।

नलिनी बड़े प्यार से कमला का हाथ अपने हाथ में लेकर बोली—हानि और लाभ दोनों को बराबर समझना ही सच्चा लाभ है। मेरे गुरु का यही उपदेश है। बहन, मैं तुमसे सच कहती हूँ, यदि मैं तुम्हारी तरह सब कुछ निवेदन करके उस सार्थकता को प्राप्त कर लूँगी तो अपने को धन्य मानूँगी।

कमला ने कुछ विस्मित होकर कहा—क्यों बहन ! तुम्हें किस बात की कमी रहेगी ? तुम्हें तो सब कुछ मिलेगा ।

नलिनी—जो प्राप्त करने योग्य है, उसे पाकर ही सुखी हो सकूँ, परन्तु इसकी अपेक्षा जो अधिक है उसे प्राप्त करने में बहुत भार है, अनेक दुःख हैं। मेरे मुँह से ये बातें सुनकर तुम्हें आश्चर्य होगा, मुझे भी आश्चर्य होता है। परन्तु ईश्वर मुझसे ऐसी बातों पर विचार करवाते हैं। बहन, तुम नहीं जानतीं कि आज मेरा मन किस चिन्ता से दबा जा रहा था। तुम मिल गईं, इससे मेरे हृदय का बोझ कुछ हलका हो गया। मुझे बल मिल गया, इसी से इतना बोलने का साहस मैंने किया। नहीं तो मैं इतनी बातें कभी नहीं कर सकती। बहन, न जाने किस तरह तुम मेरे हृदय की ये बातें बाहर निकलवा रही हो !

उनसठवाँ परिच्छेद

कल्याणी के घर से लौटने पर नलिनी को उसके कमरे .के भीतर मेज़ पर एक बहुत बड़ी चिट्ठी मिली। लिफ़ाफ़े के ऊपर के अक्षर देखकर वह समझ गई—चिट्ठी रमेश के हाथ की है। नलिनी की छाती धड़कने लगी। वह चिट्ठी लेकर अपने शयनगृह में गई और द्वार बन्द करके काँपते हुए हाथों से चिट्ठी खोलकर पढ़ने लगी।

चिट्ठी में रमेश ने कमला के सम्बन्ध की सारी बातें बड़े विस्तार से सिलसिलेवार लिखी हैं। अन्त में लिखा है, ईश्वर ने तुम्हारे साथ मेरा जो बन्धन दृढ़ कर दिया था, उसे संसार ने तोड़ डाला।, अब तुमने अपना मन दूसरे को सौंप दिया है। इसके लिए मैं तुम्हें कोई दोष नहीं दे सकता। किन्तु तुम भी मुझे दोष न देना। यद्यपि मैंने कमला के साथ एक दिन भी वैसा व्यवहार नहीं किया जैसा कि लोग अपनी स्त्री के साथ करते हैं, तथापि उसने धीरे-धीरे मेरे हृदय को अपनी ओर खींच लिया था। इस बात को मैं तुमसे छिपाना नहीं चाहता। मैं नहीं जानता कि आज मेरे हृदय की क्या अवस्था है। अगर तुम मुझे त्याग न देतीं तो मैं तुम्हारा आश्रय पाकर चित्त को शान्त कर सकता। इसी आशा से मैं अपने विक्षिप्त

चित्त को लेकर तुम्हारे पास दौड़ा आया था। लेकिन जब आज मैंने स्पष्ट देख लिया कि तुम मुझसे घृणा करके मुझसे विमुख हो गईं, जब सुना कि तुम दूसरे के साथ ब्याह करना चाहती हो, तब मेरा मन फिर डावाँडोल हो उठा। मैंने हृदय में देखा—मैं अब भी कमला को बिलकुल भूल नहीं गया। उसे भूलूँ या न भूलूँ, इससे मेरे सिवा संसार में और किसी का नुक़सान नहीं। फिर मेरा ही नुक़सान कैसा! संसार में जिन दो महिलाओं को मैंने अपने हृदय से ग्रहण किया है उन्हें भूल जाने की क्षमता मुझमें नहीं है और ज़िन्दगी भर उनकी याद रखने में ही मुझे परम लाभ है। आज सबेरे जब तुम्हारे क्षणिक साक्षात्कार की बिजली की तरह चोट सहकर मैं अपने डेरे पर लौटा तब एक बार मैंने मन में कहा—मैं भाग्यहीन हूँ। परन्तु अब मैं इस बात को स्वीकार नहीं करता। मैं सरल भाव से, बड़ी .खुशी के साथ, तुमसे बिदा माँगता हूँ। मैं सम्पूर्ण हृदय से तुम्हारे पास से प्रस्थान करूँगा। ईश्वर मुझे वह शक्ति दे जिससे बिदा होते समय मैं किसी तरह की दीनता का अनुभव न करूँ। तुम सुखी रहो। तुम्हारा भला हो। मुझे घृणा की दृष्टि से न देखना। मुझ पर घृणा करने का कोई कारण नहीं है।

घनानन्द बाबू कुरसी पर बैठे एक किताब पढ़ रहे थे। एकाएक नलिनी को सामने देखकर चौंक उठे। उन्होंने कहा—नलिनी, तुम्हारा चेहरा उदास है? तबीयत कैसी है?

नलिनी—तबीयत अच्छी है बाबूजी। रमेश बाबू की एक चिट्ठी मिली है। लीजिए, पढ़कर मुझे लौटा दीजिएगा।

वह चिट्ठी देकर वहाँ से चली गई। घनानन्द बाबू ने चश्मा लगाकर बड़े ध्यान से उस चिट्ठी को दो बार पढ़ा। फिर नलिनी के पास चिट्ठी वापस भेजकर सोचने लगे। देर तक सोचने के बाद उन्होंने स्थिर किया—यह एक तरह से अच्छा ही हुआ। पात्रता का विचार करने से रमेश की अपेक्षा कमलनयन विशेष प्रार्थनीय हैं। रमेश आप ही यहाँ से हट गया; यह अच्छा हुआ।

वे यह सोच ही रहे थे कि वहाँ कमलनयन उपस्थित हुआ। उसे देख घनानन्द को ज़रा आश्चर्य हुआ। आज सबेरे कमलनयन के साथ देर तक बातचीत होती रही है। फिर कई घण्टे बीतते न बीतते वह क्या सोचकर आया है? वृद्ध ने मन ही मन हँसकर कहा—कुछ नहीं, नलिनी को देखने के लिए आया होगा।

वे किसी बहाने नलिनी के साथ कमलनयन की भेंट कराकर आप वहाँ से टल जाने की बात सोच रहे थे। ऐसे समय कमलनयन ने कहा—बाबूजी! मेरे साथ आपकी लड़की के ब्याह की बातचीत हो रही है। बात पक्की होने के पूर्व मैं अपना वक्तव्य आपसे कहना चाहता हूँ।

घनानन्द—सही है, वह तो कहना ही चाहिए।

कमलनयन—शायद आपको मालूम नहीं कि मेरा ब्याह पहले ही हो गया है।

घनानन्द—मालूम है। किन्तु—

कमलनयन—मुझे अचरज है कि आप इस बात को जानते हैं। शायद आप अनुमान करते होंगे कि वह मर गई। परन्तु इसका क्या निश्चय हो सकता है। शायद वह अब तक जीती हो। मेरा तो ऐसा ही विश्वास है कि वह अब तक जीती है।

"ईश्वर करें, यही बात सत्य हो।" यह कहकर घनानन्द बाबू ने नलिनी को पुकारा।

नलिनी आकर बोली—क्या है बाबूजी?

घनानन्द—रमेश ने तुम्हें जो चिट्ठी लिखी है उसमें जो वह अंश है, इन्हें—

नलिनी ने वह चिट्ठी कमलनयन को देकर कहा—इस चिट्ठी का सम्पूर्ण अंश आपके देखने योग्य है। यह कहकर वह चली गई।

चिट्ठी पढ़कर कमलनयन सन्नाटे में आकर चुपचाप बैठा रहा। घनानन्द ने कहा—ऐसी आश्चर्य-घटना प्रायः संसार में नहीं होती! पढ़ने के लिए आपको चिट्ठी देकर आपके मन में चोट पहुँचाई गई। किन्तु इसे गुप्त रखना भी हमारे पक्ष में अन्याय होता।

कमलनयन कुछ देर तक चुप बैठा रहा। इसके बाद वह घनानन्द को नमस्कार करके चला गया। जाते समय उसने उत्तर की ओर के बरामदे में पास ही नलिनी को देखा।

नलिनी को देखकर कमलनयन के मन में दुःख हुआ। वह स्त्री चुपचाप खड़ी है। वह स्थिर-शान्त मूर्ति अपने अन्तः-करण को क्योंकर थामे है?

कमलनयन ने ज़रा घूमकर बरामदे के सामने से होकर गाड़ी पर चढ़ने का विचार किया। उसने सोचा, यदि नलिनी को कुछ पूछना होगा तो पूछेगी। परन्तु जब वह बरामदे के सामने आया तब देखा कि नलिनी वहाँ से घर के भीतर चली गई! हृदय के साथ हृदय का मिलाप होना सहज नहीं है। मनुष्य के साथ मनुष्य का मेल होना सहज नहीं है। इस बात को सोचता हुआ कमलनयन गाड़ी पर सवार हो चल दिया।

कोई भी ऐसा उपाय नहीं जिसके द्वारा ठीक-ठीक मालूम हो सके कि इस समय उसका मन क्या कर रहा है—कमल-नयन यह भी तो नहीं पूछ सकता कि तुम्हें मुझसे कुछ काम तो नहीं है; और पूछे भी तो उत्तर मिलना मुश्किल है। कमलनयन का पीड़ित चित्त सोचने लगा—इसे कुछ सान्त्वना दी भी जा सकती है या नहीं? किन्तु एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य के बीच कैसा दुर्भेद्य व्यवधान है! मन कैसी भयङ्कर चीज़ है!

कमलनयन के चले जाने पर योगेन्द्र आया। घनानन्द ने पूछा—योगेन्द्र, क्यों अकेले ही?

योगेन्द्र—और दूसरे किस व्यक्ति की आप आशा करते हैं?

घनानन्द—क्यों? रमेश?

योगेन्द्र—उसके आते ही यहाँ जो अभ्यर्थना हुई थी क्या वह सभ्य मनुष्य के लिए काफ़ी नहीं है? यदि काशी की गङ्गा में डूबने से उसे अब तक शिवत्व न मिला होगा तो मैं नहीं कह सकता कि वह कहाँ गया, क्या हुआ। कल से वह लापता है। टेबल पर एक पर्चे में लिखा मिला है—"चला—तुम्हारा रमेश।" इस तरह की कविता का मुझे अभ्यास नहीं, इसीलिए मुझे भी यहाँ से भागना होगा। मेरी हेडमास्टरी ही अच्छी है—उसमें जो कुछ है, स्पष्ट है—कहीं भी कुहरा नहीं है।

घनानन्द—नलिनी के लिए कुछ स्थिर करके—

योगेन्द्र—अब इसका ज़िक्र न कीजिए। मैं स्थिर करूँ और आप उसे अस्थिर करें—यह खेल बहुत दिन तक अच्छा नहीं लगता। जो आपके जी में आवे, कीजिए। मैं उसमें हस्तक्षेप न करूँगा। मैं जो बात अच्छी तरह नहीं समझता उसे पसन्द भी नहीं करता। एकाएक दुर्बोध बन जाने की जो अद्भुत क्षमता नलिनी में है वही कुछ-कुछ मुझे वश में कर लेती है। मैं कल सवेरे की गाड़ी से चला जाऊँगा। रास्ते में, बाँकीपुर में, कुछ काम है।

घनानन्द बाबू चुपचाप सिर खुजलाने लगे। संसार की समस्या फिर दुरूह होती जाती है—उलझन को सुलझाने में उलझ गये हैं।

साठवाँ परिच्छेद

अन्नपूर्णा और उसके पिता चक्रवर्तीजी कमलनयन के घर आये हैं। अन्नपूर्णा कमला के साथ एक कमरे में बैठी फुसर-फुसर बातें कर रही है। चक्रवर्ती कल्याणी के साथ गप-शप कर रहे हैं।

चक्रवर्ती—मेरी छुट्टी ख़तम हो गई। कल ही ग़ाज़ीपुर जाना है। यदि सती आपके मन में किसी तरह का रञ्ज पहुँचाती हो या उसे रखना—

कल्याणी—दो में एक भी नहीं। आप अपने मतलब को ज़रा साफ़-साफ़ कहिए। आप किसी बहाने से अपनी लड़की को यहाँ से ले जाना तो नहीं चाहते?

चक्रवर्ती—मुझे आप वैसा न समझें। मैंने जो दे दिया, वह फिर वापिस नहीं ले सकता। किन्तु यदि आपको कुछ असुविधा हो—

कल्याणी—यह आप क्या कहते हैं? आप मन ही मन भली भाँति जानते हैं कि सती जैसी लक्ष्मी के पास रखने से सुविधा की सीमा नहीं रहती तो भी—

चक्रवर्ती—बस, अब और कुछ न कहिए। मैं अपने आप पकड़ा गया। वह एक बहाना था। आपके मुँह से सती की प्रशंसा सुनने ही के लिए मैंने यह ज़िक्र किया था। किन्तु

सोच यही है कि कमलनयन बाबू कहीं यह न समझें कि कहाँ की एक आफ़त उनके सिर आ पड़ी। मेरी सती का हृदय बड़ा ही कोमल है। यदि वह अपने ऊपर कमलनयन की ज़रा भी नाराज़गी देखेगी तो वह उसके लिए असह्य होगी। वह उस दुःख से मन ही मन मर मिटेगी।

कल्याणी—राम-राम! कमलनयन उस पर नाराज़ होगा? यह तो वह जानता ही नहीं।

चक्रवर्ती—यह ठीक है, किन्तु मैं सती को प्राणों से भी बढ़कर प्यार करता हूँ, इसलिए मैं उसके सम्बन्ध में थोड़े ही में सन्तुष्ट नहीं हो सकता। माना कि कमलनयन उस पर कभी नाराज़ न होंगे, उदासीन की तरह रहेंगे, किन्तु इतने ही से मेरा जी नहीं भरता। जब उनके घर में सती रहती है तब उन्हें चाहिए कि वे उसे स्नेह की दृष्टि से देखें, उसे आत्मीय समझें। ऐसा न होने से उसके मन में बड़ा सङ्कोच होगा। वह घर की दीवाल तो हई नहीं, वह भी एक मनुष्य है; उस पर न ख़फ़ा हों और न उसे प्यार करें—जो ऐसा ही बर्ताव उसके साथ किया जाय तो यह भी तो—

कल्याणी—चक्रवर्तीजी, आप बहुत चिन्ता न करें। किसी भी व्यक्ति को प्रेमपूर्वक अपने वश में कर लेना मेरे कमलनयन के लिए कुछ कठिन नहीं है। वह किसी का दुःख नहीं देख सकता। परन्तु उसके मन का भाव बाहर से कुछ लक्षित नहीं होता। यह जो सती कुछ दिन से मेरे यहाँ है,

वह कैसे सुख से रहेगी, किसमें उसकी भलाई होगी, यह चिन्ता अवश्य ही कमलनयन को होगी। बहुत सम्भव है, वह उसका कुछ न कुछ उपाय भी सोचता होगा। परन्तु हमको कुछ मालूम ही नहीं होता।

चक्रवर्ती—आपकी बात से मेरे मन की चिन्ता दूर हुई। फिर भी जाने के पूर्व मैं कमलनयन बाबू से इस विषय में एक बार कुछ कहना आवश्यक समझता हूँ। एक स्त्री का सम्पूर्ण भार ग्रहण कर सके, ऐसा पुरुष संसार में विरला ही मिलता है। ईश्वर ने जब कमलनयन बाबू को वह पुरुषार्थ दिया है तब मैं उनसे एक बार कहना चाहता हूँ कि आप सती से दूर रहकर मिथ्या सङ्कोच न करें, उसके साथ शुद्ध हृदय और निश्छल भाव से वार्तालाप करें, और उसकी रक्षा करें।

कमलनयन पर चक्रवर्ती का यह विश्वास देखकर कल्याणी का मन मुग्ध हो गया। उन्होंने कहा—कहीं आप कुछ और ही ख़याल करें, इस आशङ्का से मैं सती को कमलनयन के सामने बेधड़क जाने-आने नहीं देती। किन्तु मैं अपने बेटे का स्वभाव जानती हूँ। आप उस पर पूर्ण विश्वास करें, और बेफ़िक्र रहें।

चक्रवर्ती—तो आपसे सब बातें ख़ुलासा ही कह दूँ। सुना है, कमलनयन के ब्याह की बातचीत हो रही है। लड़की की उम्र भी कुछ कम नहीं है। है तो पढ़ी-लिखी, परन्तु उसका रीति-व्यवहार हमारे समाज के साथ नहीं मिलता। इसी से मैं सोचता था कि शायद सती—

कल्याणी—यह क्या मैं नहीं समझती? चिन्ता की बात ही थी। परन्तु वह विवाह न होगा—

चक्रवर्ती—क्या फलदान वापस हो गया?

कल्याणी—फलदान हुआ ही नहीं, वापस क्या होगा! कमल तो ब्याह करना ही नहीं चाहता था। मैंने ही ज़िद करके उसे राज़ी किया था। किन्तु मैं अब उस ब्याह के लिए उसे तङ्ग न करूँगी। जिस काम में मन न लगे उसे ज़बर्दस्ती करने से परिणाम अच्छा नहीं होता। नहीं जानती, भगवान् की क्या इच्छा है। मालूम होता है, अब मरने के पूर्व मैं बहू को न देख सकूँगी।

चक्रवर्ती—आप ऐसी बात न कहें। हम सब हैं किस लिए, बिना सम्बन्ध किये, बिना मिठाई खाये, क्या यों ही चले जायँगे?

कल्याणी—आपके मुँह में घी-शक्कर! मेरे मन में दुःख है कि कमलनयन इस उम्र में मेरे कारण गृहस्थधर्म्म में प्रवेश न कर सका, ब्रह्मचारी ही बना रहा। इसी से मैं घबराकर सब बातों पर विचार किये बिना ही झटपट उसके ब्याह की बात स्थिर कर बैठी थी, परन्तु अब उस आशा को मैंने त्याग दिया। अब आप ही उसका ब्याह करा दीजिए। विलम्ब न कीजिए। मैं अधिक दिन न बचूँगी। मेरी आँखों के सामने यह शुभ कार्य हो जाय तो ठीक हो।

चक्रवर्ती—सब हो जायगा। आप निश्चिन्त रहें। जो आप चाहती हैं, वही होगा। आप अभी बहुत दिन जियेंगी

और बहू का मुख भी देखेंगी। मैं समझ गया कि आपको कैसी बहू चाहिए। बहुत कम उम्र की होने से भी आपका काम न चलेगा। जो आपकी सेवा-शुश्रूषा करे, आपके आज्ञानुसार चले—ऐसी पतोहू मिल जाने ही से आपका मनोरथ पूरा होगा। आप कुछ चिन्ता न कीजिए। ईश्वर की कृपा से सब ठीक ही समझिए। यदि आपकी आज्ञा हो तो सती को कर्तव्य-सम्बन्धी दो-चार बातों का उपदेश दे आऊँ। अन्नपूर्णा को आपके पास भेजे देता हूँ। जब से उसने आपको देखा है तब से वह आप ही का गुण गा रही है।

कल्याणी—नहीं, आप तीनों जने कुछ देर तक एक जगह बैठकर बातें करें, मैं एक काम कर आऊँ।

चक्रवर्ती ने हँसकर कहा—संसार में आपके लिए काम हैं, इसी से हमारा भला होता है। आपके काम का परिचय अवश्य ही मिलेगा। कमलनयन बाबू की वधू की मङ्गल-कामना से शीघ्र ही बन्धु-बान्धवों का मुँह मीठा हो।

चक्रवर्ती ने अन्नपूर्णा और कमला के पास आकर देखा, कमला के नेत्रों में अब भी आँसू छलछला रहे हैं। चक्रवर्ती ने अन्नपूर्णा के पास बैठकर एक बार उसके मुँह की ओर देखा। उसने कहा—मैं कमला से कह रही थी कि अब कमलनयन बाबू से सब बातें खोलकर कहने का अवसर आ गया। अब चुप रहने से काम न चलेगा। इस कारण आपकी यह निर्बुद्धि सती मेरे साथ झगड़ रही है।

कमला बोली—नहीं बहन, मैं तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, ऐसी बात फिर न कहना। वह मुझसे किसी तरह न होगा।

अन्नपूर्णा—तुम्हारी कैसी बुद्धि है! तुम चुप्पी साधे बैठी रहो, और नलिनी के साथ कमलनयन का ब्याह हो जाय! ब्याह के दूसरे दिन से आज तक तुम बराबर अघटित-घटनाओं ही के चक्कर में पड़ी हो, अब अपने ऊपर एक नई आफ़त क्यों लेना चाहती हो?

कमला—बहन, मेरी बात क्या किसी से कहने लायक़ है? मैं सब बातें सह सकूँगी, परन्तु वह लाज मुझसे न सही जायगी। मैं जिस तरह हूँ, जिस अवस्था में हूँ, अच्छी हूँ। मुझे कोई दुःख नहीं। किन्तु यदि मेरी सब बातें प्रकट हो जायँगी तो मैं किस मुँह से एक घड़ी भी इस घर में रह सकूँगी? मारे लज्जा के मैं जीती किस तरह रहूँगी!

अन्नपूर्णा इस बात का कोई उत्तर न दे सकी, किन्तु नलिनी के साथ कमलनयन का ब्याह होना उसे हर्गिज़ मञ्जूर नहीं था। इस घटना को वह चुपचाप न देख सकती थी।

चक्रवर्ती ने कहा—जिस विवाह की बात कह रही हो, वह होगा ही—इसका क्या निश्चय!

अन्नपूर्णा—सुनती हूँ, सब बातें पक्की हो गई हैं। कमलनयन बाबू की माँ आशीर्वाद का दस्तूर भी कर आई हैं।

चक्रवर्ती—विश्वेश्वर के आशीर्वाद से वह आशीर्वाद रद्द हो गया। बेटी कमला, तुम्हें कोई डर नहीं, धर्म तुम्हारा सहायक है।

सब बातें कमला की समझ में न आईं, इससे वह आँखें फाड़कर चक्रवर्ती के मुँह की ओर देखने लगी।

चक्रवर्ती ने कहा—उस विवाह की बात रुक गई। कमल-नयन भी उस ब्याह के लिए राज़ी नहीं हैं। उनकी माँ को भी अब सब बातें सूझ गई हैं।

अन्नपूर्णा ने पुलकित होकर कहा—ईश्वर ने कुशल किया। कल मैंने वह ख़बर जब से सुनी, बेचैन थी। रात को नींद नहीं आई। सारी रात सोच में पड़ी रही। अच्छा, मैं एक बात पूछती हूँ, क्या कमला अपने घर में योंही दासी की भाँति बनी रहेगी? सब बातों की सफ़ाई कब होगी?

चक्रवर्ती—बेटी, तू घबराती क्यों है? जब समय आवेगा तब सब काम आप ही सहल हो जायगा।

"जो हो गया है यही बहुत है, इससे बढ़कर अब कुछ नहीं हो सकता। मैं बड़े सुख से हूँ। मुझे इससे अधिक सुखी करने जाकर मेरे भाग्य को कहीं फिर न पलट देना। मैं आपके पैरों पर पड़ती हूँ, आप किसी से कुछ न कहिए। आप मुझे इस घर के किसी कोने में फेंककर मेरी सब बातें भूल जाइए। मेरे लिए इतना ही बहुत है। यह कहते-कहते कमला की आँखों से आँसू गिरने लगे।"

चक्रवर्ती—बेटी, रोती क्यों हो? तुम जो कहती हो, वह मैं समझता हूँ। तुम घबराओ मत। तुम्हारी शान्ति में बाधा न डालूँगा। ईश्वर आप ही धीरे-धीरे जिस काम को कर रहे

हैं उसमें, मूर्ख की भाँति, वृथा हस्तक्षेप करके मैं क्यों उसे बिगाड़ूँगा। कुछ डर नहीं। मेरी इतनी बड़ी उम्र हो गई। क्या मैं स्थिर होकर रहना नहीं जानता ?

इसी समय उमेश हँसता हुआ भीतर आया।

चक्रवर्ती ने पूछा—उमेश, कहो क्या ख़बर है ?

उमेश—रमेश बाबू नीचे खड़े हैं। डाक्टर बाबू से मुलाक़ात करना चाहते हैं।

कमला का मुँह सूख गया। चक्रवर्ती झट उठकर बोले—बेटी डरो मत, मैं अभी जाकर सब ठीक कर आता हूँ।

चक्रवर्ती ने नीचे आकर रमेश का हाथ पकड़कर कहा—आज किधर भूल पड़े ? आइए, इधर आइए, रास्ते में चलते-चलते आपसे दो-एक बातें कहूँ।

रमेश ने आश्चर्ययुक्त होकर कहा—चक्रवर्तीजी ! आप यहाँ कैसे ?

"आप ही की खोज में आया था। भेंट हो गई, अच्छा हुआ। अब देर न कीजिए। इधर आइए, काम की बात को ख़तम ही कर डालना चाहिए।" यह कहकर रमेश को ऊपर ले जाकर चक्रवर्ती ने टहलते-टहलते कहा—रमेश बाबू, आप यहाँ क्या करने आये हैं ?

रमेश—कमलनयन बाबू की खोज में आया था। उनसे कमला की सब बातें आद्योपान्त कह देना चाहता हूँ। मेरे मन में कभी-कभी ऐसा होता है कि कमला मरी नहीं, अब तक जीती है।

चक्रवर्ती—मान लीजिए, कमला जीती है और कमलनयन के साथ उसकी भेंट भी हो गई, तो फिर आपके मुँह से कमला का सब वृत्तान्त सुनने से उन्हें क्या फ़ायदा होगा? उनकी बूढ़ी माँ बड़ी धर्म्मशीला हैं। ये बातें सुन पावेंगी तो क्या कमला के लिए अच्छा होगा?

रमेश—मैं नहीं जानता कि सामाजिक रीति से फल क्या होगा, किन्तु कमला निरपराधिनी है—यह तो कमलनयन बाबू को मालूम होना चाहिए। कमला यदि मर ही गई होगी तो भी कमलनयन बाबू आदर के साथ उसका नाम ले सकेंगे!

चक्रवर्ती—आपकी बातें मेरी समझ में नहीं आतीं। अगर कमला मर ही गई होगी तो उसके एक रात के स्वामी से, जिसने कभी उसकी सूरत तक नहीं देखी, उसका जीवन-वृत्तान्त कहने की मैं कोई आवश्यकता नहीं देखता। यह जो घर आप देख रहे हैं मैं उसी में ठहरा हूँ। यदि आप कल सबेरे एक बार मेरे घर आ जायँ तो मैं सब बातें आपसे .खुलासा कह दूँ। किन्तु इसके पूर्व आप कमलनयन से भेंट न करें। यही मेरा अनुरोध है।

रमेश—बहुत अच्छा।

चक्रवर्ती ने लौटकर कमला से कहा—कल सबेरे तुमको मेरे घर आना होगा। वहाँ तुम .खुद रमेश से सब बातें समझकर कहना। यही मैंने स्थिर किया है।

कमला सिर नीचा किये बैठी रही। चक्रवर्ती ने कहा—जब तक तुम ख़ुद उसमें न पड़ोगी तब तक काम न चलेगा। आजकल के लड़कों की कर्तव्यबुद्धि बूढ़े पुराने लोगों की बातों में नहीं भूलती। मन से सङ्कोच को दूर कर डालो। जहाँ तुम्हारा अधिकार है वहाँ दूसरे को पैर रखने न देना तुम्हारा ही काम है। इस सम्बन्ध में हम लोगों का ज़ोर उतना काम न देगा।

कमला तब भी सिर झुकाये ही रही। चक्रवर्ती ने कहा—मार्ग बहुत कुछ साफ़ हो चुका है। अब जो थोड़ा सा कँटीला मार्ग रह गया है उसको साफ़ करने में सङ्कोच मत करो।

इसी समय किसी के पैरों की आहट सुनकर कमला ने सिर उठाकर देखा—द्वार के सामने ही कमलनयन खड़े हैं। एकदम उसकी आँखों से कमलनयन की आँखें भिड़ गईं। और दिन कमला को देखकर जैसे कमलनयन झट नज़र फेर-कर चला जाता था आज उसने वैसा नहीं किया। बल्कि वह कुछ देर तक कमला की ओर देखता रहा। किन्तु उस क्षण भर की देखा-देखी ने ही मानों कमला के मुखड़े से कुछ वसूल कर लिया। और दिन की भाँति अनधिकार के सङ्कोच में उसने देखने की चीज़ की ओर से दृष्टि नहीं फेर ली। अन्नपूर्णा को देखकर ज्योंही वह वहाँ से हट जाने को उद्यत हुआ त्योंही चक्रवर्ती ने कहा—"कमलनयन बाबू, आप भागिए मत, आपको

हम अपने से भिन्न नहीं मानते। यह मेरी लड़की अन्नपूर्णा है। इसी की लड़की का इलाज आपने किया था।" अन्नपूर्णा ने कमलनयन को हाथ जोड़े। कमलनयन ने भी यथायोग्य अभिवादन कर उससे पूछा—आपकी लड़की अब अच्छी है न?

अन्नपूर्णा—जी हाँ।

चक्रवर्ती—आपको अच्छी तरह देखकर नयन तृप्त करूँगा, इसके लिए आप अवसर नहीं देते। यदि आप यहाँ आ गये हैं तो ज़रा बैठने की कृपा कीजिए।

कमलनयन को बिठाकर चक्रवर्ती ने देखा कि वहाँ कमला नहीं है। वह उनके पीछे से दबे पैरों कभी निकल गई! वह कमलनयन की सुदृष्टि से पुलकित होकर आनन्द से उछलते हृदय को स्थिर करने के लिए दूसरे कमरे में गई है।

इतने में कल्याणी ने आकर कहा—चक्रवर्तीजी, कृपा कर यहाँ आइए।

चक्रवर्ती—जब से आप एक काम को गई थीं, तभी से मैं इस कृपा के लिए आपकी राह देख रहा था।

भोजन करके चक्रवर्ती ने बैठक में आकर कहा—आप सब बैठें, मैं अभी आता हूँ। यह कहकर उन्होंने क्षण भर में ही दूसरे कमरे से कमला का हाथ पकड़े कमलनयन और कल्याणी के सामने लाकर उसे हाज़िर किया। उसके पीछे-पीछे अन्नपूर्णा भी आई।

चक्रवर्ती ने कहा—कमलनयन बाबू, आप हमारी सती को पराई समझकर संकोच न करें। इस चिरदुःखिनी को हम आप ही के घर में छोड़े जाते हैं। इसे आप अपनी करके रखिए। इसे और कुछ न देना होगा—सिर्फ़ सेवा का सम्पूर्ण अधिकार दीजिए। यह आपके घर का सब काम करेगी। आप निश्चय जानें, यह जान-बूझकर कभी कोई अपराध न करेगी।

कमला लज्जा से सिकुड़कर चुपचाप सिर झुकाये बैठी थी। कल्याणी ने कहा—चक्रवर्ती महाशय! आप कुछ चिन्ता न करें। सती हमारे घर लड़की की तरह रहेगी। कोई काम करने के लिए आज तक हमें उससे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं हुई। अब तक रसोई-घर और भाण्डार-घर का इन्तज़ाम मेरे हाथ में था। किन्तु अब मैं वहाँ कुछ भी नहीं। जो कुछ है सो यही है। नौकर-चाकर भी अब मुझसे कुछ नहीं पूछते। कहाँ क्या होता है, यह मैं जानती भी नहीं। किस तरह इसने धीरे-धीरे सब काम को अपने हाथ में कर लिया, इसकी मुझे कुछ ख़बर नहीं। मेरे पास कई कुञ्जियाँ थीं, इसने कौशल करके वे भी हड़प लीं। कहिए, आप अपनी इस डकैत लड़की के लिए और क्या चाहते हैं? यदि आप अब अपनी लड़की को घर ले जाना चाहें तो यह सबसे बढ़कर डकैती होगी!

चक्रवर्ती—मैं कहूँगा भी तो क्या यह जायगी? यह यहाँ से हिलने का नाम तक न लेगी। इसे आप निश्चय जानें।

इसको आप लोगों ने इस तरह बहका लिया है कि यह आपके सिवा संसार में और किसी को नहीं जानती। यह जन्म ही की दुखिया है। इतने दिन बाद आपके पास आने पर इसे शान्ति मिली है। भगवान् इसके इस सुख को निर्विघ्न करें। आप लोग सदा इस पर प्रसन्न रहें। हम हृदय से यही आशीर्वाद देते हैं।

यह कहते-कहते चक्रवर्ती की आँखों में आँसू भर आये। कमलनयन चुपचाप ध्यानपूर्वक चक्रवर्ती की बातें सुन रहा था। जब वे सब के सब वहाँ से उठकर चले गये तब वह धीरे-धीरे अपने सोने के कमरे में आया। उस समय जाड़े की सुहावनी सन्ध्या उसके शयनगृह को लाल रङ्ग में रँगकर मानो नवविवाह की रक्तिम छटा दरसा रही थी। उस रक्तप्रभा ने कमलनयन के समस्त रोमकूपों की राह से प्रवेश करके उसके अन्तःकरण को भी लाल कर दिया।

आज सबेरे कमलनयन के यहाँ एक प्रिय मित्र ने टोकरी भर गुलाब के फूल भेजे थे। कल्याणी ने घर सजाने के लिए फूल कमला को दिये थे। कमलनयन के शयनगृह में जो फूल-दान में गुलाब के फूल रक्खे थे उनका मधुर सुगन्ध उसके मस्तिष्क में प्रवेश करने लगा। उस सूने कमरे की खुली खिड़की में आरक्त सन्ध्या के साथ मिलकर गुलाब की मनो-हर गन्ध ने कमलनयन के मन में एक विचित्र भाँति की चञ्चलता उत्पन्न कर दी। अब तक उसके हृदय में संयम की

शान्ति थी, ज्ञान की गम्भीरता थी और धीरता का बल था; किन्तु आज वहाँ एकाएक भाँति-भाँति के बाजे कहाँ से बजने लगे? किस अदृश्य नृत्य के पदप्रक्षेप और नूपुरों की मधुर ध्वनि से वह शान्तिकुटीर रङ्गालय हो गया।

कमलनयन ने खिड़की के पास से फिरकर कमरे के भीतर देखा तो चारपाई के सिरहाने कार्निस पर गुलाब के फूल सजे रक्खे हैं। नहीं कह सकते, ये खिले हुए फूल किसके नेत्रों की भाँति उसके मुँह की ओर देख रहे हैं और चुपचाप आत्म-निवेदन की तरह उसके हृदय के द्वार के आगे झुक गये हैं।

कमलनयन ने उनमें से एक फूल उठा लिया। वह सोने की तरह पीले रङ्ग के गुलाब की कली थी। कुछ सुगन्धि भी उसमें थी। उस कली को हाथ में लेते ही उसे जान पड़ा जैसे किसी की कोमल उँगली ने उसकी उँगली का स्पर्श किया हो। कमल-नयन के रोंगटे खड़े हो गये। वह उस कोमल कली को अपने मुँह और आँख की पलकों पर फेरने लगा।

देखते ही देखते सायंकालिक सूर्य की प्रभा छिप गई। कमल ने कमरे से निकलने के पूर्व उस गुलाब कली को बिछौने की चादर हटाकर सिरहाने के तकिये पर रख दिया। रखकर बाहर निकलना चाहा तो देखा कि चारपाई के उस तरफ़ कोई आँचल से मुँह छिपाये मारे लज्जा के धरती में समा जाना चाहती है। हाय री कमला! लज्जा छिपाने की कोई जगह

नहीं है। वह उस कमरे को गुलाब के फूलों से सजाकर अपने हाथ से कमलनयन का बिछौना करके ज्योंही बाहर होने लगी त्योंही कमलनयन के आने की आहट पाकर वह झट उलटे पैर लौट आई और चारपाई के उस तरफ़ जा छिपी। अब न उससे भागते ही बनता था और न छिपते ही। वह अनन्त लज्जा समेत धरती पर इस तरह बैठी देख ली गई।

इस लज्जिता को लज्जा-बन्धन से छुटकारा देने के लिए कमलनयन शीघ्र बाहर जाने को उद्यत हुआ। द्वार तक जाकर वह एकाएक खड़ा हो गया। न मालूम क्या सोचकर वह फिर धीरे-धीरे लौट आया। कमला के सामने खड़ा होकर बोला—उठो, मुझसे तुम क्या लज्जा करती हो!

इकसठवाँ परिच्छेद

दूसरे दिन सबेरे ही कमला चक्रवर्ती के घर गई। अन्न-पूर्णा को एकान्त में पाते ही वह उसके गले से लिपट गई। अन्नपूर्णा ने उसकी ठोड़ी पकड़कर कहा—क्यों बहन, आज़ इतनी .खुशी क्यों ?

कमला—मैं नहीं जानती, परन्तु मेरे मन में ऐसा लगता है जैसे मेरी ज़िन्दगी भर का भार उतर गया हो।

अन्नपूर्णा—बतलाओ, सब बातें खोलकर मुझे बतलाओ। कल साँझ तक तो हम वहीं थीं। उसके बाद क्या हुआ ? कुछ नई ख़बर सुनाओ।

कमला—ख़बर तो ऐसी कुछ नहीं, परन्तु मेरे मन में ऐसा लगता है जैसे मुझे वे मिल गये हों—भगवान् मानों मुझ पर दयालु हुए हैं।

अन्नपूर्णा—यही हो, परन्तु मुझसे कुछ छिपाओ मत।

कमला—मेरे पास है ही क्या जो तुमसे छिपाऊँगी ? सबेरे जब सोकर उठी तब मुझे जान पड़ा जैसे मेरा जीवन सार्थक हो—मेरा सारा दिन ऐसा मधुर और सारा क़ामकाज इतना हलका हो गया है कि मैं कुछ कह नहीं सकती। इससे अधिक मैं कुछ नहीं चाहती। डर इतना ही है कि पीछे कहीं

यह भी नष्ट न हो जाय। मेरा प्रत्येक दिन अब इसी तरह आनन्द से कटेगा, मेरा भाग्य ऐसा अच्छा हो जायगा इसका विश्वास मुझे नहीं होता !

अन्नपूर्णा—बहन, मैं तुमसे सच कहती हूँ, तुम्हारा भाग्य तुम्हें इतना सा ही सुख देकर दग़ा न देगा। तुम्हें जो कुछ लेना है वह सब तुम्हें मिलेगा।

कमला—नहीं बहन, यह बात मत कहो। मेरा सब वसूल हो गया। किसी के ज़िम्मे कुछ बाक़ी नहीं। मैंने विधाता को कोई दोष नहीं दिया। मुझे कुछ भी कमी नहीं है।

इसी समय चक्रवर्ती ने आकर कहा—कमला, तुमको एक बार बाहर आना होगा। रमेश बाबू आये हैं।

चक्रवर्ती इतनी देर तक रमेश के साथ बातें कर रहे थे। उन्होंने रमेश से कहा—आपके साथ कमला का क्या सम्बन्ध था, यह मुझे मालूम हो गया। अब आपसे मेरा यही कहना है कि आपका जीवन अब साफ़ हो गया, अब आप कमला के सम्बन्ध की सारी बातें भूल जायँ। यदि उसके जीवन-सम्बन्ध की कोई गाँठ सुलझाने की आवश्यकता होगी तो उसे ईश्वर आप सुलझावेगा। आप उसमें हाथ न डालें।

रमेश ने इसके उत्तर में कहा—कमला के सम्बन्ध की सारी बातें जब तक मैं एक बार कमलनयन से न कह लूँगा तब तक मेरे चित्त को विश्राम न मिलेगा। पृथ्वी में कमला की चर्चा छेड़ने का प्रयोजन या तो खतम हो चुका है या

अभी नहीं हुआ है--यदि न हुआ हो तो मेरा जो कुछ वक्तव्य है उनसे कहकर मैं निश्चिन्त होना चाहता हूँ।

चक्रवर्ती ने कहा—अच्छा, आप बैठिए। मैं अभी आता हूँ।

रमेश मुँह घुमाकर खिड़की की राह से सड़क पर आते-जाते हुए लोगों की ओर शून्य दृष्टि से देखने लगा। कुछ ही देर बाद उसने किसी के आने की आहट से सावधान होकर देखा, एक रमणी ने धरती में सिर टेककर उसे प्रणाम किया है। जब वह प्रणाम करके उठी तब रमेश बैठा न रह सका। वह झट उठकर खड़ा हो गया। उसने कहा—"कमला!" कमला कुछ न बोली, चित्रवत् खड़ी रही।

चक्रवर्ती ने कहा—रमेश बाबू, कमला ने इतने दिन जिस अघटित-घटना में पड़कर भाँति-भाँति के कष्ट सहे हैं, वे ईश्वर की दया से अब इसका पीछा छोड़ना चाहते हैं। ईश्वर अब इसका दिन फेरना चाहते हैं। आपने बड़े सङ्कट के समय इसकी रक्षा की। इसकी रक्षा के लिए आपको भी कुछ कम तकलीफ़ें नहीं झेलनी पड़ीं। अब आपसे सदा के लिए अलग होते समय यह आपके निकट बिना कृतज्ञता प्रकट किये नहीं रह सकती। इसी लिए बिदा के पूर्व यह आपसे आशीर्वाद लेने आई है।

रमेश ने कुछ देर तक चुप रहकर रुके हुए कण्ठस्वर को बलपूर्वक साफ़ करके कहा—कमला, तुम सुखी रहो, मैंने

जान-बूझकर या अज्ञान से जो कुछ तुम्हारा अपराध किया हो उसे माफ़ करो।

कमला इसके उत्तर में कुछ न कह सकी, चुपचाप दीवाल के सहारे खड़ी रही।

रमेश ने फिर कहा—अगर किसी से कुछ कहने के लिए, कोई रुकावट दूर करने के लिए, तुम्हें मेरी ज़रूरत हो तो कहो।

कमला ने हाथ जोड़कर कहा—मेरी यही प्रार्थना है कि आप मेरी चर्चा किसी से भी न करें।

रमेश—बहुत दिनों तक मैंने तुम्हारे सम्बन्ध की कोई भी बात किसी से नहीं कही थी, बड़ी मुसीबत में पड़े रहने पर भी मैंने अपना मुँह न खोला था। कुछ दिन हुए जब मैंने सोचा कि तुम्हारे हक़ में कोई ख़राबी न होगी तब मैंने केवल एक परिवार को तुम्हारी बात बतला दी है। उससे तुम्हारा कुछ अनिष्ट न होकर भला होने की ही आशा है। चक्रवर्तीजी को शायद उसकी ख़बर लगी होगी। घनानन्द बाबू, जिनकी लड़की के साथ—

चक्रवर्ती—नलिनी! मालूम है। क्या उन लोगों को सब बातें मालूम हो गई हैं?

रमेश—हाँ। उन लोगों से यदि और कुछ कहने की ज़रूरत हो तो कहिए, मैं जाकर कह सकता हूँ। किन्तु मेरी इच्छा अब वहाँ जाने की नहीं। इन झूठ-मूठ के झमेलों में पड़ने से

मेरा बहुत सा समय व्यर्थ नष्ट हुआ एवं मेरा और भी बहुत कुछ अकारथ गया। अब मैं छुटकारा चाहता हूँ। नक़द और सब कुछ लेना-देना चुकाकर अब मैं बाहर निकलूँ तो मेरे प्राण बचें।

चक्रवर्ती ने रमेश का हाथ पकड़कर स्नेह-भरे कण्ठस्वर में कहा—नहीं रमेश बाबू, अब आपको और कुछ न करना होगा। आप बहुत तकलीफ़ें झेल चुके हैं। अब आप इस झञ्झट से किनारे होकर स्वाधीन भाव से रहें, सुख से समय बितावें, यही मेरा आशीर्वाद है।

जाते समय रमेश ने कमला की ओर करुणा भरी दृष्टि से देखकर कहा—लो, मैं अब जाता हूँ।

कमला ने मुँह से कुछ न कहा, फिर धरती में माथा टेककर उसको प्रणाम किया।

रमेश मार्ग में जाते-जाते स्वप्नाविष्ट की तरह सोचने लगा—कमला से भेट हो गई, यह अच्छा ही हुआ। भेट न होती तो यह बखेड़ा तय न होता। यद्यपि यह ठीक-ठीक मालूम न हुआ कि कमला क्या समझकर उस रात को हठात् ग़ाज़ीपुर का बँगला छोड़कर चली गई, किन्तु यह स्पष्ट हो गया कि अब मेरी आवश्यकता बिलकुल नहीं है। अब आवश्यक रह गया है मेरा जीवन—सो उसे पूर्ण रूप से लेकर संसार में निकल पड़ा हू। अब मुझे मुड़कर पीछे देखने की रत्ती भर भी ज़रूरत नहीं।

बासठवाँ परिच्छेद

कमला ने चक्रवर्ती के यहाँ से लौटकर देखा, नलिनी और घनानन्द बाबू कल्याणी के पास बैठे हैं। कमला को देखकर कल्याणी ने कहा—लो सती आ गई। बेटी, तुम अपनी सखी को अपने कमरे में ले जाओ। मैं घनानन्द बाबू को जल-पान कराती हूं।

कमला के कमरे में प्रवेश करते ही नलिनी ने कमला के गले से लिपटकर कहा—बहन कमला!

कमला ने विशेष आश्चर्यान्वित न होकर कहा—तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि मेरा नाम कमला है?

नलिनी—मैंने एक व्यक्ति से तुम्हारे जीवन की सारी घटना सुन ली है। सुनते ही मेरे मन में निश्चय हो गया कि तुम्हीं कमला हो। ऐसा क्यों हुआ, यह मैं नहीं कह सकती।

कमला—मैं नहीं चाहती कि किसी को मेरा नाम मालूम हो जाय। मुझे अपने नाम पर बिलकुल अश्रद्धा हो गई है।

नलिनी—किन्तु इसी नाम के बल पर तो तुम्हें अपना अधिकार मिलेगा।

कमला ने सिर हिलाकर कहा—वह मैं नहीं जानती। न मेरा कुछ अधिकार है, न कुछ जोर है। न मैं अपने बल से कुछ लेना ही चाहती हूं।

नलिनी—किन्तु तुम अपने परिचय से अपने स्वामी को कैसे, वञ्चित कर सकोगी ? क्या तुम अपना भला-बुरा उनसे कुछ न कहोगी ? उनसे कोई बात तुम कब तक छिपा सकोगी ?

एकाएक कमला का चेहरा पीला पड़ गया। वह कुछ उत्तर न सोच सकने के कारण चुपचाप नलिनी के मुँह की ओर देखने लगी। कुछ देर बाद वह चटाई पर बैठ गई और ऊपर आकाश की ओर देखकर बोली—भगवान् तो जानते हैं। मैंने कोई अपराध नहीं किया है तो वे मुझ निरपराधिनी को इस तरह लज्जित कर क्यों सतावेंगे ? जो दोष मेरा नहीं है उसके लिए वे मुझे क्यों दण्ड देंगे ? बहन ! मैं उनके सामने अपनी लाज की बात कैसे कहूँगी ?

नलिनी बड़े प्यार से कमला का हाथ पकड़कर बोली -दण्ड नहीं, ईश्वर तुम्हें झगड़ों से मुक्त करेंगे। परन्तु तुम्हारा इस तरह गुप्त होकर रहना ठीक नहीं। जितने दिन तक तुम स्वामी से अपने को छिपाती हो उतने दिन तक एक मिथ्या बन्धन में फँसती हो—उस बन्धन को झटका देकर तोड़ डालो। परमेश्वर अवश्य तुम्हारा भला करेंगे।

कमला—यह सुख भी कहीं हाथ से न चला जाय, यह शङ्का जब मन में उत्पन्न होती है तब मैं अधीर हो उठती हूँ। मेरा सब उत्साह मिट्टी में मिल जाता है। किन्तु तुम जो कहती हो वह मेरे हित की बात है। अब जो मेरे भाग्य में लिखा होगा, सो होगा। मैं उनसे कब तक अपने को छिपाये

रह सकूँगी। उन्हें सारी बातें मालूम हो जायँगी—यह कहते-कहते उसने अपने हाथ ज़ोर से पकड़ लिये।

नलिनी ने दया करके कहा—बहन, तो क्या तुम यह चाहती हो कि कोई दूसरा व्यक्ति उनसे तुम्हारा वृत्तान्त कह दे?

कमला—नहीं, नहीं। दूसरा कोई आदमी उनसे न कहे। मैं आप ही अपनी सब बातें उनसे कहूँगी। मैं उनसे कह सकूँगी।

नलिनी—यही ठीक है। कौन जाने तुमसे फिर कभी मेरी भेट होगी या नहीं। हम अब यहाँ से जाती हैं। तुमसे यही कहने मैं आई हूँ।

कमला ने पूछा—कहाँ जाओगी?

नलिनी—कलकत्ते। अब तुमको घर का काम-धन्धा करना है। मैं उसमें क्यों बाधा डालूँ। तो मैं अब जाती हूँ। बहन को कहीं भूल न जाना।

कमला ने उसका हाथ पकड़कर कहा—क्या मुझको चिट्ठी न लिखोगी?

नलिनी—अच्छा, लिखूँगी।

कमला—मुझे कब क्या करना चाहिए, पत्र द्वारा यह उपदेश बराबर देती रहना। मुझे विश्वास है, तुम्हारा पत्र मिलने से मुझे बड़ी शक्ति मिलेगी।

नलिनी ने हँसकर कहा—मुझसे कहीं बढ़कर उपदेश देनेवाला पुरुष तुम्हें मिलेगा। इसके लिए तुम कुछ चिन्ता न करो।

आज नलिनी के लिए कमला के मन में बड़ा दुःख होने लगा। नलिनी के प्रशान्त मुख पर एक ऐसा भाव व्यञ्जित होता था जिसे देखकर कमला की आँखें डबडबाने को थीं। किन्तु नलिनी से कुछ दूरता है—मानों उससे कुछ कहना बेजा है, उससे कुछ पूछने की हिम्मत नहीं होती। आज कमला की सभी बातें नलिनी को मालूम हो गईं। किन्तु वह गम्भीरता-पूर्वक अपने मन के भाव को छिपाये हुए चली गई। चलते समय वह कमला के पास केवल विषाद से भरा वैराग्य छोड़ गई।

कमला आज दिन भर, फ़ुरसत के समय, नलिनी की बात सोचती रही। गृहकार्य से छुट्टी पाते ही कमला को नलिनी की सुध हो आती थी। उसकी वह शान्ति भरी सकरुण दृष्टि कमला के मन में बार-बार आघात पहुँचाने लगी। नलिनी का और कुछ जीवन-वृत्तान्त कमला न जानती थी। इतना ही जानती थी कि कमलनयन के साथ उसके ब्याह की बातचीत टूट गई है। नलिनी आज अपनी फुलवाड़ी से एक डलिया भर फूल लाकर दे गई थी। कमला उन फूलों को लेकर कुछ दिन रहते माला गूँथने बैठी। उसी अवसर में कल्याणी एक बार वहाँ आकर उसके पास बैठीं और लम्बी साँस लेकर बोलीं—हाय! आज नलिनी जब मुझे प्रणाम करके चली गई तब मेरे मन में जो दुःख हुआ वह तुमसे क्या कहूँ। जो जिसके जी में आवे कहे किन्तु नलिनी है बड़ी अच्छी लड़की। अब मेरे मन में यह सोचकर बहुत

अफ़सोस होता है कि उसे अपनी पतोहू क्यों नहीं बनाया। यदि वह मेरे घर बहू बनकर आती तो मुझे बड़ा हर्ष होता। ब्याह होने में ज़रा सी ही कसर रह गई थी, परन्तु मेरे लड़के को कौन समझावे! क्या सोचकर वह इस ब्याह से विमुख हो बैठा, यह वही जाने।

पीछे वे भी इस विवाह के प्रस्ताव से हट गई थीं इस बात को वे मन में स्थान नहीं देना चाहतीं।

बाहर पैरों की आहट सुनकर कल्याणी ने पुकारा—ओ कमल, सुनो तो।

कमला ने झटपट आँचल से फूल और माला को छिपा लिया, फिर वह लम्बा घूँघट डालकर लज्जा से सिमटकर बैठ गई। कमलनयन के आने पर कल्याणी ने कहा—नलिनी आज चली गई। तुमसे क्या भेट नहीं हुई?

कमलनयन—हुई तो। मैं तो उन लोगों को गाड़ी में बिठाकर स्टेशन से आ रहा हूँ।

कल्याणी—बेटा, तुम चाहे जो कहो, नलिनी जैसी अच्छी लड़की मैंने नहीं देखी।

कल्याणी के कहने का ढङ्ग ऐसा था जैसे कमलनयन इस सम्बन्ध में बराबर उनका प्रतिवाद करता आता हो। उसने कुछ जवाब न देकर ज़रा सा मुसकुरा दिया।

कल्याणी ने कहा—बस, हँस दिया! मैंने तुम्हारे साथ नलिनी के ब्याह की बातचीत की, आशीर्वाद तक दे आई।

और तुमने हठ ठानकर बनी बनाई बात बिगाड़ दी। तुम्हारे मन में अब इस बात का सोच न होता होगा?

कमलनयन ने एक बार चकित दृष्टि से कमला के मुँह की ओर देखा। वह घूँघट के भीतर से उत्सुक दृष्टि से उसी की ओर देख रही थी। चार आँखें होते ही कमला ने झेंपकर झट नज़र नीची कर ली।

कमलनयन ने कहा—माँ, तुम्हारा लड़का क्या ऐसा सत्-पात्र है कि तुम्हारे बात-चीत करने ही से ब्याह हो जायगा? मेरे सदृश तुच्छ आदमी को क्या कोई सहज ही पसन्द कर सकता है?

इस बात से कमला की नज़र फिर ऊपर उठी। उठते ही कमलनयन की हास्योज्ज्वल दृष्टि उस पर जा पड़ी। कमला फिर झेंप गई। उसने सोचा, यहाँ से उठकर भाग जाऊँ तो बचूँ।

कल्याणी ने कहा—जाओ, जाओ, बहुत मत बको, तुम्हारी बातें सुनने से मुझे क्रोध चढ़ता है।

इस सभा के भङ्ग हो जाने पर कमला ने नलिनी के लाये हुए अच्छे-अच्छे फूलों की बहुत बड़ी माला गूँथी। उस माला को फूलों की डलिया में रखकर जल से सींचा। फिर उसे वह कमलनयन के उपासनाघर में एक तरफ़ रख आई। आज बिदा होते समय नलिनी क्या इसी लिए डलिया भर फूल लाई थी? यह सोचकर कमला के नेत्र सजल हो गये।

धीरे वहाँ से लौट चली। कुछ दूर जाकर वह एकाएक ठहर गई। न मालूम क्या सोचकर वह फिर धीरे-धीरे जाकर उपासनाघर के द्वार पर चुपचाप बैठ रही। उसे कौन घेरकर लौटा लाया, यह उसे मालूम न हुआ। सारा संसार उसके लिए छाया की तरह हो गया। कितना समय बीत गया, इसकी भी सुध उसे न रही। उसने अचानक देखा, कमलनयन कमरे में बाहर निकलकर उसके सामने खड़े हैं। कमला ने चटपट उठकर उनके पैरों पर सिर रखकर विधि से प्रणाम किया। तुरन्त स्नान करने के कारण भीगी हुई उसकी लटों ने कमलनयन के पैरों को छिपा लिया। कमला प्रणाम करके उठी और पत्थर की मूर्ति की तरह खड़ी हो रही। उसे स्मरण ही न रहा कि मेरे सिर पर से कपड़ा खिसक गया है और कमलनयन अनिमेष दृष्टि से मेरे मुँह की ओर देखते हैं और वह बाह्यज्ञानशून्य होकर उसी तरह चित्रवत् खड़ी है। उसे चेत नहीं है। हृदय की चैतन्य-आभा से अपूर्व रूप द्वारा दीप्त होकर उसने दृढ़ता के साथ कहा—मैं कमला हूँ।

इतनी बात उसके मुँह से निकलते ही अपनी ही आवाज़ से उसका ध्यान भङ्ग हो गया। उसकी वह एकाग्र-चेतना बाह्यज्ञान में पलट गई। तब उसका सर्वाङ्ग काँपने लगा; सिर नीचे की ओर झुक गया; छाती धड़कने लगी; वहाँ से हिलने तक की शक्ति उसमें न रही। वहाँ खड़ा रहना भी उसके लिए कठिन हो गया। उसने अपना सारा बल, सब साहस,

सारी प्रतिज्ञाएँ "मैं कमला हूँ" इस एक वाक्य के साथ कमल-नयन के पैरों पर चढ़ा दीं। उसने अपनी लज्जा ढँकने का कोई उपाय अपने पास न रक्खा। अब सब कुछ कमलनयन की दया पर निर्भर है। कमलनयन ने धीरे-धीरे उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा—मैं जानता हूँ, तुम मेरी कमला हो। आओ, मेरे कमरे के भीतर आओ।

कमलनयन ने उसे अपने उपासनाघर में ले जाकर उसके गले में उसी के हाथ की गूँथी फूलों की माला पहना दी और कहा—आओ, हम तुम उस परमात्मा को प्रणाम करें। दोनों ने एक साथ बैठकर जब परमात्मा के प्रति उस सङ्गमर्मर के फ़र्श पर अपना-अपना मस्तक झुकाया तब खिड़की की राह से प्रातः-काल की मीठी धूप उनके माथे पर आ पड़ी।

ईश्वर की वन्दना करके कमला ने फिर एक बार कमल-नयन के पैर छूकर प्रणाम किया। दुःसह लज्जा अब उसके मन में नहीं है। उसके चेहरे पर न विषाद का आभास है और न हर्ष का उल्लास। प्रातःकालिक प्रकाश के साथ-साथ उसके चेहरे से उसके छुटकारे की उदार निर्मल शान्ति की उज्ज्वलता प्रकाशित हो रही है। गम्भीर भक्ति से उसका हृदय परिपूर्ण हो उठा। अभ्यन्तर की पूजा ने समस्त विष को धूप की पवित्र सुगन्ध से आमोदित कर दिया। देखते ही देखते उसकी आँखों में जल भर आया। गालों पर होकर आँसुओं की धार बहने लगी। उसके अनाथ जीवन में जो बहुत दिनों से

दु:ख की घटा छाई थी वह आज नेत्रों की राह से आनन्दाश्रु होकर बरस गई। कमलनयन ने उससे और कुछ न कहा, केवल अपने दहने हाथ से उसके मुँह पर लटकी हुई भीगी लटों को हटाकर वह चला गया।

कमला की पूजा अब भी समाप्त नहीं हुई। वह अपने भक्ति-परिपूर्ण हृदय से कुछ और पूजा करना चाहती थी। इसी से उसने कमलनयन के शयनगृह में जाकर अपने गले की माला से आलमारीवाली खड़ाउओं को अलंकृत किया और उन्हें अपने मस्तक से लगाकर फिर बड़े यत्न से यथास्थान रख दिया।

इसके बाद वह बड़े उत्साह से घर का काम करने लगी। आज उसे घर के सभी काम देव-सेवा की भाँति जँचने लगे। प्रत्येक काम मानों आकाश में आनन्द की एक-एक तरङ्ग की तरह उठने लगा। उसको घर के कामों में बेहद परिश्रम करते देख कल्याणी ने कहा—बेटी, तुम क्या कर रही हो? क्या तुम अकेली एक ही दिन में सारे घर-आँगन को झाड़-बुहारकर और लीप-पोतकर नया कर दोगी?

दिन के तीसरे पहर घर के कामों से छुट्टी पाकर कमला ने आज सिलाई नहीं की। आज वह घर के भीतर स्थिर भाव से बैठी है। इसी समय कमलनयन एक टोकरी स्थलकमल लिये वहाँ आकर बोला—कमला! इन फूलों को पानी से भिगोकर ताज़ा कर रक्खो। आज सन्ध्या के अनन्तर हम तुम दोनों, माँ को प्रणाम करने चलेंगे।

कमला ने सिर नीचा करके कहा—आपने मेरा सब वृत्तान्त तो सुना ही नहीं।

कमलनयन—तुमको कुछ कहना न होगा। मैं सब जानता हूँ।

कमला दहने हाथ से मुँह ढँककर 'क्या माँ' कहकर रुक गई। पूरी बात उसके मुँह से न निकली।

कमलनयन ने मुँह पर से उसका हाथ हटाकर और अपने हाथ में लेकर कहा—माँ जन्म ही से हमारे अनेक अपराध क्षमा करती आई हैं। जो अपराध नहीं है उसे वे अवश्य क्षमा करेंगी।